खंड IV

मध्य इस्लामिक जगत के समाज

समय रेखा

पूर्व का अरब संसार

अरेबियन उपमहाद्वीप : साराकेनोई / सारासेनी

अरब कबीले : कुरैश, अव्स, खज़राज

पूर्व-इस्लामिक नगर

मक्का, याथरिब / मदीना,तैफ

इस्लाम का उदय

पैगम्बर मुहम्मद की मक्का से मदीना की ओर हिजरतः 622

खलीफा अबू बकर : 632-634

खलीफा उमर : 634-644

खलीफा उस्मान : 644-656

खलीफा अली : 656-661

उमय्यद खिलाफत : 661-684

उत्तर उमय्यद खिलाफत : 684-750

अब्बासिद खिलाफत : 750-1258

फोटोग्राफ : विद्यार्थियों के साथ लाइब्रेरी चित्रण, 1237, पांडुलिपि पृष्ठः याहया इब्न वसेती द्वारा हरीरी मकामा में चित्रण, बिबलियोथेक नेशनल डे फ्रांस

साभार : जेरेष्क, सितम्बर, 2007

स्रोत : https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/2/2c/Maqamat_

इकाई 12 इस्लाम पूर्व का अरब संसार और वहां की संस्कृति*

इकाई की रुपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 अरब के कबीलाई परिसंघ

12.2.1 अरब प्रायद्वीप के प्रभुत्वशाली कबीले

12.2.2 अरब प्रायद्वीप में धार्मिक विविधताएं

12.3 कबीलाई तथा धार्मिक रीति-रिवाज

12.3.1 मक्कावासियों के धार्मिक रीति-रिवाज तथा अनुष्ठान

12.3.2 मदीना के निवासियों के धार्मिक रीति-रिवाज तथा अनुष्ठान

12.4 छठी शताब्दी के पूर्व अरब का व्यापारिक ढांचा

12.5 इस्लाम-पूर्व अरब का राजनीतिक ढांचा

12.6 इस्लाम पूर्व अरब का सामाजिक ढांचा

12.6.1 कबीलाई संरचना और नेतृत्व

12.6.2 असमानता और दासता

12.6.3 ऊँटों वाले अभिजात घुमंत कबीले

12.6.4 अंतर-कबीलाई संघर्ष

12.7 आर्थिक स्थितियां

12.7.1 ऊँटों पर आधारित खानाबदोशी

12.7.2 अरब क्षेत्र में कृषि

12.7.3 अरब क्षेत्र में उद्योग और खनन्

12.8 इस्लाम-पूर्व काल का साहित्य

12.9 सारांश

12.10 शब्दावली

12.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.12 संदर्भ ग्रंथ

12.13 शैक्षणिक वीडियो

12.0 उद्देश्य

इस्लाम के उदय और विकास को समझने के लिए इस्लाम-पूर्व अरब प्रायद्वीप के उस क्षेत्र के इतिहास को जानना महत्वपूर्ण है, जिसमें इसका विकास हुआ। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- अरब के भौगोलिक संदर्भ और भौगोलिक स्थितियों का वहां के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव को समझ सकेंगे,

* डॉ. चांदनी सेनगुप्ता, एमिटी यूनिवर्सिटी, गुरुग्राम

- वहां के विभिन्न कबीलों तथा धार्मिक समूहों और उनके धार्मिक रीति-रिवाजों तथा अनुष्ठानों को जान पायेंगे, और
- इस्लाम-पूर्व अरब के सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक संघटन को समझ पायेंगे।

12.1 प्रस्तावना

अरेबिया एक विशाल प्रायद्वीप[1] है। अरबी भाषा में इसे *जज़ीरत अल-अरब* (अरब लोगों का द्वीप) कहा जाता है। अरेबिया पश्चिम में लाल सागर, दक्षिण में अरब सागर और पूर्व में फारस की खाडी से घिरा हुआ है। इस प्रायद्वीप में कुवैत, बहरीन, कतर, संयुक्त अरब अमीरात, ओमान, यमन और सउदी अरब जैसे आधुनिक राष्ट्र शामिल हैं यहाँ नियमित बारिश बहुत कम होती है। थोड़ी बहुत बारिश सर्दियों में और वसंत ऋतु में देखने को मिल जाती है। अरेबिया में स्थायी नदियां नहीं हैं, लेकिन जमीन से फूटने वाले चश्मों और कुओं से अनेक नखलिस्तान[2] बन गए हैं।

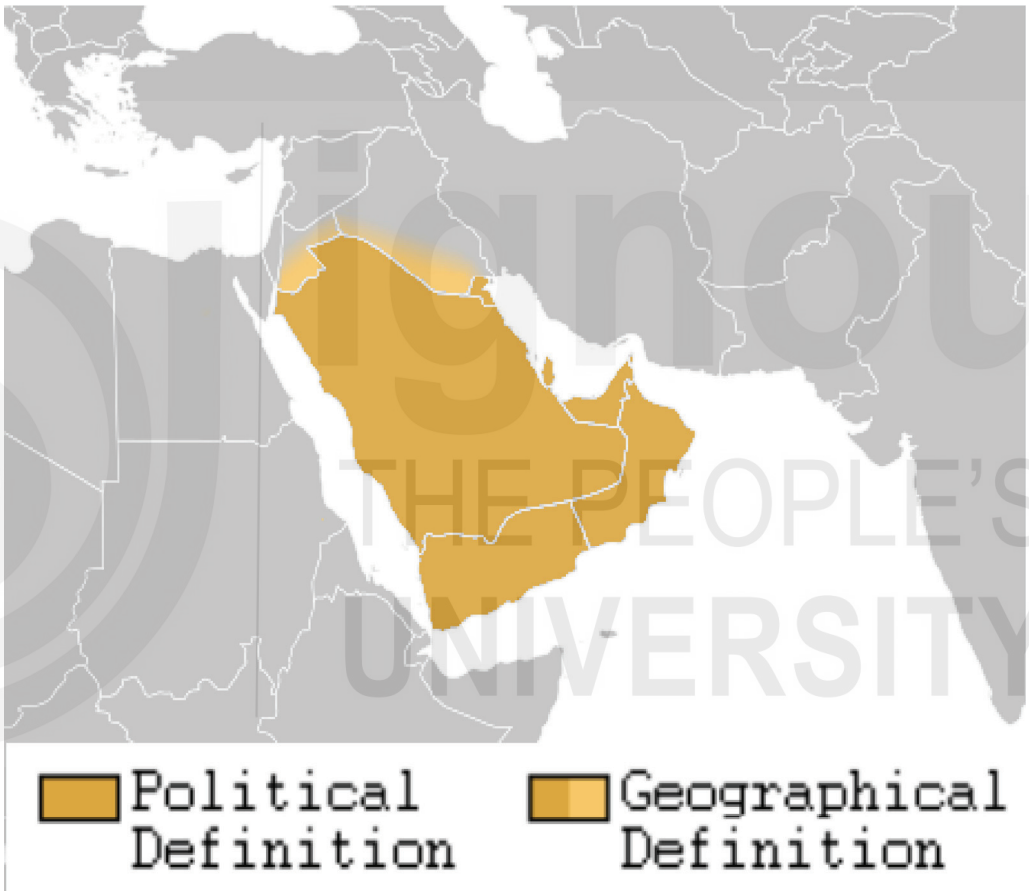

मानचित्र 12.1: अरब प्रायद्वीप

साभार : फारोस; अक्टूबर, 2007

based on PD Image:BlankMap-World.png by User:Vardion

स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/4/4a/Arabian_peninsula_definition.PNG

यह प्रदेश घुमंतू चरवाहों से आबाद था, जो खुद को अरब कहते थे। सदियों तक मध्य, उत्तरी और पश्चिमी अरेबिया इन भ्रमणशील लोगों से बसा हुआ था। ऊँटों के आने और उनके पालन से वहां एक विशेष प्रकार की पशुपालक खानाबदोश संस्कृति की शुरुआत हुई जो ऊँट पालन पर आधारित थी। इस्लाम-पूर्व अरेबिया में कोई व्यवस्थित सामाजिक ढांचा नहीं था और इस्लाम के उदय के पहले वहां कोई राज्य संरचना भी नहीं थी। अरब के लोग ऐसे

[1] तीन तरफ से पानी से घिरा भू-क्षेत्र प्रायद्वीप कहलाता है।

[2] रेगिस्तान में ज़मीन से निकलने वाला चश्मा और उसके आस-पास का हरित क्षेत्र नखलिस्तान कहलाता है।

विभिन्न कबीलों में बंटे हुए थे, जो कुलों और गोत्रों के आधार पर संगठित थे। वे अपने आवागमन और व्यापार के लिए पूरी तरह से ऊँटों पर निर्भर थे। इसी तरह भोजन और जीविका के लिए कुछ अनाजों और खजूर पर।

इस इकाई में हम आपको इस्लाम-पूर्व अरेबिया के विभिन्न पहलुओं से परिचित कराएंगे, जिनमें कबीलाई बस्तियों और उनकी संरचना, धार्मिक रीति-रिवाजों, व्यापार-तंत्र, सामाजिक ताने-बाने, आर्थिक स्थितियों और राजनीतिक संरचना का विशेष उल्लेख किया जायेगा। इस्लाम-पूर्व अरब समाज की जटिल प्रकृति को समझने के लिए इस इकाई में उन सभी पहलुओं पर विचार किया गया है, जिन्होंने अरब प्रायद्वीप के एक संगठित स्वरूप के विकास में अपना योगदान दिया।

12.2 अरब के कबीलाई परिसंघ

अरब प्रायद्वीप के निवासियों को यूनानी भाषा में साराकेनोई तथा लैटिन में सारासेनी कहा जाता था। इससे पहले उन्हें सेनाइट अरब या तंबुओं में रहने वाले अरब के रूप में जाना जाता था। हालाँकि अरब के ये ऊँट वाले खानाबदोश खुद को अरब ही कहलाना पसंद करते थे। लेकिन इस्लाम-पूर्व का यह अरब प्रायद्वीप विभिन्न कबीलों और धार्मिक समुदायों का घर था।

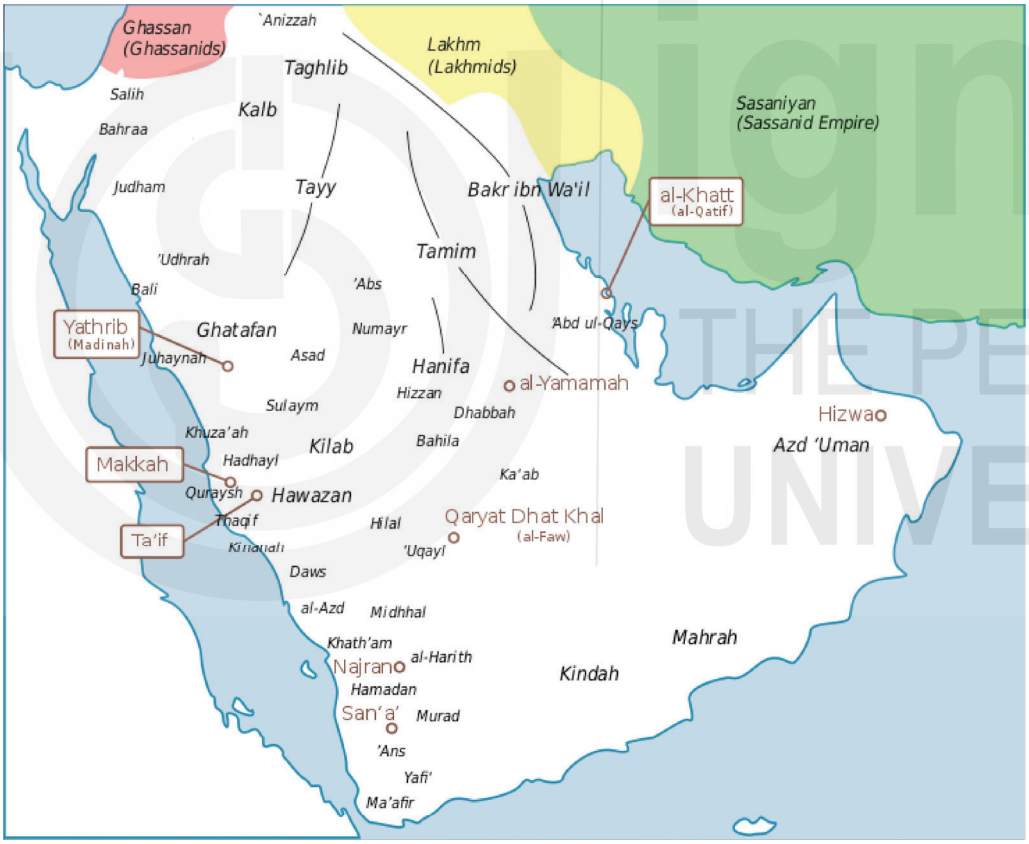

मानचित्र 12.2: अरब कबीले, लगभग 600 सी ई

साभार : मुरेथेब एन आई, मई 2009

स्रोत : Adapted from File:Tribes_english.png;https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/3/30/Map_of_Arabia_600_AD.svg

12.2.1 अरब प्रायद्वीप के प्रभुत्वशाली कबीले

मक्का में पांचवी सदी में विभिन्न कबीलों का गठबंधन कुरैश एक प्रभुत्वशाली कबीलाई राज्यसंघ बन गया। कुरैश एक संगठित धार्मिक संप्रदाय था। वे *माला* नामक एक गोत्रीय परिषद् के माध्यम से मक्का का शासन चलाते थे। कुरैशों ने अपनी पहचान मजबूत बनाने के लिए खान-पान, पहनावे, पारिवारिक प्रतिबंधों तथा कुरैश परिसंघ के भीतर ही सगोत्र

विवाह के नियम बनाये। वे स्थानीय मेलों तथा क्षेत्रीय व्यापार में सक्रिय थे। कुरैशों के बीच आपस में उच्च स्तर की संबद्धता थी। वाणिज्य और व्यापार के अलावा कुरैशों ने कृषि में भी निवेश किया। कृषि कार्यों में उनकी भागीदारी के प्रमाण तैफ शहर में मिलते हैं, जहाँ फल उगाए जाते थे और पूरे अरब प्रदेश में भेजे जाते थे। इस्लाम के उदय के पहले ही कुरैशी उद्यमियों ने तैफ की घाटियों में विशाल जागीरें स्थापित कर ली थीं।

मदीना में अव्स और खज़राज प्रमुख कबीले थे। मदीना में यहूदी कबीलों का प्रभुत्व था और अव्स तथा खज़राज बाद में वहां बसने के लिए आए। जिस समय ये मदीना में रहने के लिए आए, उस समय यहूदी कबीलों के मुकाबले उनकी स्थिति कमजोर थी। धीरे-धीरे वे शक्तिशाली होने लगे, उन्होंने अपने लिए गढ़ बनाए और खजूर के बागान लगाए। इन दोनों कबीलों को बाद में इस्लाम के तहत *अल-अंसार* या मददगार कहा गया।

12.2.2 अरब प्रायद्वीप में धार्मिक विविधताएं

अरब प्रायद्वीप सिर्फ अरब बद्दुओं (Bedouin) की ही भूमि नहीं थी। वहां अनेक दूसरे धार्मिक समूह बसे थे और वे उस क्षेत्र के राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे।

उत्तर अरब में खैबर और मदीना दो बड़ी यहूदी बस्तियां थीं। मदीना के यहूदी जमीनों, किलेनुमा गढ़ों और हथियारों से संपन्न थे। पांचवी शताब्दी में उत्तरी अरब में ईसाई धर्म स्थापित हो चुका था। दक्षिणी अरब में चौथी और पांचवी शताब्दी में यहूदी धर्म स्थापित हुआ तथा बाइजेंटाइन धर्म-प्रचारकों की गहन गतिविधियों से छठी शताब्दी तक ईसाई धर्म का प्रसार होने लगा था। अबीसीनियाइयों ने दक्षिणी अरब पर हमला कर ईसाई बस्तियों को यमन के छोटे नखलिस्तानों की ओर सीमित कर दिया था।

ईसाई चर्च सासानी प्रभाव वाले पूर्वी अरब क्षेत्र में भी सक्रिय थे, विशेष रुप से अल-हीरा में। ईसाई प्रतिनिधित्व उन व्यापारियों द्वारा भी होता था, जो दक्षिण अरब के नजरान से सीरिया के बसरा के बीच आने-जाने वाले कारवांओं के साथ यात्राएं करते थे। यहाँ तक कि **हेजाज़** में भी ईसाई और यहूदी बस्तियां थीं। **हेजाज़** के नखलिस्तानों में यहूदी धर्म का काफी प्रचार था, जहाँ यहूदियों ने खेती योग्य भूमि का काफी विस्तार किया था और खजूर के अनेक बागान लगाए थे। कुछ महत्वपूर्ण अरब परिवारों ने धर्मांतरण कर यहूदी धर्म अपना लिया था।

मदीना में यहूदियों की एक बड़ी आबादी रहती थी। ईसाई धर्म और उससे कुछ कम यहूदी धर्म का प्रवेश घुमंतू कबीलों में भी हो चुका था। मदीना में यहूदी आबादी का फैलाव दोनों क्षेत्रों में था – उत्तर में सफीला या मदीना के निचले इलाकों में और दक्षिण में आलिया या ऊपरी इलाकों में माना जाता है कि कुरेज़ा और नादिर जैसे यहूदी कबीले ऊपरी मदीना में बसे हुए थे, जबकि क़्येनुक़ा नाम का एक तीसरा बड़ा कबीला सफीला में रहता था। लेकिन नादिरों के पास आलिया के बाहर तथा उसकी सीमा पर भी अपनी भू-संपत्ति थी।

अनेक नाम, धार्मिक शब्द और ऐतिहासिक प्रसंग इस्लाम-पूर्व अरब पर इराकी-सीरियाई प्रभाव का भी संकेत देते हैं। उत्तरी अरब के सीमांत क्षेत्रों में सीरियाई तथा इराकी संतों तथा सन्यासियों की पूजा होती थी।

बोध प्रश्न-1

1) कुरैश कबीले की प्रकृति का विश्लेषण कीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) मदीना के प्रभुत्वशाली कबीलों पर एक टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

3) सही और गलत कथन पर निशान (✓/✗) लगाइये :

i) ईसाईयत का प्रतिनिधित्व उन व्यापारियों द्वारा भी होता था, जो दक्षिणी अरब में नजरान से सीरिया के बसरा तक जाने वाले कारवाओं के साथ आते-जाते थे। ( )

ii) मदीना में यहूदियों की एक बड़ी आबादी रहती थी। ( )

iii) बताया जाता है कि कुरेजा और नादिर नामक कबीले निचले मदीना (Lower Medina) में रहते थे। ( )

12.3 कबीलाई तथा धार्मिक रीति-रिवाज

मक्का और मदीना के इस्लाम-पूर्व कबीले मुख्यतः मूर्ति पूजक थे। हालांकि विस्तार से देखने पर पता चलता है कि मक्का और मदीना की धार्मिक परंपराओं में काफी अंतर था।

12.3.1 मक्कावासियों के धार्मिक रीति-रिवाज तथा अनुष्ठान

इस्लाम-पूर्व के अरब निवासी मूर्ति पूजक थे। वे बहुदेववादी थे, यानी वे अनेक देवताओं के अस्तित्व में विश्वास करते थे, लेकिन वे एक सर्वोच्च ईश्वर, अल्लाह में भी विश्वास करते थे, जिसका निवास काबा में था। अल्लाह को वे सर्वोपरि ईश्वर मानते थे या ऐसा ईश्वर जो सबका सृष्टा है, जो अन्य सभी कबीलाई देवताओं पर अपनी शक्ति का इस्तेमाल करता है। चूँकि मक्का के निवासी मूर्ति पूजक थे इसलिए उन्होंने अनेक आकार-प्रकार वाले देवताओं की मूर्तियां बनाईं। इनमें से सबसे प्रचलित वे देवमूर्तियां थीं, जो कुल या कुटुंब के देवताओं की थीं। मक्का का महान् देवता हुबल था, जिसकी मूर्ति एक लाल कीमती पत्थर, कार्नेलियन से बनाई जाती थी।

चित्र 12.1: शेर पर खड़ी अरब देवी अल-लात की प्रतिमा, बगल में अल-मनत और अल-उज़्ज़ा हतरा से प्राप्त द्वितीय शताब्दी की उभरी हुई नक्काशीयुक्त आकृति

साभार : अज्ञात

स्रोतः http://artyx.ru/books/item/f00/s00/z0000023/st004.shtml; https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/c8/AllatHatra.jpg

उनकी आरंभिक तीर्थ यात्राएं (*हज*) अल्लाह के घर काबा (cube या घन के लिए प्रयुक्त अरबी शब्द) के लिए होती थीं। यह एक समकोणीय भवन था, जहाँ जाना सबसे बड़ा धार्मिक अनुष्ठान था

और जो मक्का के विभिन्न कबीलों में भाई-चारा बनाए रखने में मददगार था। काबा में मक्का के सभी कुल वंशों के पवित्र चिन्ह एकत्र किए जाते थे। इस तरह इसने उनके विभिन्न पंथों-संप्रदायों को एक में समाहित कर दिया। इसके अलावा मक्का में कुछ अन्य देवी-देवताओं को भी विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त थी, विशेष रूप से तीन देवियों को – अल-लात, अल-उज़्ज़ा और अल-मनत। अल-लात का अर्थ है 'देवी', अल-उज़्ज़ा अर्थात 'सर्व शक्तिशाली,' जो 'शक्ति और 'सुरक्षा की देवी' मानी जाती थी, तथा अल-मनत यानी 'सौभाग्य की देवी'। इनकी मूर्तियां काबा के अंदर रखी गई थीं। श्रद्धालु काबा की प्रतिष्ठा में निर्धारित बार नंगे पांव उसकी परिक्रमा करते थे। इस दौरान वे भवन में लगे पवित्र पत्थरों को स्पर्श करते थे, विशेष रूप से कोने में लगे काले पत्थर को। काबा के निकट ही एक पवित्र कुआँ था, जिसे ज़मज़म कहा जाता था।

मक्का के निवासी कुछ कम शक्ति वाली आत्माओं या *जिन्नों* में भी विश्वास करते थे, जिन्हे अक्सर किसी विशेष कबीले का रक्षक माना जाता था। इनमें से प्रत्येक *जिन्न* किसी स्थान विशेष पर बने मकबरे, किसी पेड़ या किसी बागीचे या किसी खास प्रस्तर खंड से संबंधित होता था। तारों को भी दैवीय समझा जाता था।

12.3.2 मदीना के निवासियों के धार्मिक रीति-रिवाज तथा अनुष्ठान

मक्का की ही तरह मदीना में भी मूर्तियां विभिन्न कबीलाई संगठनों से अलग-अलग स्तरों पर जुड़ी हुई थीं। यहाँ भी मूर्ति-पूजा के रुप में कुल या कुटुंब के देवता की पूजा सबसे ज्यादा प्रचलित थी। कुल या कुटुंब की मूर्तियों से ऊँचा स्थान उन मूर्तियों का था, जिनका संबंध अभिजात्य परिवारों से था। मदीना के प्रत्येक अभिजात्य कुल की अपनी एक विशिष्ट मूर्ति होती थी और उसका अपना एक नाम होता था। इनके अलावा अपेक्षाकृत छोटे कबीलाई समूहों की भी अपनी मूर्तियां होती थीं और उनके अपने नाम भी होते थे।

छोटे कबीलाई समूहों की मूर्तियों को *बत्न* कहा जाता था। इन मूर्तियों को पूजा स्थल के गर्भ में रखा जाता था, जिन्हें *बैत* कहा जाता था। उनको बलि अर्पित की जाती थी। मदीना की कबीलाई व्यवस्था में *बत्न* के ऊपर एक और मूर्ति होती थी, जिसे *हुज़ाम* कहा जाता था। हुज़ाम को बलि भी अर्पित की जाती थी। खज़राज कबीला अल-खमीस की मूर्ति की पूजा करता था। अज़्द, अव्स और खज़राज कबीले अल-सैदा की मूर्ति की पूजा करते थे, जो मदीना के उत्तर में उहूद पर्वत पर स्थित थी।

मदीना में जादू-टोना और अंधविश्वासों का प्रचलन था। लोग बुरी नजरों से डरते थे और उनसे बचाव के लिए ताबीज पहनते थे।

बोध प्रश्न-2

1) मक्का के निवासियों के धार्मिक रीति-रिवाजों का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) मदीना के कबीलों के धार्मिक रीति-रिवाजों तथा अनुष्ठानों के बारे में पांच पंक्तियां लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) निम्नलिखित को सुमेलित कीजिए :

i) हुबल	a) सौभाग्य की देवी
ii) हुज़ाम	b) मक्का का देवता
iii) अल-मनत	c) मदीना

12.4 छठी शताब्दी के पूर्व अरब का व्यापारिक ढांचा

पश्चिमी तथा मध्य अरेबिया में व्यापार का सबसे महत्वपूर्ण केंद्र हिजाज़ में स्थित मक्का था। मक्का महत्वपूर्ण केंद्र इसलिए था, क्योंकि यह दो व्यापारिक मार्गों के बीच स्थित थाः फिलिस्तीन और यमन को जोड़ने वाला उत्तर से दक्षिण की ओर जाने वाला मार्ग तथा पश्चिम में एबीसीनिया (इथियोपिया) और लाल सागर तथा पूरब में फारस की खाड़ी को जोड़ने वाले मार्ग। छठी शताब्दी के मध्य में मक्का के कुरैश कबीले ने समुद्र से जुड़ने वाले उत्तर-पूर्वी अरेबिया तथा यमन या अबीसीनिया के व्यापार पर आधिपत्य जमा लिया। उन्होंने न सिर्फ दूर-दराज से होने वाले व्यापार पर बल्कि आंतरिक व्यापार पर भी प्रभुत्व कायम कर लिया।

व्यापार ने अरेबिया को बाकी दुनिया से भी जोड़ा। बाहर से व्यापारी अरेबिया में वस्त्र, आभूषण, हथियार, अनाज और मदिरा (वाइन) लेकर आए। अरेबिया खाल, चमड़े और पशुओं का निर्यात करता था। पूर्व और दक्षिण तटों पर हिंद महासागर के मिलन बिन्दुओं पर वाणिज्य के साथ अरब बाजारों की मंडियां स्थापित हुईं। दक्षिणी अरब के आबाद इलाकों और **चंद्राकार उपजाऊ क्षेत्र** (Fertile Crescent) के बीच कारवांओं ने संपर्क बढ़ाने का काम किया। ये कारवां जब चलते थे तो अपने उत्पादों के अलावा एक ओर तो भारत, पूर्वी अफ्रीका और सुदूर पूर्व से तथा दूसरी और पूरे भूमध्यसागरीय क्षेत्र से भी सामान लाने-ले जाने का काम करते थे। बद्दुओं के सीमा क्षेत्र से होकर जो कुछ भी गुजरता था, उस पर उनका पूरा नियंत्रण था।

जहाँ तक अरबों के मुख्य व्यवसाय का संबध है, छठी सदी में उनमें धीरे-धीरे बदलाव आ रहा था। कुछ कबीलों ने व्यापार को अपना मुख्य पेशा बनाना शुरू कर दिया। इन कबीलों ने धीरे-धीरे घुमंतू पशुपालन छोड़ दिया और पूर्णकालिक व्यापारी बन गए। व्यापार की तरफ यह रुझान सबसे ज्यादा हिजाज़ प्रांत में देखने को मिला, मक्का जिसका एक अंग था। सासानियों तथा बाइजेंटाइन के संघर्ष के कारण फारस की खाड़ी और इराक से होकर गुजरने वाले अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक मार्ग में बदलाव आया और कुछ व्यापार लाल सागर के रास्ते या स्थल मार्ग द्वारा यमन से सीरिया की ओर होने लगा। इसका नतीजा यह हुआ कि अनेक कारवां हिजाज़ से होकर गुजरने लगे और धीरे-धीरे हिजाज़ के मार्ग का महत्व बढ़ गया। व्यापारिक संपर्कों के पुनर्व्यवस्थापन के कारण हिजाज़, जो व्यापारियों की बस्ती थी, को जो महत्व हासिल हुआ, उसकी वजह से मक्का की ख्याति छठी शताब्दी में बढ़ी।

12.5 इस्लाम-पूर्व अरब का राजनीतिक ढांचा

व्यवहार में अरब किसी लिखित कानूनी संहिता से बद्ध नहीं थे, और उनकी अपनी कोई राज्य संरचना नहीं थी जो कानूनी संहिताओं को लागू करने के लिए बाध्य करती। राजनीति का स्वरूप निरंकुश नही था। व्यक्तिगत प्रतिष्ठा और घनिष्ठ वंशीय निष्ठा सर्वाधिक महत्वपूर्ण थी।

प्रत्येक कबीले का मुखिया युद्ध में नेतृत्व प्रदान करता था, आपसी मतभेदों में पंच का कार्य करता था, और अधिकतर परिस्थितियों में कबीले के पवित्र प्रतीक चिन्हों का संरक्षक था। हालांकि, प्रधान को किसी परिवार अथवा कुल-गोत्र (clan) पर अपनी निर्णय शक्ति थोपने का कोई अधिकार नही था। प्रत्येक व्यक्ति कुल विशेष से संबंध तोड़ने के लिए स्वतंत्र था, और अपने परिवार के साथ कभी भी कबीले को छोड़ सकता था।

कोई भी आम न्यायालय नहीं था। न्यायिक शक्ति के अभाव में अंतर-समूह नियंत्रण को आपसी खूनी रिश्तों के सिद्धान्त के आधार पर प्रतिशोध द्वारा कायम किया जाता था, जैसे कि किसी बाहरी व्यक्ति द्वारा कबीले के सदस्य के प्रति अत्याचार को समस्त कबीले के विरूद्ध अपराध माना जाता था तथा दुश्मनी उस पूरे कबीले के साथ मानी जाती थी जिस कबीले के साथ का वह परदेसी सदस्य होता था। आहत कबीले की प्रतिष्ठा उस अपमान का प्रतिशोध लेकर ही स्थापित की जा सकती थी। सामान्य सिद्धान्त थाः आंख के बदले आंख, जीवन के बदले जीवन।

12.6 इस्लाम-पूर्व अरब का सामाजिक ढांचा

इस्लाम-पूर्व अरब एक घुमंतू-पशुपालक प्रधान समाज था। आइए देखें कि इन कुल-गोत्र आधारित कबीलाई समूहों की आंतरिक संरचना कैसी थी।

12.6.1 कबीलाई संरचना और नेतृत्व

अरब समाज कबीलाई था और यह घुमंतू, अर्ध-घुमंतू तथा स्थायी आबादियों से मिलकर बना हुआ था। बद्दुओं ने अपना एक विशिष्ट प्रकार का सामाजिक संघटन तैयार किया था। वे निरंतर भ्रमण करते रहते थे। इन बद्दुओं की जीवन शैली अरेबिया की एक विशिष्ट पहचान बन गई। ऐसे समुदाय बहुत कम थे, जो आवासीय या स्थायी जीवन व्यतीत करते थे।

समाज की बुनियादी इकाइयां वे छोटे-छोटे समूह थे, जिन्हें कुल या कुनबा कहा जा सकता था। एक कबीला कुछ कुनबों को मिलाकर बनता था, जो किसी एक गोत्र या कुल संबंध को स्वीकार करते थे। मार्शल हॉजसन बड़े समूहों को कबीला और छोटे समूहों को 'कुल' या कुनबा बताते हैं। प्रत्येक कबीले के अपने वास्तविक या काल्पनिक पुरखे थे। शुष्क मौसमी परिस्थितियों की वजह से बड़ी आबादी वाले समूह को एक साथ रखना संभव नहीं था। इसलिए जैसे ही कुनबे बड़े होने लगते, वे अलग जाकर अपनी स्वतंत्र इकाई बना लेते थे। इससे कबीलों का एक समानुपातिक आकार बना रहता था। कबीलों में बराबरी का दर्जा कबीलाई संगठनों द्वारा कायम किया जाता था। कबीले का हर सदस्य एक समान समझा जाता था।

परिवारों के छोटे या बड़े समूहों में आर्थिक और सामाजिक परस्पर निर्भरता की पैतृक प्रणाली थी। परिवार बड़े समूहों से आर्थिक कारणों से जुड़े रहते थे और बड़े समूह अपने से बड़े समूहों से राजनीतिक शक्ति के लिए जुड़े रहते थे। इन समूहों में हर स्तर पर एक तरह की आंतरिक स्वायत्तता मौजूद रहती थी। प्रत्येक स्तर पर ये समूह अपने आपको किसी एक ही वास्तविक या काल्पनिक विरासत से संबद्ध इकाई के रूप में पेश करते थे। प्रत्येक बड़े समूह

के पास अपने चारागाह होते थे। वे अपने क्षेत्र में चरवाही के अपने अधिकार की रक्षा करते थे और उसे दूसरों की कीमत पर और बेहतर बनाने की कोशिश करते थे।

प्रत्येक कबीला अपने लिए एक मुखिया या नेता का चुनाव करता था। यह चुनाव कुछ तो इस आधार पर होता था कि वह किस परिवार का वंशज है और कुछ उसकी व्यक्तिगत योग्यताओं के आधार पर। लेकिन निश्चित रूप से उसके अधिकार और उसकी सत्ता उसकी अपनी ही निजी छवि पर निर्भर करती थी और उसे बनाये रखने के लिए हमेशा सर्तक रहना होता था। इसके लिए उसे अपनी अनेक प्रकार की योग्यताओं का प्रदर्शन करना पड़ता था – अपनी दया और उदारता से अपने अनुयायियों को एकजुट रखना, प्रत्येक स्थिति में संयमित व्यवहार करना, अपने शासितों की अव्यक्त इच्छाओं को समझना और आवश्यकता पड़ने पर अपनी शक्ति और अधिकारों का प्रयोग करना।

12.6.2 असमानता और दासता

सभी कुल बराबर नहीं थे। उनमें से कुछ लूटमार, व्यापार और आवासीय बस्तियों या घुमंतू कबीलों पर हमला कर दूसरों की तुलना में अमीर बन गए थे। समय-समय पर विभिन्न कुलों के कुछ व्यक्ति भी अपना व्यक्तिगत भाग्य बना लेते थे। इसलिए उनका समाज अमीरों और गरीबों में बंटा हुआ था। अनेक कुल, जैसे लोहारों या धातु कर्मियों के कबीले दूसरों द्वारा निम्नतर समझे जाते थे।

कुछ अमीर कुलों के सदस्य अपने धन का उपयोग दासों की खरीद के लिए भी करते थे। फिर भी घुमंतू जिंदगी की स्थितियाँ दास रखने के लायक नहीं होती थीं, इसलिए अक्सर दासों को आजाद कर दिया जाता था। आजाद किए गए दास या *मावला* फिर भी अपने पूर्व मालिकों पर ही आश्रित बने रहते थे।

12.6.3 ऊँटों वाले अभिजात घुमंतू कबीले

अरेबिया के अधिक शुष्क प्रदेशों में बद्दुओं या ऊँट वाले घुमंतू कबीलों को अभिजात्य कबीलों में माना जाता था। ऊँटों के अलावा उनके पास घोड़े भी होते थे, जिनका इस्तेमाल वे हमलों के लिए करते थे। भेड़ और बकरियां चराने वाले चरवाहे भी रहते थे, लेकिन उन्हें कृषि योग्य भूमि के नजदीक रहना होता था, इसलिए वे उन लोगों की कृपा पर आश्रित रहते थे, जो उनकी तुलना में ज्यादा भ्रमणशील थे। शुद्ध रूप से ऊँट पालक, खेतिहरों तथा अन्य पशु पालकों से अधिक भ्रमणशील और साधन संपन्न थे। वे इलाके के अन्य कबीलों पर अपनी इस स्थिति का रौब भी गांठते थे। वे लूट से सुरक्षा और आश्वासन के बदले खेतिहरों से शुल्क भी मांगते थे, जिसे *ख्व्वा* कहा जाता था।

12.6.4 अंतर-कबीलाई संघर्ष

कबीलों के बीच आपसी संबंध शांतिपूर्ण हो सकते थे, लेकिन गरीबी के कारण अमीरों का धन हासिल कर लेने का लालच बहुत बड़ा था। इसलिए कई कबीले *ग़ज़वा* या दूसरे कबीलों पर हमला करने में व्यस्त रहते थे। इन हमलों के नियम परंपरा से निर्धारित होते थे। ऐसी कोशिश की जाती थी कि बिना कोई जान लिए माल और मवेशी लूट लिए जाएँ, क्योंकि मानव हत्या को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता था, और इसके लिए कड़े दंड का प्रावधान था।

बोध प्रश्न-3

1) निम्नलिखित को परिभाषित कीजिए:

   i) ***कबीला*** .....

.....

ii) *मावला* .....

.....

iii) *ग़ज़वा* .....

.....

2) इस्लाम-पूर्व अरब में कबीला प्रमुख की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

12.7 आर्थिक स्थितियां

बद्दू आमतौर पर ऊँट पालक थे, नखलिस्तानों के पास स्थायी या अभ्रमणशील आबादी रहती थी और कृषि कार्य करती थी, और अरब आबादी का एक छोटा हिस्सा खनन् में भी कार्यरत् था।

12.7.1 ऊँटों पर आधारित खानाबदोशी

चूँकि प्रायद्वीप का अधिकांश हिस्सा रेगिस्तानी था, इसलिए जीवन का प्राकृतिक तरीका खानाबदोशी और पशुपालन था। ईसा युग के प्रारंभ होने के पहले दूसरी सहस्त्राब्दि में यहां के बाशिंदों ने ऊँटों, जो रेगिस्तान के लिए बेहद अनुकूल थे, को पालतू बनाना सीख लिया था। ऊँटों वाली खानाबदोशी अपने साथ एक बड़ी सामाजिक शक्ति की संभावनाएँ भी लेकर आई। अन्य पालतू पशुओं की तुलना में ऊँट अपने पालकों के लिए ज्यादा भ्रमणशीलता लेकर आए। वे अन्य पशुओं की अपेक्षा ज्यादा लंबे समय तक बिना भोजन और यहां तक कि बिना पानी के भी रह सकते थे, इसलिए जल विहीन क्षेत्रों में दूर-दूर तक यात्राएं कर सकते थे। वे 50 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान वाले क्षेत्रों में भी बिना भोजन और पानी के तीन-तीन हफ्तों तक लगातार यात्रा कर सकते थे। इसलिए उनकी मदद से रेगिस्तान के दुर्गम संसाधनों की खोज की जा सकती थी और उनका लाभ उठाया जा सकता था। ऊँट भारी वजन ढो सकते थे, इसलिए इस काम के लिए भी उनका उपयोग हो सकता था। वे अच्छा दूध भी देते थे। इन कारणों से वे न सिर्फ अपने पालकों के लिए जीवन का आधार साबित होते थे, बल्कि वाणिज्यिक रूप से भी फायदेमंद विकल्प थे। इससे बददुओं ने न केवल रेगिस्तान के नखलिस्तानों में प्रधानता प्राप्त की बल्कि आसपास के प्रदेशों की स्थायी बस्तियों पर भी अपना प्रभाव बनाया। वे न सिर्फ व्यापार करने में बल्कि अनुकूल परिस्थितियों में शुल्क वसूलने में भी सक्षम थे। ऊँटों वाले घुमंतू कबीले भूमध्यसागर तथा दक्षिणी सागर वाले क्षेत्रों में व्यापार में शामिल हो गए।

रोमन और सासानी (ईरानी) साम्राज्यों के बीच का एक बड़ा भूक्षेत्र बद्दू अरब लोगों का था। इस क्षेत्र में मुख्य रूप से उत्तर-पश्चिम और मध्य भाग में ऊँटों वाले घुमंतू कबीलों का प्रभुत्व था। ये शुष्क प्रदेश थे, जहां प्राकृतिक रूप से कहीं-कहीं घास के मैदान और जलाशय थे। यहाँ सतह के नजदीक ही पानी मिल जाता था, जिससे नियमित सिंचाई संभव हो पाती थी।

खानाबदोशी की जीवनशैली में पशुपालक यहाँ अपने मवेशियों की देखभाल कर सकते थे, दूध और कभी-कभी मांस के साथ नखलिस्तानों में पैदा होने वाला गेहूँ और खजूर प्राप्त कर सकते थे। पशुपालकों से कृषकों को पशु मिल जाते थे और अपनी आवश्यकता के वे विशिष्ट उत्पाद भी, जो उन्हें दूर क्षेत्रों से मंगाना पड़ता था।

12.7.2 अरब क्षेत्र में कृषि

इस क्षेत्र में छोटे कृषि समुदायों द्वारा कई तरह के अनाज पैदा किए जाते थे। नखलिस्तानों के पास ऐसी आबादियां आ बसी थीं जो खजूर उपजाती थीं। खजूर सिर्फ एक फल ही नहीं था, बल्कि इसका प्रत्येक हिस्सा किसी न किसी उपयोग में लिया जाता था। अरबों में इसे 'मां और मौसी' कहा जाता था। खजूर और ऊँट का दूध इस क्षेत्र का मुख्य भोजन था।

ओमान और बहरीन में अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि था। बहरीन, मक्का को अनाज निर्यात करता था। वे किसान जो खजूर पैदा करते थे और इधर-उधर छितरे हुए खेतों पर फल और सब्जियां उगाते थे, वे रेगिस्तान के ऊंट-पालक बद्दू थे। बद्दुओं, कृषकों तथा शहरी बाशिदों का जीवन एक-दूसरे पर निर्भर था। इसलिए उन्हें एक साथ मिलजुल कर रहना था।

12.7.3 अरब क्षेत्र में उद्योग और खनन्

अरब में आर्थिक रूप से उन्नत अनेक उत्पादन क्षेत्र थे। सासानियों ने यमन में चांदी और तांबा के खनन् को विकसित करने में मदद की। पूर्वी अरब में भी तांबा और चांदी का खनन् होता था। यमन में चमड़े और कपड़े का उत्पादन होता था। उत्तर मध्य अरब में कूफा-मदीना मार्ग पर बसे अल-रबाद नामक शहर में धातु, काँच, सेरामिक और सिलखडी के सामान बनाए जाते थे।

12.8 इस्लाम-पूर्व काल का साहित्य

एक अस्थायी कबीलाई समाज में कलाओं के विकसित होने के अवसर कम ही थे, लेकिन साहित्य इसका अपवाद था। असल में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक जटिलताओं ने अरब समाज में एक उन्नत और परिष्कृत सांस्कृतिक वातावरण उत्पन्न किया।

सम्पूर्ण अरब बहुभाषी था, हालांकि इस्लाम-पूर्व काल में आरामाइक (प्राचीन सीरियाई) शायद वहाँ सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा थी। लेकिन छठी शताब्दी तक आते-आते अरबी भाषा महत्वपूर्ण हो गई और वह इस क्षेत्र में लिखी और बोली जाने लगी। इस्लामिक युग के सौ साल पहले अरबी लिपि अस्तित्व में आ गई थी। यह आरामाइक से ही ली गई थी, जिस पर नबातियन लिपि का प्रभाव था और जिसे बाद में सीरियाई यहूदियों ने पुनः आकार दिया।

अरबी धर्म की भाषा भी थी। इराकी और हिमियाराइट ईसाईयों ने चौथी शताब्दी में बाईबिल के न्यू और ओल्ड टेस्टामेंट का अनुवाद अरबी में किया था। ईसाई पूजा (liturgies) पद्धति तथा प्रार्थना की किताबें अरबी भाषा में लिखी गई थीं। मदीना के अरबों ने यहूदी स्कूलों में भी अरबी, आरामाइक और हिब्रू सीखी होगी। वहाँ के बिखरे हुए अरब कबीलों के लिए एक समान भाषा उन्हें एकीकृत करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक था। पांचवी सदी के अंत तक अरबी भाषा की एक विशिष्ट भाषाई पहचान विकसित हो चुकी थी। पैट्रिशिया क्रोन का मानना है कि छठी शताब्दी में अरबों में उल्लेखनीय 'सांस्कृतिक एकरूपता' मौजूद थी।

अरब कविताओं का बहुत आदर करते थे। छठी शताब्दी से अरबी में एक विशेष शैली वाली कविताएं रची जाने लगीं, जिन्हें *रजाज़* कहा जाता था। प्रत्येक कबीले के अपने-अपने कवि थे। ये कवि अपने कबीले की वीरता और श्रेष्ठता का बखान करने वाली कविताएं सुनाकर

अपने श्रोताओं का मनोरंजन करते थे। *रजाज़* के अलावा कविता का एक और विकसित रूप भी अरेबिया में सामने आ रहा था, जिसे संबोधन गीत या *कसीदा* (Ode) कहा जाता था। ये कवितायें लंबी होती थीं तथा उन्हें गाकर सुनाया जाता था। *कसीदा* का एक विशेष रूप *मुआलकात* अथवा प्रलंबित कविताएं था जो उन दिनों अरब प्रायद्वीप में बेहद लोकप्रिय हो गया था। इमरुल क़ैस इन *मुआलकात* के आरंभिक और प्रसिद्ध रचियताओं में से एक थे। ऐसा माना जाता है कि वे इस्लाम-पूर्व अरब के प्रथम कवि थे। *मुआलकातों* की रचना करने वाले कुछ दूसरे मशहूर रचनाकारों में तराफा (बक्र कबीला के) जुहैर (बानू मुज़ाइना कबीला के) तथा लबीद (हवाज़ीन के बनू अयीर कबीले से संबंधित) शामिल थे।

बोध प्रश्न-4

1) ऊँटों वाली खानाबदोशी की अवधारणा का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) इस्लाम-पूर्व अरब के साहित्य पर एक टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) खाली स्थानों को भरिए:

i) सासानियों ने यमन में ..... के खनन् कार्य को विकसित करने में मदद की।

ii) बहरीन मक्का को ..... का निर्यात करता था।

iii) ऊँटों वाले घुमंतू ..... और दक्षिणी सागर के वाणिज्य में शामिल हुए।

iv) खजूर के पेड़ों को अरब में ..... की तरह समझा जाता था।

12.9 सारांश

इस इकाई में इस्लाम पूर्व अरेबिया के संस्थागत ढांचे के सामान्य विवरण की चर्चा की गई है। इसमें कबीलाई व्यवस्था की विशेषताओं के साथ उनके रीति-रिवाजों तथा धार्मिक अनुष्ठानों को रेखांकित किया गया है। अरबों के सामाजिक ढांचे और समाज के विभिन्न अवयवों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें वहां के व्यापारिक नेटवर्क तथा आर्थिक स्थितियों का भी विवरण दिया गया है। इकाई में कबीलाई प्रशासन की प्रकृति के बारे में बताया गया है। इस्लाम-पूर्व काल में साहित्य के विकास का भी संक्षिप्त विवरण शामिल किया गया है।

12.10 शब्दावली

बद्दू (Bedouin) : बद्दू अरब के वे खानाबदोश कबीले थे जो अरब प्रायद्वीप, इराक, लेवांत और उत्तरी अफ्रीका के रेगिस्तानों में रहते थे। यह शब्द अरबी के *बदावी* (रेगिस्तान में रहने वाले) शब्द से बना है। ज़्यादातर वे इस्लाम के अनुयायी थे। हालांकि उपजाऊ चन्द्राकार क्षेत्र (Fertile Crescent) में रहने वाले उनमें से कुछ ईसाई भी थे। *ओल्ड टेस्टामैंट* में उनका जिक्र केदाराइट्स के रूप में हुआ है। असीरियन उन्हें अराबा कहते थे। और खुद वे अपने आप को अरब बुलाते थे।

हेजाज़ / हिजाज़ : अल-हेजाज़ / हिजाज़ इस्लाम की पवित्र भूमि है। भौगोलिक रूप से यह सउदी अरब के पश्चिमी भाग में स्थित है, जहाँ इस्लाम के दोनों सबसे पवित्र शहर मक्का और मदीना स्थित हैं।

चन्द्राकार उपजाऊ क्षेत्र (Fertile Crescent) : उपजाऊ क्रेसेंट एक चन्द्राकार क्षेत्र है, जिसमें आज के आधुनिक देश इराक, इजराइल, फिलिस्तीन क्षेत्र, सीरिया, लेबनान, मिस्र, जार्डन, तुर्की का दक्षिणी छोर तथा ईरान का पश्चिमी छोर शामिल हैं।

12.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) उप-भाग 12.2.1 देखें

2) उप-भाग 12.2.1 देखें

3) (i) ✓ (ii) ✓ (iii) ✗

बोध प्रश्न-2

1) उप-भाग 12.3.1 देखें

2) उप-भाग 12.3.2 देखें

3) (i) b, (ii) c, (iii) a

बोध प्रश्न-3

1) (i) उप-भाग 12.6.1 देखें (ii) उप-भाग 12.6.2 देखें (iii) उप-भाग 12.6.4 देखें

2) उप-भाग 12.6.1 देखें

बोध प्रश्न-4

1) उप-भाग 12.7.1 देखें

2) उप-भाग 12.8 देखें

3) (i) चांदी और तांबा, (ii) अनाज, (iii) भूमध्यसागरीय, (iv) माँ और मौसी

12.12 संदर्भ ग्रंथ

फारूकी, अमर, (2002) *अर्ली सोशल फार्मेशंस,* संशोधित संस्करण, (नई दिल्लीः मानक पब्लिकेशंस प्रा. लि).

हॉजसन, मार्शल जी. एस., (2004) *द वेंचर ऑफ इस्लाम,* भाग-1, *द क्लासिकल ऐज ऑफ इस्लाम* (लाहौर : वेन्गार्ड बुक्स प्रा. लि.).

होल्ट पी.एम, एन के. एस. लैंबटन एवं बर्नार्ड लेविस, (1970) *द कैंब्रिज हिस्ट्री* ऑफ *इस्लाम,* भाग-1, *द सेंट्रल इस्लामिक लैंड्स* (कैंब्रिजः कैंब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस).

लेपिडस, इरा एम., (2012) *इस्लामिक सोसायटीज टू द नाइनटींथ सेंचुरीः ए ग्लोबल हिस्ट्री* (नई दिल्लीः कैंब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस).

रॉबिंसन, चेज एफ., (सं.) (2010) *द न्यू कैंब्रिज हिस्ट्री ऑफ इस्लाम, भाग-1, द फोर्मेशन ऑफ द इस्लमिक वर्ल्ड, सिक्स्थ टु एलेवेंथ सेंचुरीज़* (कैंब्रिजः कैंब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस).

रॉडिंसन, मैक्सिम, (1971) *मोहम्मद* (एलेन लेनः द पेंगुईन प्रेस).

12.13 शैक्षणिक वीडियो

अरेबिया बिफोर इस्लाम
https://www.youtube.com/watch?v=HDjjp4Nf73I

गॉड्स ऑफ अरब्स बिफोर इस्लाम
https://www.youtube.com/watch?v=3q7EfeFJ7Jg

इकाई 13 इस्लाम का उदय और विस्तार*

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 पैगंम्बर मुहम्मद और इस्लाम का आगमन

13.3 आधुनिक इतिहासलेखन सम्बन्धी दृष्टिकोण

13.4 इस्लाम के उदय से संबंधित मत : इतिहासलेखन पर कुछ पुनर्विचार

13.4.1 मक्का व्यापार मत

13.4.2 देशीय मत

13.4.3 संशोधनवादी मत

13.5 पैगंम्बर मुहम्मद की मृत्यु के बाद इस्लाम का प्रसार

13.6 इस्लाम और पश्चिम : धर्मयुद्ध

13.7 सारांश

13.8 शब्दावली

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.10 संदर्भ ग्रन्थ

13.11 शैक्षणिक वीडियो

13.0 उद्देश्य

वर्तमान इकाई पहले चार पवित्र खलीफाओं के काल तक इस्लाम के उदय को समाविष्ट करती है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के उदय का मूल्यांकन कर पायेंगे,
- इस्लाम-पूर्व अरब के सामाजिक-राजनैतिक, आर्थिक और धार्मिक परिदृश्य को जान सकेंगे,
- अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के उद्भव के बारे में विभिन्न दृष्टिकोणों को समझेंगे,
- अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के उदय से सम्बन्धित बुनियादी मतों को जानेंगे,
- चार पवित्र खलीफाओं के अधीन इस्लामिक विस्तार के सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया को जानेंगे, और
- सातवीं से तेरहवीं शताब्दी के दौरान समस्त यूरोप और मध्य पूर्व और मगरिब को झकझोर देने वाले दीर्घकालिक धर्मयुद्धों (Crusades) की परिस्थितियों को समझ पायेंगे।

* डॉ. समाना ज़फर, डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एन्ड कल्चर, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

13.1 प्रस्तावना

छठी शताब्दी सी ई में अरब प्रायद्वीप में, विशेष रूप से हेजाज/हिजाज़ में एक घटना घटी जिसका पश्चिम एशिया, यूरोप और मध्य एशिया पर व्यापक प्रभाव पड़ा और जिसने विश्व के इतिहास का मार्ग बदल दिया। यह घटना इस्लाम का उदय था। यह आन्दोलन इतना तीव्र था कि इसकी शुरुआत से आधी सदी के भीतर ही खलीफाई साम्राज्य अच्छी तरह से स्थापित हो गया और एक सदी के भीतर, इस्लाम एक विश्व स्तर का धर्म बन गया।

13.2 पैगंम्बर मुहम्मद और इस्लाम का आगमन

सातवीं सदी के शुरुआती काल में पश्चिम एशिया में एक ऐसी दुनिया का सम्मिश्रण मौजूद था जिसमें एक तरफ सुसंस्कृत आबाद दुनिया थी और दूसरी तरफ इसके सीमांत प्रदेश में वह दुनिया थी, जो अपने उत्तर में स्थित पड़ोसियों के निकट संपर्क में थी और स्वयं उन संस्कृतियों के प्रभाव में आ रही थी। बाइज़ेंटाइन (1453 में ऑटोमन से पराजित हुआ) की शक्ति और सासानिद साम्राज्य (651 में अरबों से हार गया) पतन की ओर अग्रसर थे, जबकि अरब प्रायद्वीप में बसे कबीलाई समुदाय अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर रहे थे और उनमें से कुछ सीमान्त क्षेत्रों में सीरिया और इराक की राजनीति में सक्रिय भाग ले रहे थे। जल्द ही एक नयी राजनीतिक व्यवस्था का निर्माण हुआ जिसमें शासक समूह का गठन पहले के साम्राज्यों के लोगों के द्वारा नहीं बल्कि पश्चिमी अरब विशेष रूप से हेजाज़ के अरबों द्वारा किया गया था।

इस नयी राजनीतिक व्यवस्था ने ईश्वरीय आह्वान के रूप में खुदा द्वारा मुहम्मद को दिये गये इलहाम (revelation) [*कुरान* के रूप में] से स्वयं को जोड़ा। अबुल कासिम मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह का जन्म 570 सी ई में मक्का में हुआ था। वह कुरैश कबीले के हाशिम कुल से संबंध रखते थे। कुरैशों ने खुद को व्यापार और वाणिज्य के क्षेत्र में भली-भांति स्थापित किया हुआ था और उनकी गिनती अरब के सबसे धनी व्यापारियों में होती थी, हालांकि मुहम्मद का कुल इसके भीतर सबसे प्रमुख नहीं था। व्यापार में उनकी भूमिका के कारण, वे प्रायद्वीप के एकमात्र सबसे शक्तिशाली कबीले के रूप में उभरे। वास्तव में, व्यापार एकमात्र ऐसा स्त्रोत नहीं था जिसने उनकी प्रमुखता स्थापित की। कुरैश कबीले के द्वारा काबा के धार्मिक स्थल का नियन्त्रण, जहाँ स्थानीय देवताओं की प्रतिमाओं को रखा गया था और जो प्रायद्वीप के लोगों के धार्मिक रूझान का केन्द्र था, ने कुरैश कबीले की प्रतिष्ठा को बढ़ाया। उन्होंने कुछ निश्चित मौसमों में मक्का के लिए होने वाली तीर्थ यात्राओं और उनके साथ लगने वाले मेलों को प्रोत्साहन दिया और साथ ही साथ इसके नजदीक ही एक तटस्थ स्थान (अराफात) और उस क्षेत्र के अन्य बाजारों को भी प्रोत्साहन दिया। मुहम्मद अपने चाचा अबु तालिब की देखरेख में एक अनाथ के रूप में बड़े हुए थे। उन्होंने खदीजा नामक एक सम्पन्न विधवा के लिए कार्यरत एक व्यापारी के रूप में अपनी काबिलियत सिद्ध की।

अपने जीवन के तीसरे दशक में मुहम्मद इन प्रश्नों में तल्लीन हो गये कि सत्य और शुचिता से भरा अर्थ पूर्ण जीवन कैसे जीया जाये। उन्होंने शहर के बाहर स्थित हिरा पर्वत पर एक गुफा में एकांत समय में मनोयोग से ध्यान किया। उन्होंने स्वयं को कुरैश कबीले के संस्कारों और रीति-रिवाजों से अलग नहीं किया और जो वास्तव में उनके हमेशा प्रिय बने रहे। लेकिन उन्होंने कुछ और हासिल करने की कोशिश की जो उन परम्पराओं में मौजूद नहीं था। चालीस साल की उम्र के आसपास, हिरा पर्वत में अपने एकातंवास के दौरान उन्होंने एक ऐसी वाणी सुनी और ऐसा अलौकिक दृश्य अनुभव किया जिसमें उन्हें उस ईश्वर की पूजा करने के लिए आह्वान किया, जिसने दुनियाँ को बनाया था – एकेश्वरवादियों का ईश्वर। अपनी पत्नी, खदीजा द्वारा प्रोत्साहित किये जाने पर, उन्होंने स्वयं परमेश्वर से आने वाले आह्वानों

को स्वीकार किया। तत्पश्चात्, उन्हें और संदेश मिले, जिसकी व्याख्या उन्होंने दिव्य इलहाम (revelation) के रूप में की, और उनकी प्रार्थनाओं का सस्वर पाठ नये पंथ का प्रमुख तत्व बन गया। उन ईश्वरीय संदेशों को सामूहिक रूप से *कुरान* कहा जाता था। कुछ समय तक, केवल उनकी पत्नी और कुछ करीबी दोस्त उनके साथ पंथ के अनुयायी बने। लेकिन कुछ वर्षों के बाद ईश्वरीय संदेशों ने उन्हें निर्देश दिया कि वह अपने कुरैश कबीले के सदस्यों से भी परम ईश्वर की पूजा का आह्वान करें। यदि वे इन्कार करते हैं तो उन्हें आने वाली विपत्तियों की चेतावनी दें। एक व्यक्तिगत एकेश्वरवादी से शुरू होकर उन्हें अपने लोगों के लिए पैगम्बर बन जाना था।

जैसे-जैसे मुहम्मद के लिए समर्थन बढ़ता गया, कुरैश के प्रमुख परिवारों के साथ उनके सम्बन्ध खराब होते चले गये। उन्होंने उनके ईश्वर के दूत होने के दावे को स्वीकार नहीं किया और उन्हें ऐसा माना गया कि उन्होंने उनकी जीवन पद्धति पर आक्षेप किया था। मुहम्मद की स्थिति और कठिन हो गई जब एक ही वर्ष में खदीजा और अबु तालिब की मृत्यु हो गई। जैसे-जैसे शिक्षाओं का विस्तार हुआ, स्थापित मान्यताओं के अनुयायियों का विरोध मुखर होता गया। मुहम्मद ने महसूस किया कि अपने लोगों की सुरक्षा के लिए, कुरैश के प्रतिरोध पर काबू पाने के लिए और अपने अनुयायियों की संख्या बढ़ाने के लिए, कुछ राजनैतिक आधार आवश्यक था। अंत में, उनकी स्थिति इतनी कठिन हो गई कि 622 में उत्तर की ओर 200 मील की दूरी पर स्थित एक मरुद्वीप याथरिब, जिसे बाद में मदीना के नाम से जाना गया, में शरण के लिए उन्होंने मक्का छोड़ दिया। 622 सी ई में मदीना की ओर किए गए इस गमन को *हिजरा* के नाम से जाना जाता है, जिस तिथि से मुस्लिम संवत् शुरू हुआ।

मदीना एक कृषि आधारित मरूद्वीप था। मक्का की तरह यह भी एक ही कबीले के बजाय विभिन्न कबीलों का निवास था, लेकिन मक्का के विपरीत यहां प्रमुख कबीलियाई समूहों – अव्स और खज़राज – के बीच चिरस्थायी तीक्ष्ण कलह थी, जो मदीना के अस्तित्व के लिए कई बार खतरा बनी। इसके अलावा, मक्का की तरह मदीना भी सामाजिक परिवर्तनों के दौर से गुजर रहा था जिसने बद्दू (Bedouin) भाईचारे को कमज़ोर कर दिया था। चारागाही जरूरतों की बजाए कृषि ने इसकी अर्थव्यवस्था को संचालित किया, और इसके सामाजिक जीवन का संचालन नातेदारी सम्बन्धों की बजाए अधिक से अधिक स्थानिक निकटता द्वारा प्रभावित हो रहा था। मदीना के निवासियों द्वारा उनका स्वागत किया गया और उन लोगों ने उन्हें अपने विवादों के मध्यस्थ (पंच) के रूप में स्वीकार किया। एक ऐसे समाज में जिसमें कोई सामान्य कानून या सरकार नहीं थी, वहाँ एक धार्मिक दृष्टि वाला व्यक्ति जो न्याययुक्त, व्यवहार कुशल और बुद्धिमान था, अक्सर बैरी कुलों द्वारा मध्यस्थ के रूप में चुना जाता था। उनके प्रारंभिक जीवनी लेखकों ने ऐसे समझौतों की इबारत को संरक्षित किया है जिसमें एक तरफ मुहम्मद के अनुयायियों और दूसरी तरफ दो प्रमुख कबीलों अव्स और खज़राज के साथ ही कुछ यहूदी समूहों के बीच हस्ताक्षर किये गए हैं।

मदीना से मुहम्मद ने अपनी शक्ति को सुदृढ़ करना शुरू किया और जल्द ही कुरैश के साथ एक सशस्त्र संघर्ष प्रारंभ हुआ। समुदाय का मानना था कि जो न्यायोचित था उसके लिए लड़ने के लिए युद्धरत होना आवश्यक था। पहले *मुहाजिरीन,* जो निर्वासित मक्कावासी थे ने, धन प्राप्ति के लिए मक्का के काफिलों पर छापे मारे। यह छापे जल्दी ही लड़ाई में बदल गये। 624 तक, मुहम्मद ने मक्का की अपेक्षाकृत बड़ी सेना को बद्र के युद्ध में हराकर अरब में दूर–दूर तक जबरदस्त प्रतिष्ठा प्राप्त की। इसे दिव्य कृपा के रूप में माना गया जिससे कुछ बद्दू कबीले, जिन्हें काफिले की रक्षा करने की जिम्मेदारी हासिल थी, वे दल-बदल कर मुहम्मद के पक्ष में आ गए। बाद के वर्षों में मक्कावासियों ने पहल करके पहले उहुद (625) की लड़ाई में और फिर खंदक (627) की लड़ाई में मुहम्मद और मदीना पर आक्रमण किये।

हालांकि पहले मुकाबले में मुहम्मद हार गये लेकिन दोनों लड़ाइयां इनके लिए लाभप्रद साबित हुईं। हालांकि उन्हें मक्का की दुष्कर चुनौतियों का सामना करना पड़ा। लेकिन हर बार परिस्थितियों ने उन्हें मदीना के यहूदी कुलों के साथ संबंध सुदृढ करने का मौका दिया।

मुहम्मद का उद्देश्य आजन्म मक्का से लड़ना नहीं था बल्कि इसके निवासियों को इस्लाम में धर्मांतरित करना था। इसलिए, उन्होंने खंदक के युद्ध के बाद विराम दिया। 628 सी ई में मुहम्मद ने अपने अनुयायियों के साथ काबा की तीर्थयात्रा की। इरा लेपिडस के अनुसार, उन्होंने ऐसा यह दिखाने के लिए किया कि इस्लाम मूलतः एक अरब धर्म था और जो मक्का के तीर्थ स्थल के उन रीति-रिवाजों को संरक्षित करेगा, जिनमें मक्का की बहुत बड़ी भागेदारी थी। अब्राहम एक उच्चस्तरीय एकेश्वरवादी धर्म और मक्का के पूजा स्थल के संस्थापक थे, यह विचार पहले से प्रचलन में था, अब उन्हें ना तो एक यहूदी ना ही ईसाई, बल्कि दोनों के एक समान पूर्वज के रूप में और मुसलमानों के पूर्वज के रूप में भी देखा जाने लगा था। कुरैश और मक्का के साथ मुहम्मद के संबंधों में भी बदलाव आया। मक्का की तीर्थयात्रा (हज) को जाते हुए मुहम्मद ने अल-हुदैबिया में एक युद्ध विराम सन्धि की जिसमें मक्का निवासी तीर्थयात्रा के लिए मुसलमानों को प्रवेश की अनुमति देने पर सहमत हो गये और मुहम्मद ने पैगम्बर माने जाने की शर्त नहीं रखी। विशेषतः यह असमान समझौता था। इस समझौते के मुताबिक मक्का के नाबालिग जो बिना माता-पिता की अनुमति के इस्लाम अपनाने जाएंगे, उन्हें वापस लौटा दिया जाएगा जबकि मुस्लिम धर्म त्यागी वापस नहीं लिए जाएंगे। हालांकि यह समझौता असमान था पर मुहम्मद को इससे विशेष लाभ प्राप्त हुआ। मुहम्मद अब एक मान्य सत्ता के रूप में उभरे और मक्का ने उन्हें हराने के अपने प्रयासों को छोड़ दिया। मक्का में मुहम्मद के अनुयायियों की संख्या में लगातार वृद्धि होती रही। सन् 630 में, मक्का शहर के सत्ताधारियों ने मक्का को मुहम्मद को सुपुर्द कर दिया, और उन्होंने बिना किसी प्रतिरोध के मक्का अधीन कर लिया, एवं उनके द्वारा सभी को माफी दे दी गई। उनके द्वारा नई व्यवस्था के सिद्धान्तों को घोषित किया गया जिसके अन्तर्गत उन्होंने काबा के पुण्य स्थल की निगरानी या तीर्थयात्रियों की जल व्यवस्था के अतिरिक्त सभी पारंपरिक विशेषाधिकार, वंशानुगत दावा, या मालिकाना हक के हर दावे को समाप्त कर दिया। वर्ष 632, में मुहम्मद का निधन हो गया।

बोध प्रश्न-1

1) पैगम्बर मुहम्मद के प्रारंभिक जीवन पर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) पैगम्बर मुहम्मद की शक्ति में वृद्धि को रेखांकित कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के आगमन की प्रक्रिया का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

13.3 आधुनिक इतिहासलेखन सम्बन्धी दृष्टिकोण

प्रारंभिक इस्लाम का इतिहास लिखने के मूल रूप से चार प्रमुख आधुनिक दृष्टिकोण हैं:

i) **वर्णनात्मक दृष्टिकोण** : इस्लाम के अध्ययन संबंधी इस दृष्टिकोण में इस्लाम और उसके प्रारंभिक इतिहास का वर्णन करने के लिए पहली बार इस्लामी स्त्रोतों का उपयोग किया गया। इसके लेखक समृद्ध जानकारी के लिए मुस्लिम विद्वानों द्वारा लिखे साहित्य की तरफ आकर्षित हुए और उनका यकीन था कि चूंकि यह इस्लामी स्त्रोत हैं, इसलिए यह इस्लाम के कम पक्षपात पूर्ण वर्णन को प्रस्तुत करेंगे। यह विवाद सम्बन्धी परंपराओं की धर्मान्धता से आगे बढ़ने की दिशा में एक कदम था, लेकिन इसने इस्लामी साहित्यिक स्त्रोतों के दस्तावेज़ीय मूल्य का अधिक आंकलन किया। गिब्बन की पुस्तक द *डिक्लाइन एन्ड फॉल ऑफ द रोमन एंपायर* में इस्लाम पर दिया गया प्रकरण इस श्रेणी में खरा उतरता है। यह 18वीं-19वीं शताब्दियों में एक प्रमुख दृष्टिकोण था।

ii) **स्रोत-आलोचनात्मक दृष्टिकोण** : समय बीतने के साथ, इतिहासकारों ने इस्लामी स्त्रोतों की सीमाओं को महसूस करना शुरू कर दिया। जैसा कि मध्ययुगीन स्रोतों में आमतौर पर सामान्य है, वे कभी-कभी विरोधाभासी विवरण देते हैं। विद्वानों ने इन विरोधाभासों का अध्ययन किया और इसके लिए अलग-अलग सूचना देने वालों को जिम्मेदार ठहराया, जिनके पास एक रिपोर्टर के तौर पर सूचना देने के अलग-अलग लक्ष्य और विश्वसनीयता के अलग स्तर थे (व्यक्तिगत सूचनाओं को सूचनाकारों की श्रृंखला जिसे ***सनद/इस्नाद*** के नाम से जाना जाता है, के माध्यम से समाविष्ट किया जाता था)। प्रारंभिक सूचना देने वालों की समीक्षा से स्त्रोत-आलोचनात्मक दृष्टिकोण उभरा। यह विचार धारा 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में विकसित हुई। एक विचार विकसित हुआ कि प्रारंभिक रिर्पोटों के एक तुलनात्मक विश्लेषण से इस्लामिक इतिहास का पुनर्निर्माण किया जा सकता है। सभी रिपोर्टों की तुलना करके 'कमजोर' सूचना देने वालों से जुड़ी रिपोर्टों को अलग किया जा सकता था ताकि बाद की किंवदंतियों से पहले की ऐतिहासिक सामग्री को अलग किया जा सके।

iii) **परंपरा-आलोचनात्मक दृष्टिकोण** : इसके अधिवक्ताओं ने इस धारणा को चुनौती दी कि पारंपरिक-इस्लामिक साहित्य में उपलब्ध जानकारी पहले के दस्तावेजों की प्रतियों का प्रतिनिधित्व करती हैं या वर्णन करने वालों की एक श्रृंखला के माध्यम से एक चश्मदीद गवाह का वर्णन बनाती है। उनका तर्क है कि हम पाते हैं कि कई साहित्यिक रचनाओं में प्राप्त वर्णन अतीत की मौखिक परंपराओं को केवल लिखित रूप में पेश करते हैं। वर्णनों का उपयोग अतीत के पुनर्निर्माण में बड़ी सावधानी के साथ किया जाना चाहिए क्योंकि आमतौर पर यह जानना असंभव सा है कि संचार के दौरान किस सामग्री को छोड़ा गया, किसको जोड़ा या बदला गया। इस सम्बन्ध में अग्रिम

अन्वेषक इग्नाज गोलज़िहर की रचना *मोहमडन स्टडीज* (1889-90) ने यह अन्तर्दृष्टि प्रस्तुत की कि पैगम्बर के बारे में बहुत से वर्णन बाद में जोड़े गए। 20वीं शताब्दी के अनेक विद्वानों जैसे जोसेफ शख्त, एम. जे. किस्टर, रूबिन आदि ने विस्तृत परंपरा-आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किये।

iv) **संशयवादी दृष्टिकोण** : स्रोतों की जटिलताओं ने अनेक लोगों को यह दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित किया। यह पारंपरिक रूप से संप्रेषित लगभग सभी सामग्री की ऐतिहासिकता को अस्वीकार करता है। इस समूह के विद्वानों का मूल तर्क यह है कि परंपरा में वास्तव में कोई सार, सत्य सामग्री का अंश नहीं हो सकता है, और भले ही इसमें हो तब भी यह संभव नहीं है कि इसको संक्षिप्तीकरण, विखंडन और पुनर्व्याख्या की एक के बाद एक विकृतियों की कई परतों से सुलझाकर अलग किया जा सके। संशयवादी मत ने प्रारंभिक इस्लामी इतिहास के स्रोतों की विश्वसनीयता और इसके प्रति विद्वानों के उचित रवैये जैसे प्रासंगिक सवाल उठाये, लेकिन कभी-कभी इनका दावा अतिरंजित लगता है। इसके अलावा यह दृष्टिकोण नकारात्मक है। हालांकि यह इस पर सवाल करता है कि 'क्या हुआ' लेकिन इसने अभी तक इसके वैकल्पिक पुनर्निर्माण की कि 'क्या होने की संभावना रही होगी', की पेशकश नहीं की। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय योगदान पेट्रिशिया क्रोन की मक्कन *ट्रेड एंड द राइज़ ऑफ इस्लाम,* मिशेल कुक की पुस्तक *हैगरिज्म* (1977) और जॉन वान्स बोरो की *द सेक्टेरियन मिल्यू* (1978) के थे।

यह अलग-अलग दृष्टिकोण उत्तरोत्तर ऐतिहासिक अवधियों में उभरे, लेकिन अपने पूर्ववर्तियों को उखाड़ने की बजाए प्रत्येक नया दृष्टिकोण पूर्ववर्ती दृष्टिकोणों के साथ सह-अस्तित्वों में रहा और सभी दृष्टिकोणों को भिन्न-भिन्न रूप में अभ्यास में लाया जाता रहा है।

बोध प्रश्न-2

1) प्रारम्भिक इस्लाम के इतिहास लेखक के वर्णनात्मक दृष्टिकोण को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) प्रारंभिक इस्लामी इतिहास का अध्ययन करने के लिए स्त्रोत-आलोचनात्मक दृष्टिकोण क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) क्या आप संशयवादी प्रणेयताओं से सहमत हैं जो सभी पारंपरिक रूप से सन्प्रेषित सामग्री की ऐतिहासिकता को अस्वीकार करते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

13.4 इस्लाम के उदय से संबंधित मत : इतिहासलेखन पर कुछ पुनर्विचार

इस्लाम के उदय के सम्बन्ध में तीन बुनियादी मत हैं:

1) मक्का व्यापार मत / व्यापारिक धन मत (Meeca Trade Theory/Commercial Wealth Theory)

2) देशीय मत (Nativist Theory)

3) संशोधनवादी सिद्धान्त (Revisionist Theory)

13.4.1 मक्का व्यापार मत

मक्का व्यापार विचार के प्रतिपादक मोन्टगोमरी वॉट थे। उन्होंने नये धर्म के उदय को गहरे सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों का नतीजा माना और यह देखने की कोशिश की कि कैसे और क्यों इसे कम समय के भीतर अरब कबीलों के बीच इतनी व्यापक स्वीकृति प्राप्त हुई। मोन्टगोमरी वॉट, जिन्होंने मुहम्मद और उनके जीवन पर कई किताबें लिखी हैं जैसे *मुहम्मद एट मक्का* और *मुहम्मद एट मदीना*, इस्लाम के उद्भव की पूर्व संध्या पर समाज के स्वरूप की जाँच करते हैं। वह इस्लाम के उदय को उस परिवर्तन की अनुक्रिया के रूप में देखते हैं जो व्यापार और उस क्षेत्र में कुछ कबीलों द्वारा एक स्थान पर बसे रहने की जीवन शैली को अपनाने के कारण आकार ले रहा था। मक्का दो मुख्य व्यापार मार्गों के सन्धि स्थल पर स्थित था जिनमें एक यमन और हिन्दमहासागर के भू-भाग से सीरिया और हेजाज़ के पहाड़ी क्षेत्र से होता हुआ भूमध्यसागरीय भू-भाग तक उत्तर और दक्षिण दिशा में जाता था; और दूसरा, जो कम महत्वपूर्ण था, दक्षिण-पश्चिम दिशा में इराक, ईरान और मध्य यूरेशिया से अबीसीनिया और पूर्वी अफ्रीका तक जाता था। मक्का के व्यापारी लंबी दूरी के व्यापार से सम्बद्ध थे। कुरैश लोगों ने उत्तर-दक्षिण व्यापार मार्ग को नियंत्रित किया था और उन्होंने इस लाभदायक व्यापार के माध्यम से अपनी समृद्धि को बढ़ाया। मक्का में ही सर्वाधिक विशिष्ट परिवर्तन हुए। मक्का के व्यापारिक विस्तार के चलते परंपरागत संबंधों की क्षति हुई और समाज में नए तनाव पैदा हुए। व्यापार से अर्जित धन और तीर्थयात्रियों से होने वाली कमाई ने सभी को समान रूप से लाभ नहीं पहुँचाया। मक्का के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तन्त्र के केन्द्र के रूप में उदय ने कई प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न कीं: बृहद् सामाजिक स्तरीकरण, बढ़ती हुई सामाजिक विषमताएँ और गरीब वर्गों की धनी वर्गों पर बढ़ती निर्भरता। इसके कारण विभिन्न स्तरों पर टकराव हुआ। कुरैश लोगों के अपेक्षाकृत समान्य कबीलाई संगठन में इस नई स्थिति से निबटने के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी। इसके अलावा, ऐसे कबीले भी थे जो सीमित पैमाने पर कृषि को अपना रहे थे और अन्य कबीले जो अरेबिया की सीमा पर मौजूद थे व बसे हुए समाजों के दायरे में आ रहे थे। मुहम्मद के द्वारा एकता का आह्वान इन नयी उभरती सामाजिक विषमताओं को प्रत्युत्तर था और इस्लाम ने इन कबीलों को सामाजिक संगठन के लिए एक व्यवस्था प्रदान की। इस परिदृश्य में मुहम्मद उभरे और उनके उद्घोषित संदेश का प्रयोजन कबीलाई इकाईयों को पूरी तरह भंग करना था जिससे एक एकीकृत समुदाय की निर्मिती हुई। चूंकि आन्दोलन ने ईश्वर के सम्मुख सभी जनों की समानता की

घोषणा की, सामाजिक असमानताओं से त्रस्त समुदायों ने अब अधिक सामाजिक-आर्थिक समानता हासिल कर ली या उन्हें इसकी अपेक्षा थी। आन्दोलन ने सामाजिक न्याय पर जोर दिया और अरब समाज में व्याप्त श्रेणीबद्ध वर्ग भिन्नता के सभी रूपों को अस्वीकृत किया। इस वैचारिक मत में पैगम्बर का उद्‌भव और उनके उपदेशों की सफलता की व्याख्या समकालीन सामाजिक समस्याओं के लिए प्रदान किये गये उनके समाधानों के संदर्भ में की गई है।

इसी तरह की राय अन्य इतिहासकारों जैसे रोडिन्सन ने *मुहम्मद* में, मार्शल होड्सन ने *वेंचर ऑफ इस्लाम* और एम. ए. शाबान की *इस्लामिक हिस्ट्रीः ए न्यू इन्टरप्रिटेशन 600-750 ईस्वीं* में भी प्रस्तुत की गई है।

13.4.2 देशीय मत

वॉट की यह परिकल्पना कि कुरैश लोगों के एक व्यापारिक अर्थव्यवस्था में रूपांतरित होने से मक्का की परंपरागत व्यवस्था क्षतिग्रस्त हो गई, जिससे सामाजिक और नैतिक दुर्भावना पैदा हुई, और मुहम्मद के प्रवचन इनका निदान थे, इस विचार को पेट्रिशिया क्रोन द्वारा चुनौती दी गई जिनका दावा है कि *मक्का विलासिता के साजो-सामान के बजाय सामान्य उत्पादों में व्यापार करता था*। जबकि वॉट ने तर्क दिया कि मक्का भारत, अफ्रीका और भूमध्यसागर के बीच लम्बी दूरी के व्यापार का पारगमन बिन्दु था। किस्टर की मान्यता को आधार बनाते हुए पैट्रिशिया क्रोन का दावा है कि यह व्यापार सामान्य किस्म का था। मक्का का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार चमड़े और कपड़े जैसी वस्तुओं पर काफी हद तक आधारित था। उन्होंने सवाल किया कि 'क्या वे चमड़े के सामान और कपड़ा व्यापार के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय आयामों वाले वाणिज्यिक साम्राज्य की स्थापना कर सकते थे?

व्यापार की वस्तुओं का अवलोकन करते हुए उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि मसालों का व्यापार बहुत कम होता था और सोने और चाँदी का कोई विनिमय व्यापार मौजूद नहीं था। अन्य वस्तुएं जैसे किशमिश, मदिरा, एवं गुलाम और अन्य चीजें विशेष रूप से अरेबिया के भीतर ही बेची गईं। चमड़ा वह वस्तु था जिसका बड़े पैमाने पर व्यापार होता था और इसके अलावा कपड़े, पशु और विविध खाद्य सामग्री, हालांकि कम उल्लिखत हैं, शायद उनका काफी व्यापार था।

पैट्रिशिया क्रोन ने तीन असहममि के बिन्दु प्रस्तावित कियेः **प्रथम,** यह एक पारगमन व्यापार नहीं था। मक्का के व्यापारियों को लंबी दूरी के व्यापारिक नेटवर्क में बिचौलियों के रूप में माना जाता था। वे दक्षिण अरब क्षेत्र और इथियोपिया से देशी और विदेशी वस्तुएँ एकत्र करते थे और सीरिया और इराक तक उनका परिवहन करते थे। लेकिन क्रोन के अनुसार उत्तर में बेची जाने वाली वस्तुएं उत्तरी अरब मूल की ही थीं ना कि भारतीय या दक्षिण-पूर्वी एशिया मूल की। दक्षिण अरब क्षेत्र से खरीदा गया इत्र उत्तर एवं हिजाज़ में पुनर्विक्रय के लिए ही जाता था, ना कि बाइज़ेंटाइन या ईरान साम्राज्य के लिए। इसके अलावा मक्का की कोई भी वस्तु, चाहे वह इत्र हो या अन्य वस्तुएँ वह इन क्षेत्रों में ही पुनर्वितरण के लिए नियत थीं। हिजाज़ के चमड़े की वस्तुएं और कपड़े और यमन का इत्र ये सब वस्तुएँ दक्षिण सीरिया के शहरों और हिरा के बाजारों के लिए था न कि एंटीऑक, कॉन्सटेनटिनोपल या टेसीफोन के लिए। **दूसरा,** यह उस तरह का व्यापार नहीं था जो यूनानी और 'फर्टाइल क्रेसेंट' (Fertile Crescent) के नाम से विख्यात उपजाऊ प्रदेश का ध्यान आकर्षित करता। अरब क्षेत्र के राजनैतिक महत्व का उल्लेख मिलता है लेकिन न तो ग्रीक, लेटिन, सीरियाई, अरामाईक, कॉपटिक और ना ही अरब के बाहर रचित किसी अन्य साहित्य में कुरैश और उनके व्यापारिक केन्द्रों का उल्लेख मिलता है। **तीसरा,** यह ऐसा व्यापार नहीं था जिसमें अरब क्षेत्र में किसी व्यापार मार्ग पर नियंत्रण की मान्यता निहित हो।

पेट्रिशिया का मत है कि स्त्रोतों में उल्लेख न होना खुद व्यापार की प्रकृति को स्पष्ट करती है, और अगर बड़े पैमाने पर व्यापार फैला होता तो यह अरब क्षेत्र के बाहर अवश्य ध्यान आकर्षित करता। इसलिए कुरैश लोग व्यापारी थे और इनकी व्यापारिक गतिविधियाँ इस क्षेत्र में बहुत पुराने समय से चली आ रही थीं। व्यापार मार्गों पर नियन्त्रण (यमन, सीरिया, इराक, इथियोपिया) की बात इसलिए अर्थहीन हैं और स्त्रोत ऐसा कोई दावा नहीं करते कि मक्का के लोगों का किसी भी व्यापारिक मार्ग पर नियन्त्रण था या उनका किसी क्षेत्र विशेष के निर्यात व्यापार पर प्रभुत्व था, अरब क्षेत्र के व्यापार के एकाधिकार की तो बात ही छोड़ दी जाए। स्पष्ट रूप से यह एक स्थानीय व्यापार था। पेट्रिशिया क्रोन के अनुसार मक्का के व्यापारी विलासिता की वस्तुओं की बजाए सामान्य वस्तुओं का व्यापार करते थे।

पेट्रिशिया इंगित करती हैं कि व्यापारिक धन-दौलत की यह छोटी अवधि, मक्का के समाज को बड़े बदलाव के लिए विवश करने वाली नहीं थी। आबादी की कबीलाई व्यवस्था, जो ना तो कभी उजाड़ी जा सकी थी और ना ही अपनी आर्थिक गतिविधियों के सम्बन्ध में एक भिन्न व्यवस्था को अपनाने के लिए मजबूर की जा सकी थी, उसे कमजोर करने के लिए व्यापारिक सफलता का एक सदी से अधिक समय लगता।

इस्लाम के द्वारा मक्का निवासियों को मूर्ति-पूजक दुश्मनों के रूप में देखा गया और उन पर नातेदारी सम्बन्धों और अन्य हिफाज़ती संबंधों की उपेक्षा करने के साथ-साथ ऐसी प्रवृति पालने का आरोप लगाया गया जिसमें शक्तिशाली, कमज़ोर को निगल जाते हैं। हालांकि, स्रोतों को देखकर ऐसा लगता है कि मक्का निवासियों को इस्लाम के बजाए अपनी परंपरागत जीवन शैली पसंद थी। स्रोतों के अनुसार इसके लिए उन्हें दंडित किया गया था। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इस्लाम का संदेश मदीना में स्वीकृत हुआ था। उन्होंने एकेश्वरवाद को स्वीकार किया। मक्कावासियों के धर्मांतरण के लिए पहले उन्हें जीतना पड़ा था। ऐसा लगता है कि जिन समस्याओं के मुहम्मद के पास समाधान थे, वे सभी मदीना के लोगों के सम्मुख व्याप्त समान समस्याएँ थीं।

पेट्रिशिया ने यह तर्क देने के बाद एक और सवाल उठाया कि मक्का का एक सामाजिक सुधार पूरे प्रायद्वीप को क्यों विस्फोटित कर देगा? स्पष्ट रूप से हमें उन मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जो सिर्फ मक्का के लिए नहीं बल्कि पूरे अरब क्षेत्र के लिए एक समान थे। इस्लाम की उत्पत्ति कबीलाई ढाँचे में हुई। उनके मान्य देवता प्राकृतिक घटनाओं – वर्षा, उर्वरता, बीमारी आदि के सर्वोच्च स्रोत थे – जो मानव जीवन के लिए बहुत महत्वपूर्ण थे लेकिन मानव के नियन्त्रण से परे थे। उनके व्यावहारिक महत्व और इन घटनाओं को नियन्त्रण करने में वे जो सेवाएँ दे सकते थे, उसके लिए उनकी पूजा की गई। लेकिन उन्हें ना तो अपनी भक्ति के बदले भावात्मक प्रतिबद्धता, प्रेम और निष्ठा की आवश्यकता थी ना ही उन्होंने वह प्राप्त किया। देवता एक शक्तिशाली हस्ती से अधिक नहीं था और उसकी सेवा करने का मकसद यह था कि उससे अपेक्षा की जाती थी कि वह अपने सेवकों, भक्तों के पक्ष में अपनी शक्ति का उपयोग करेगा। वार्षिक महातीर्थयात्रा जैसी प्रथाओं को स्पष्ट रूप से किसी भी 'एक' 'अकेले' देवता के नाम पर आयोजित नहीं किया जाता था।

इस्लाम-पूर्व अरब क्षेत्र में मिथक, अर्थव्यवस्था और रीति-रिवाज कम विकसित थे। धार्मिक जीवन समय-समय पर पवित्र स्थलों की यात्रा तक सीमित था। वे प्रकृति और जीवन के गूढ़ अर्थ को लेकर जटिल सवालों में नहीं उलझे हुए थे। जैसे कि क्या मृत्यु ही महासमाप्ति थी? धर्म की अवधारणा प्रकृति और जीवन के अर्थ से संबंधित, 'अन्तिम सत्य' के रूप में मौजूद नहीं थी। इसलिए धर्मान्तरण किसी आध्यात्मिक संकट, धार्मिक पतन या मूर्ति पूजक अलोकप्रियता के कारण नहीं हुए थे। सामूहिक धर्मान्तरण से पता चलता है कि पैगम्बर मुहम्मद ने उन्हें एक कार्यक्रम, रणनीति एवं अरब राज्य निर्माण और विजय प्राप्ति हेतु एक मार्गदर्शक योजना दी।

ऐसा माना जाता है कि पैगम्बर मुहम्मद के जीवन में मोड़ तब आया जब वे कुरैश लोगों के पैतृक देवता पर आक्रामक हुए। उन्होंने अपने कबीले की आधारभूत नींव पर ही हमला किया। यह एकेश्वरवाद नहीं था जो मूर्ति पूजकों के पूजा स्थल या मक्का निवासियों के व्यापार के लिए किसी खतरे के रूप में सामने खड़ा था। मक्का निवासी अपने पूर्वजों पर आक्रमण को सहन करने के लिए तैयार नहीं थे। लेकिन मुहम्मद के मन में एक वैकल्पिक संप्रदाय की परिकल्पना थी। अपने पूर्वजों की अवमानना के द्वारा, उन्होंने प्रदर्शित किया कि उनके ईश्वर के लिए प्रचलित कबीलाई विभाजन अस्वीकार्य था। उन्होंने दर्शाया कि उनका ईश्वर एकमात्र और आराध्य पूर्वज दोनों था। अल्लाह अरबों के पूर्वज इब्राहिम के एकमात्र ईश्वर थे। चूंकि पैतृक देवताओं के इर्द-गिर्द समाज गठित हुए थे, इसलिए कि वह केवल अल्लाह है जिनके इर्द-गिर्द अरबों को फिर से इकट्ठा होना चाहिए और वे सभी पैतृक देवता जिन्होंने वर्तमान विभाजनों को प्रोत्साहित किया, वे मिथ्या थे।

यह वास्तव में दिलचस्प है कि मुहम्मद और उनके उत्तराधिकारी एक ऐसे क्षेत्र में एकीकरण लाने में सक्षम रहे जो कभी राजनीतिक रूप से एकजुट नहीं हुआ था। मदीना का समाज आपसी द्वन्द्वों के चलते विभाजित था, और यह समझने में मुश्किल नहीं होगी कि वह स्वेच्छा से पैगम्बर मुहम्मद के राजनैतिक कार्यक्रम को प्रयुक्त करने को क्यों तैयार हो गए? लेकिन मुहम्मद के समय में मौजूद अरब-जन राज्य संरचनाओं और एकीकरण की परिकल्पना से इतने आकर्षित क्यों हुए?

क्रोन का तर्क है कि उन्होंने राज्य निर्माण और सामरिक अर्जन का निर्देश दिया। सामरिक अर्जन (conquest) विजय के बिना, अरब एकीकरण संभव नहीं था। यह एक ऐसा समय था जब ईरानी और बाइज़ेन्टाइन लोग अरब प्रायद्वीप का अतिक्रमण कर रहे थे, और उनकी उपस्थिति पूरे प्रायद्वीप में महसूस की जा रही थी। अरब क्षेत्र विदेशी शासन के अधीन रह चुका था। ऐसे परिदृश्य में, इस्लाम एक *देशीय आन्दोलन* के रूप में उभरा, या दूसरे शब्दों में यह *विदेशी प्रभुत्व के प्रति एक आदिम प्रतिक्रिया* के रूप में उभरा। देशीय आन्दोलन इस मायने में आदिम थे कि उनमें शामिल लोग बिना किसी राजनैतिक रूप से संगठित लोग थे। पेट्रिशिया प्रारंभिक इस्लाम को विदेशी प्रभावों की घुसपैठ के विरोध में और अरबी जीवन शैली की आसक्ति से पैदा हुए *देशीय आन्दोलन* के रूप में देखती हैं। विदेशी प्रभावों की पहचान पैट्रिशिया उन मूल्यों के द्वारा करती है जो बाइज़ेंटाइन के प्रभाव स्वरूप और ईरानी प्रभुत्व के प्रयासों से आए थे। लेकिन क्रोन इस दृष्टिकोण से भी सहमत हैं कि अरब के कुछ हिस्सों में स्थायी आवास बनाकर रहने की प्रक्रिया चल रही थी जिसके कारण कबीलाई संबंधों की कीमत पर राज्य संरचना का विकास आवश्यक हो गया था।

पेट्रिशिया का मानना था कि पुरातन युग की महाशक्तियों – बाइज़ेंटाइन और सासानिद ईरान के अतिक्रमणों के विरूद्ध अरब प्रतिक्रिया को उत्तेजित करने के लिए मुहम्मद द्वारा एकेश्वरवाद का उपयोग किया गया था। हालांकि, अवधारणा की दृष्टि से आर्थिक और सैन्य साम्राज्यवाद और अरब राष्ट्रवाद के बारे में उनके विचार में अन्तर्निहित दोष हैं। उन्होंने अज्ञात के दायरे में संभावना को रखा है। लेकिन इस समय पर अरब क्यों महत्वपूर्ण हो गये? क्या इतना सफल आन्दोलन केवल विजय पर आधारित हो सकता है? पेट्रिशिया ने स्रोतों के मनमाना चयन से अपने तर्कों को लैस किया। यदि कुरैश लोगों की अन्य कबीलों के साथ वाणिज्य पर किए गए समझौतों की प्रणाली को गढ़ी हुई बात के रूप में खारिज कर दिया जाय, तब कुरैशों द्वारा स्थापित प्रभुत्व और मुहम्मद द्वारा विरासत में प्राप्त प्रभुत्व का कारण बताना और अधिक कठिन हो जाएगा। चूंकि मक्का में प्राकृतिक संसाधनों की कमी थी, इसलिए अनाज और खजूर जैसे खाद्य पदार्थों का आयात करना पड़ता था। इन्हें खरीदने के लिए उनके पास आय के कुछ स्रोत तो होने चाहिए थे।

आर.बी. सार्जेन्ट ने पेट्रिशिया की पुस्तक की समीक्षा करते हुए कहा कि निस्संदेह कुरैश लोगों की वाणिज्यिक गतिविधि को पश्चिमी लेखकों द्वारा बढ़ा-चढ़ाकर बताया गया है। लेमेन्स और उनके सिद्धान्त के अनुयायियों का तर्क है कि मक्का निवासियों को विरासत में जो व्यापार मिला, वह उस परिमाण का था जिसका वर्णन प्लिनी और *पेरीप्लस* में किया गया था (क्लासिकल युग के व्यापार के प्रारूप को ध्यान में रखते हुए)। डब्ल्यू. ए. वॉट ने इस आधार पर अपने मत को विकसित किया। बहरहाल, यह कुरैश लोगों के वाणिज्य के अस्तित्व को नकारता नहीं है। क्रोन ने इस दलील पर भी सवाल उठाया है कि कुरैश लोगों ने व्यापार के लिए उत्तरी यमन तक नियमित यात्राएं कीं और वस्तुओं का व्यापार किया। वह तर्क देती हैं कि ऐसी वस्तु जो सीरिया और बाइज़ेंटाइन में बहुतायत में उपलब्ध थी, उसके आयात करने में इन देशों को क्यों दिलचस्पी होनी चाहिए। क्रोन ने इस बात पर जोर दिया है कि हमें अन्य कारकों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है, जैसे कि *विदेशी दुर्लभ वस्तुओं की माँग, कीमतों में उतार-चढ़ाव, या राजनैतिक क्रियाकलापों के चलते उत्पन्न होने वाले अभाव*। वह यह नहीं मानतीं कि समुद्री डकैती जैसी दुर्घटना/गतिविधियाँ किसी महत्वपूर्ण सीमा तक व्यापार को प्रभावित करतें हैं। इसके विपरीत मौसमी परिस्थितियां और अन्य कारक भी समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। हालांकि, ऐसा प्रतीत होता है कि क्रोन का इस विषय पर प्रतिपादन पूरी तरह से यांत्रिक है और इस तरह की घटना की संभावनाओं के लिए कोई गुंजाइश नहीं छोड़ता है। दिलचस्प बात यह है कि एक ओर वह कबीलाई भावनाओं के बारे में बात करती हैं और दूसरी ओर सशक्त अरब चेतना की उपस्थिति की, यह दोनों विरोधाभासी हैं।

हालाँकि पेट्रिशिया क्रोन के लेखन की कई लोगों ने आलोचना की है, पेट्रिशिया की 1987 की रचना और उससे पहले की 1977 में मीशेल कुक (*हेगरिज्म*) की प्रकाशित रचना अपनी उत्तेजक प्रस्तुति के साथ इस्लाम की उत्पत्ति के बारे में विद्वानों के बीच गहन चर्चा का माध्यम बनी।

13.4.3 संशोधनवादी मत

फ्रेड डोनर ने एडिनबर्ग विश्वविद्यालय में दिये गए अपने व्याख्यान में ('द स्टडी ऑफ इस्लाम्स ओरिजिन्स सिन्स डब्ल्यू मॉन्टगोमरी वॉट्स पब्लिकेशंस', नवम्बर 23, 2015, यूनिवर्सिटी ऑफ एडिनबर्ग) इस्लाम की उत्पत्ति के विषय पर किये जा रहे संशोधनवादी कृतियों का एक व्यापक सर्वेक्षण किया। इन प्रथम संशोधनवादी कृतियों के आने से प्रारंभिक इस्लाम का अध्ययन पूरी तरह से पुनर्जीवित हो गया। वह इंगित करते हैं कि 1970 के दशक में इसमें एक आयाम और जोड़ा गया जो पीटर ब्राउन की युगान्तरकारी पुस्तक *द वर्ल्ड ऑफ लेट एन्टीक्विटी* (1971) के साथ शुरू हुआ, वह था उत्तर प्राचीन कालीन अध्ययन। ब्राउन ने अपनी पुस्तक में प्रारंभिक इस्लामी इतिहास (उमय्यद और प्रारंभिक अब्बासिद के पतन तक) के परिशिष्ट के रूप में उत्तर प्राचीन काल पर एक अन्तिम अध्याय शामिल किया था। ब्राउन ने अपने अध्ययन में कई क्षेत्रों को संश्लेषित किया था जिनका अध्ययन मुख्य रूप से अभी तक पृथक-पृथक किया जाता था – उत्तर रोम (या प्रारंभिक बाइज़ेन्टाइन) का इतिहास, चर्च का इतिहास, विशेष रूप से पूर्वी चर्चों का इतिहास, सासानिद इतिहास का अध्ययन और प्रारंभिक इस्लामी इतिहास का अध्ययन। ब्राउन ने उत्तर-प्राचीन काल को समीपवर्ती पूर्व और भूमध्यसागर क्षेत्र में दूसरी से आठवीं शताब्दी सी ई तक बढ़ाने की परिकल्पना की, और इस अवधि को एक पतन की बजाए सबसे गतिशील सांस्कृतिक और सामाजिक सृजनशीलता की अवधि के रूप में चित्रित किया। ब्राउन द्वारा उत्तर-प्राचीन काल के ढाँचे में प्रारंभिक इस्लामिक इतिहास के समाकलन ने प्रारंभिक इस्लाम पर इतिहासकारों के दृष्टिकोण को व्यापक किया।

डोनर के अनुसार, इस अवधि के दस्तावेजी साक्ष्यों, प्रारंभिक इस्लामिक दौर के और बाइज़ेन्टाइन और सासानियन साम्राज्य के सिक्कों और मोहरों और पपायरस-प्रलेखन (Papyrology), के अध्ययन में नया उत्साह उत्पन्न हुआ है। सातवीं शताब्दी से मौजूद पपायरस पर ग्रीक, *कॉप्टीक और अरबी भाषाओं में* लिखी जाने वाली पांडुलिपियों की लम्बे समय से जानकारी थी, लेकिन कुछ अपवादों को छोड़कर इतिहासकारों द्वारा इनका अधिक उपयोग नहीं किया गया था। 1980 के दशक में और विशेष रूप से 21वीं शताब्दी के पहले दशक में कई विद्वानों ने अरबी पपायरस प्रलेखों **(पपायरोलॉजी)** के अध्ययन में सक्रिय रूप से काम करना शुरू किया।

प्रारंभिक इस्लामी युग के पुरातात्विक अध्ययनों में और भी महत्वपूर्ण प्रगति हुई। 1960 के दशक तक, अपेक्षाकृत रूप से कम ऐसे पुरातात्विक कार्य किए गए थे जो निकट पूर्व (Near East) में इस्लामिक काल पर केन्द्रित थे, और अधिकांशतः जो किया गया था, वह मुख्य रूप से इस्लामिक कला या प्रमुख स्थापत्य स्मारकों के जीर्णोद्धार से संबंधित थे। लेकिन 1970 के दशक के शुरू में विशेष रूप से सीरिया, जार्डन, इजराइल और तुर्की में व्यापक रूप से पुरातात्विक अन्वेषणों में तेजी से वृद्धि हुई (इनमें अक्सर एक मानव शास्त्रीय दृष्टिकोण मौजूद था)। ईरान, मिस्र, लेबनान और यमन में भी बहुत महत्वपूर्ण अनुसन्धान कार्य हुए। इन खोजों ने लेवांत (निकट पूर्व, भूमध्य सागर का पूर्वी भाग) के ऐतिहासिक विकास के बारें में, विशेष रूप से प्रारंभिक इस्लामी दौर संबंधित, गंभीर गलतफहमियों को सुधारने में मदद की। उदाहरण के लिए, पहले यह मान लिया गया था कि इस्लाम का उदय समृद्धि के व्यापक पतन के साथ-साथ हुआ था, लेकिन डोनाल्ड विटकॉम, एलन वाम्सली एवं अन्य के सूक्ष्म अध्ययनों से पता चलता है कि लेवांत के कई क्षेत्रों में सातवीं शताब्दी के दौरान और आठवीं शताब्दी में भी समृद्धि जारी रही थी। इस्लाम के उदय को हिंसक विनाश एवं अनिरन्तरता के एक प्रकरण के रूप में देखे जाने के बजाय, जैसा कि पीटर पेन्ट्ज़ ने कहा, यह एक 'अदृश्य विजय' की तरह प्रतीत होता है, क्योंकि लेवांत के अधिकांश स्थलों पर बाइज़ेन्टाइन से इस्लामिक शासन में परिवर्तन इतना धीरे-धीरे हुआ कि वह दृष्टिगोचर नहीं होता। यह ईसाई और इस्लामिक दोनों तरह के साहित्यिक स्रोतों से बनी तस्वीर के विपरीत है, कम से कम पुरातात्विक साक्ष्य की दृष्टि से ऐसा जाहिर होता है।

इन नये शोधों, नये साक्ष्यों, और लंबे समय से मान्य साहित्यिक साक्ष्यों की नयी व्याख्याओं के परिणामस्वरूप अनेक नई योजनाबद्ध शुरूआतें हुईं – यह सुनियोजित करने के लिए कि इस्लाम की उत्पत्ति की पूर्व सन्ध्या पर 'वास्तव में क्या सब हुआ था'। पारंपरिक प्रतिमान से दूर हटकर संशोधनवादी लेखन की एक लहर चल उठी। इन नवीन लेखनों द्वारा अनेक नवीन मतों का प्रतिपादन किया गया। इनमें से कुछ का दावा था कि इस्लाम ईसाई धर्म का ही एक रूप था; जबकि कुछ के द्वारा पैगम्बर मुहम्मद के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगाये गये। लेकिन यह सभी दृष्टिकोण स्रोतों और प्रमाणों द्वारा समर्थित नहीं हैं, और अनुमान-मात्र प्रतीत होते हैं। हम उनके विस्तार में नहीं जायेंगे क्योंकि ये पर्याप्त शोधों द्वारा अनुप्रमाणित नहीं हैं।

बोध प्रश्न-3

1) मक्का से संबंधित व्यापार सिद्धान्त के मुख्य बिन्दुओं को संक्षेप में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) इस्लाम की उत्पत्ति पर देशीय सिद्धान्तकारों के क्या तर्क हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3) इस्लाम की उत्पत्ति पर डोनर के दृष्टिकोण की चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

13.5 पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु के बाद इस्लाम का प्रसार

पैगम्बर मुहम्मद के निधन ने एक शून्य पैदा कर दिया। यह माना गया था कि मुहम्मद के बाद कोई अगला पैगम्बर नहीं होगा। लेकिन पैगम्बर केवल धार्मिक ही नहीं बल्कि राजनैतिक नेता भी थे। पैगम्बर के रूप में किसी के द्वारा वह पद नहीं संभालने को लेकर सामान्य स्वीकृति बनी। लेकिन किसी को तो राज्य का प्रभार लेना था, और धार्मिक समुदाय का मार्ग दर्शन करना था। चूंकि इस उद्देश्य के लिए कोई विशिष्ट नियम नहीं बनाये गये थे, इसलिए इस बात पर विवाद की काफी गुंजाइश थी। पैगम्बर के बाद धार्मिक और राजनीतिक सत्ता किसके पास होनी चाहिए, यह सवाल समय बीतने के साथ लगातार विवादास्पद होता जा रहा था, जिससे टकराव और अक्सर गहन सैद्धान्तिक मतभेद पैदा हुए।

पैगम्बर ने अपने उत्तराधिकारी की नियुक्ति क्यों नहीं की? सुन्नी परम्परा के अनुसार पैगम्बर जो सचेत गठबंधन और विवेकपूर्ण राजनीति में शामिल थे, उत्तराधिकार पर अव्यक्त हैं क्योंकि वे एकेश्वरवाद की सफलता चाहते थे जिस हेतु उन परम्परागत कबीलाई रिवाज़ों से जुड़े रहना जरूरी था जिनमें सत्ता परिवर्तन अविवादी घटना थी (न कि उपार्जित)। दूसरा कारण यह था कि संप्रदाय की संरचना इतनी कोमल थी कि पैगम्बर ने अपनी इच्छाओं को हावी करने की बात नहीं सोची। एक अन्य तथ्य माना जाता है कि उन्हें होनी का बोध था। हालांकि, निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है।

यद्यपि सुन्नी मान्यता है कि पैगम्बर ने उत्तराधिकारी नियुक्त किया था, और वह चाहते थे कि समुदाय को अबु बकर एकजुट रखें, जो सबसे पहले धर्मांतरण करने वालों में और सबसे वरिष्ठ थे, और इसलिए स्वाभाविक पसंद थे। लेकिन शिया मान्यता है कि पैगम्बर मुहम्मद ने अली को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया था। पैगम्बर के अंतिम समय में तीन समूह मौजूद थेः मक्का का कुरैश अभिजात्य वर्ग और मदीना के अंसार वे 'मददगार' जिन्होंने महत्वपूर्ण समर्थन प्रदान किया, और वह समूह जिन्होंने तर्क दिया कि उत्तराधिकार पैगम्बर के परिवार के भीतर से ही होना चाहिए।

काफी हद तक, 632 के बाद राजनैतिक सत्ता प्रमुख कुरैश परिवारों के हाथों में ही रही। पैगंबर के सबसे करीबी साथियों में एक, अबु बकर को *खलीफा* (पैगम्बर का उत्तराधिकारी) चुना गया। अगली कुछ शताब्दियों तक मुसलमानों के धार्मिक नेताओं और पैगम्बर मुहम्मद द्वारा स्थापित राज्य के प्रमुख के लिए खलीफा प्रमुख पदवी बन गई। जब अबु बकर ने पद-भार संभाला तो नव-गठित राज्य खतरे में था। कुछ बद्दू कबीले मदीना से टूट कर अलग हो गए थे, क्योंकि अरब क्षेत्र में एक स्थायी राज्य का अंग होने का विचार नया था। अन्य गंभीर मुद्दा यह था कि कुछ कबीलाई धर्मगुरूओं ने खुद को ही पैगम्बर घोषित कर दिया था। मक्का और मदीना के मुसलमानों ने इन नेताओं की नकली पैगम्बर के रूप में निंदा की। अबु बकर को इन कबीलों पर फिर से नियन्त्रण स्थापित करने के लिए कई अभियान संचालित करने पड़े। इन अभियानों को *रिद्दा* (स्वधर्म त्याग या अपनी धार्मिक निष्ठा से पलायन) कहा जाता है। पैगम्बर के निधन के बाद उनके द्वारा की गई सन्धियों को तोड़ देने के चलते, जो लड़ाइयाँ और झड़पें हुईं, उनके फलस्वरूप मुस्लिम सेनाएँ दो महान् शक्तियों – बाइज़ेंटाइन और सासानिद के आमने-सामने जा पहुँचीं। अबु बकर का निधन *खलीफा* बनने के दो साल के भीतर हो गया। उन्होंने उमर इब्न खत्ताब को अपने उत्तराधिकारी के रूप में नामित किया। उमर ने राज्य की सीमाओं का विस्तार करते हुए न केवल स्वयं को अरब क्षेत्र में सुदृढ़ किया बल्कि अरब क्षेत्र के बाहर इराक, सीरिया, फिलीस्तीन और मिस्र में भी बड़े पैमाने पर क्षेत्रीय विस्तार आरंभ किया। पश्चिम एशिया की विजय सासानिद और बाइज़ेंटाइन साम्राज्य की कीमत पर हुई थी।

इस्लाम के उदय होने से पहले अस्सी वर्षों से अधिक समय तक पश्चिम एशिया पर वर्चस्व स्थापित करने के लिए सासानिद और बाइज़ेंटाइन साम्राज्य भीषण युद्ध में लिप्त थे। सीरिया और मेसोपोटामिया युद्ध के मुख्य पक्ष थे, जो दोनों साम्राज्यों के बीच स्थित थे। लम्बे समय के इस टकराव ने दोनों साम्राज्यों को काफी कमजोर कर दिया। जब 633-34 में अरबों ने बाइज़ेंटाइन और सासानिद इलाकों पर चढ़ाई की तो दोनों शक्तियाँ पहले से ही सैन्य रूप से इतनी क्षीण हो चुकी थीं कि वे कोई बड़ा प्रतिरोध करने में असमर्थ थीं। 636 में कादीसीया की लड़ाई में ईरानी सेना पूरी तरह ध्वस्त हो गई। अगले वर्ष साद के नेतृत्व में अरब सेनाओं ने सासानिद राजधानी टेसिफोन पर कब्जा कर लिया। इसके साथ ही इराक में सासानिद शासन का अन्त हो गया और साद ने स्वयं को इराक में सैन्य और नागरिक प्रमुख के रूप में स्थापित किया। इसी तरह, सीरिया के दामिश्क शहर पर सबसे पहले 634 में आक्रमण किया गया और 635 में इस पर कब्जा कर लिया गया। इनकी पराजय ने सीरिया और फिलीस्तीन के अधिग्रहण का मार्ग प्रशस्त किया। इसमें खालिद बिन वालिद ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। 639 में मिस्र पर भी कब्जा कर लिया गया।

हालाँकि मुसलमान संख्या में कहीं कम थे, परंतु वे तीव्रगामी, फुर्तीले, अच्छी तरह से आपस में समन्वित और वे बहुत अधिक अभिप्रेरित थे। बाइज़ेंटाइन और सासानिद साम्राज्यों की प्रतिरक्षा क्षमता कमजोर थी। बाइज़ेंटाइन और सासानिद सेनाओं (छठी और प्रारंभिक सातवीं शताब्दियाँ) के लंबे-चौड़े घमासान युद्धों और लम्बी अवधि के अभियानों के विपरीत, सातवीं शताब्दी के मध्य की इस्लामी सामरिक विजय अपेक्षाकृत अल्पअवधि के आक्रमण, 'हल्ला बोल और काफूर' सेना के द्वारा किए गए थे। उन्होंने शायद ही कभी बड़ी घेराबन्दी की हो याकि उनमें बड़ी संख्या में लोग हताहत हुए हों। अनेक मामलों में हिंसा से बचने के लिए बाइज़ेंटाइन के स्थानीय कुलीन वर्ग ने गुप्त सौदेबाजी कर ली थी। इसके अलावा, जो ईसाई जनसंख्या थी – मिस्र में **कॉप्ट**, सीरिया में **मोनोफाइसाइट्**, इराक के **नस्तूरी (Nestorian)** लोगों का बाइज़ेंटाइन और सासानिद अधिपतियों के साथ एक लम्बा विवादी सम्बन्ध रहा था। उनका असंतोष वहां मायने रखता था, जहां ईसाई-अरब सीमाओं पर अवस्थित कबीले और सैन्य सहायक दल विजेताओं से जा मिले और जहाँ किले बन्द शहरों ने हथियार डाल दिये।

उनकी विजय विपक्षी सैन्य शक्तियों के कमज़ोर होने के कारण हुई थी और वे स्थापित हो पाये क्योंकि स्थानीय आबादी नये शासन को स्वीकार करने को तैयार थी। इसके अलावा, सामरिक विजय को अरब लोगों के भारी संख्या में स्थानांतरण के द्वारा भी पक्का किया गया था। बाइज़ेंटाइन और सासानिदों की हार के साथ ही बाशिंदों के बीच चली आ रही सीमाएँ टूट गईं और इसके परिणामस्वरूप अरब क्षेत्र से मध्य-पूर्व क्षेत्रों की ओर लोगों का वृहत पलायन हुआ। हालांकि, बाइज़ेंटाइन ने अपने सबसे समृद्ध और सबसे अधिक आबादी वाले प्रान्त – अनातोलिया और बाल्कन पर अपना नियन्त्रण कायम रखा, लेकिन सीरिया गंवा दिया। बाइज़ेंटाइन का अस्तित्व बचे रहने से अरबों को एक विवादास्पद और खतरनाक सीमा मिली और उनके विस्तार के रास्ते में एक स्थायी अवरोध बना रहा। इसके विपरीत सासानियों को पूरी तरह परास्त कर दिया गया था। कादीसीया की लड़ाई (636) के बाद पूरा इराक उनके हाथों में आ गया। सासानिद साम्राज्य के पतन के बाद, अरबों को ईरान में अनेकों कमजोर लेकिन पहाड़ों और रेगिस्तानों द्वारा संरक्षित दुर्गम रियासतों का सामना करना पड़ा। सासानियन साम्राज्य की उन अर्द्ध-स्वतन्त्र रियासतों को वश में करने में उन्हें लगभग एक दशक लग गया। आखिरकार 654 में खुरासान पर भी कब्जा कर लिया गया।

इतने सारे प्रान्तों के प्रशासन के उत्तरदायित्व के साथ ही विजित लोगों पर शासन व शोषण करने हेतु और अरब से आए प्रवासी लोगों को नियंत्रित करने की जिम्मेदारी नए *खलीफा* और अभिजात वर्ग के हिस्से आई। मदीना के लोगों ने दो बुनियादी सिद्धान्तों पर निर्णय लियाः बद्दुओं के द्वारा कृषक समाज को नुकसान पहुँचाने से रोका जाएगा और यह कि नया अभिजात्य वर्ग विजित आबादी के प्रमुखों और नामी व्यक्तियों के साथ सहयोग करेंगे। द्वितीय खलीफा उमर (634-644) के शासन काल में ये आवश्यक व्यवस्थाएं की गई थीं। उमर की पहली व्यवस्था ने अरब विजेताओं को एक सैन्य अभिजात्य वर्ग के रूप में रूपान्तरित कर दिया, जिन्होंने अधीन किए हुए क्षेत्रों में सेना की तैनाती की और आगे और अधिक क्षेत्रों का अधिग्रहण किया। बद्दुओं के द्वारा कृषि-भूमि को नष्ट करने से रोकने के लिए और विजित लोगों से अरबों को पृथक रखने के लिए, बद्दुओं को किलेबन्द सैन्य शहरों (**अमसार**) में बसाया गया था। तीन सबसे महत्वपूर्ण नये शहर इराक और मिस्र में स्थापित किये गये थे। बसरा, फारस की खाड़ी के मुहाने पर स्थित था और जो सामरिक दृष्टि से मदीना के साथ सीधा संपर्क बनाता था। कूफा उत्तरी इराक, मेसोपोटामिया और उत्तरी और पूर्वी ईरान की प्रशासनिक राजधानी बन गया। और मिस्र की नई राज़धानी फुस्तात जिसने उत्तरी अफ्रीका में अरब साम्राज्य विस्तार के मुख्यालय के रूप में काम किया। जब तक कि 670 में केरावान (ट्यूनीशिया में) राजधानी के रूप में आबाद न हो गया। अन्य प्रान्तों में उन्होंने आमतौर पर नये शहर स्थापित नहीं किये बल्कि वे मौजूदा शहरों, उपनगरों और बाहरी क्षेत्रों के गाँवों में ही बस गये थे।

अमसार ना केवल बद्दु अप्रवासियों के लिए निवास स्थल थे और सेना को संगठित करने का काम कर रहे थे, बल्कि लूट के सामान को वितरित करने में भी मददगार थे। सिद्धान्त रूप में, अरबों को अपने लिए भू-संपत्ति को जब्त करने की अनुमति नहीं थी। विजित क्षेत्र को सामुदायिक संपत्ति माना जाता था और इसलिए विजेताओं को राजस्व, न कि भूमि दी जा सकती थी। इस व्यवस्था ने विजित क्षेत्रों को लूटमार से सुरक्षित रखा और विजय से प्राप्त धन-दौलत को अधिक समानतापूर्वक वितरित होने दिया।

दूसरे, नीति यह थी कि विजित आबादी को जितना संभव हो उतना कम परेशान करना चाहिए। इसका नतीजा यह था कि अरबी मुसलमानों ने विजित प्रदेश के लोगों को इस्लाम में परिवर्तित करने का प्रयास नहीं किया। पैगम्बर ने अरब क्षेत्र में यहूदी और ईसाईयों को अपना धर्म बनाए रखने की अनुमति देने की मिसाल कायम की थी, अगर वे शुल्क देने के लिए सहमत थे। खलीफाओं ने मध्यपूर्व के यहूदियों, जरथुष्ट्रों, जिन्हें वे संरक्षित लोग

(*ज़िम्मी*), और 'पवित्र पुस्तक के लोग' (*अहल-ए किताब*) कहते थे, इनको भी इन विशेष अधिकारों का लाभ दिया गया।

जिस तरह अरबों को धार्मिक परिस्थिति को बदलनें में कोई दिलचस्पी नहीं थी, उसी तरह उन्हें सामाजिक और प्रशासनिक व्यवस्था में भी कोई विध्न डालने की इच्छा नहीं थी। खलीफाओं ने शुल्कों और करों को एकत्र करने की निगरानी करने, करों का वेतन के रूप में भुगतान करने तथा नमाज़ में मुसलमानों का नेतृत्व करने के लिए गवर्नरों को भेजा था, लेकिन स्थानीय व्यवस्था काफी हद तक स्थानीय लोगों के हाथों में ही छोड़ दी गई थी। व्यवहारिक रूप से अरब और स्थानीय कुलीन वर्ग के बीच के संबंध क्षेत्र दर क्षेत्र भिन्न थे और अरब विजय की परिस्थितियों और मौजूद सामाजिक और प्रशासनिक ढाँचे के अनुसार भिन्न-भिन्न थे।

अरबों ने प्रत्येक प्रान्त में, पहले से चली आ रही करों की प्रणाली को मान लिया। इराक में, उन्होंने भू-कर (*खराज*) और *जिजिया* (poll tax) दोनों को वसूलने की सासानियन व्यवस्था को अपनाया। भूमि की माप की गई और उत्पादकता, उत्पाद का मूल्य, सिंचाई और परिवहन आदि के खर्च को ध्यान में रखते हुए कर लगाया गया। इसके अतिरिक्त, सभी से *जिज़िया* के भुगतान की अपेक्षा थी।

संक्षेप में अरब विजय ने अतीत में बसे आबाद प्रदेशों पर खानाबदोश कबीलों की विजय के परिचित उदाहरण का अनुपालन किया। विजेता सैन्य अभिजात वर्ग बन गए और उनकी आजीविका के लिए स्थाई समाजों का शोषण किया गया। यह शासकीय व्यवस्था विजेता समुदाय के आभिजात्य वर्ग और उनके द्वारा विजित या स्थाई आबादी के बीच एक समझौता था।

उमर 644 में मारे गये। उन्होंने अपने बाद उत्तराधिकारी नामित करने के लिए छः चयनकर्ताओं की परिषद् का गठन किया था। उस्मान तीसरे *खलीफा* (644-656) बने। उस्मान मुहाजिर[1] थे, लेकिन उमय्यद कुल के थे। इससे हाशिमियों में काफी आक्रोश उत्पन्न हुआ। उस्मान ने सभी प्रमुख अधिकारिक पद उमय्यद कुल के लोगों को देकर स्वयं को अलोकप्रिय बना लिया। हालाँकि ईरान की विजय उस्मान के नेतृत्व में पूरी हुई थी लेकिन विस्तार की प्रारंभिक गति 650 के बाद धीमी होती गई। इससे असंतोष और बढ़ता गया। दक्षिणी इराक और मिस्र के कुछ स्थल प्रतिरोध (*तौखलीफ*) के केन्द्र बन गए। मिस्र की फौज में विद्रोह हुआ, और इस अराजकता के बीच, 656 में उस्मान की हत्या कर दी गई।

तथापि, उस्मान के बाद उत्तराधिकार के सवाल पर हिंसक संघर्ष हुआ। यह संघर्ष प्रथम *फितना* अथवा गृह युद्ध कहलाता है। मदीना में, अली के समर्थकों ने मिस्त्र के विद्रोहियों के साथ हाथ मिलाया और अली को अगला *खलीफा* घोषित कर दिया गया। यह उमय्यदों को स्वीकार नहीं था। एक और गुट जुबैर के नेतृत्व में था जिसने इस समझौते का विरोध किया। ज़ुबैर पैगम्बर मुहम्मद के सहयोगी रह चुके थे और उन्हें पैगम्बर की पत्नी आयशा का भी समर्थन मिला। हालाँकि सबसे गंभीर चुनौती सीरिया के गवर्नर और उमय्यद वंशी उस्मान के चचेरे भाई मुआविया की थी। उसके पास सीरिया में एक मजबूत आधार था और उसने अली के खिलाफ विद्रोह कर दिया और अली के प्रति निष्ठा-अभिव्यक्ति की माँग को नकार दिया और उस्मान की हत्या का बदला लेने के लिए आह्वान किया। सीरिया को छोड़कर अन्य सभी क्षेत्रों ने अली को खलीफा के रूप में स्वीकार कर लिया। मुआविया के इंकार के फलस्वरूप उत्तरी मेसोपोटामिया में सिफिन (657) की लड़ाई हुई। लड़ाई अनिर्णायक रही और युद्ध के दोनों पक्ष मध्यस्थता के लिए सहमत हो गये। कुछ भी ठोस

1 वे लोग जो 622 में पैगम्बर मुहम्मद के साथ मक्का से मदीना के लिए उत्प्रवास किया था।

निर्णय नहीं निकल सका। मुआविया सीरिया का वास्तविक शासक बना रहा। अली ने वहां से शेष साम्राज्य पर शासन किया और अपनी राजधानी कूफा स्थानांतरित कर दी (मदीना सत्ता केन्द्र के नज़रिए से अब एक बहुत संकटशील चुनाव था, इसके अलावा कूफा में बड़ी संख्या में अली के अनुयायी थे)।

आखिरकार, गृहयुद्ध अथवा *फितना* ने मुस्लिम समुदाय के भीतर स्थायी विभाजन पैदा कर दिया। सिफिन का युद्ध प्रथम प्रमुख साम्प्रदायिक विभाजन का कारण बना। मुसलमान समाज इस बात को लेकर विभाजित था कि *खलीफा* की गद्दी पर पदस्थ होने का वैध अधिकार किसके पास था। वे मुसलमान जो मुआविया के उत्तराधिकार और उसके बाद *खलीफा* के ऐतिहासिक अनुक्रम को स्वीकार करते थे; और दूसरे वे जो यह मानते थे कि अली एकमात्र वैध *खलीफा* थे और पैगम्बर के परिवार से सम्बन्ध रखने के कारण अली का नेतृत्व दिव्य सम्पन्न था और वे ऐसे सच्चे उत्तराधिकारी थे जो कोई भी गलती नहीं कर सकते थे, और इसलिए केवल उन्हें और उनके वंशजों को उत्तराधिकारी होना चाहिए था। मुआविया और अली के बीच इनके अलावा एक और विलगित समूह था जो मध्यस्थता के विरोध में था। उनकी राय में अली का आचरण उमय्यदों के साथ एक समझौता की तरह था और इसलिए अब वह मुस्लिम समुदाय का नेता नहीं हो सकते थे। इस चरमपंथी रूख को अपनाने वालों को *खारजी* कहा गया। उनकी यह राय थी कि *खलीफा* का पद वंश द्वारा निर्धारित किया जाना चाहिए, लेकिन *खलीफा* को व्यापक मुस्लिम समुदाय के द्वारा चुना जाना चाहिए और तभी तक उन्हें इस पद पर बने रहना चाहिए जब तक कि वह उस पद के संचालन में निष्पाप बने रहें। अपना पक्ष रखते हुए वे अली से अलग हो गये। इन तीनों समूहों ने इस्लाम के प्रति अपनी अलग-अलग दृष्टि विकसित की। इसके चलते मुस्लिमों के प्रमुख मतों – सुन्नी और शिया का सूत्रपात हुआ। इसके विषय में आप **इकाई 15** में पढ़ेंगे। अन्ततः एक *खारजी* ने 661 में अली की हत्या कर दी और खलीफा का पद उमय्यद वंश के हाथ में चला गया।

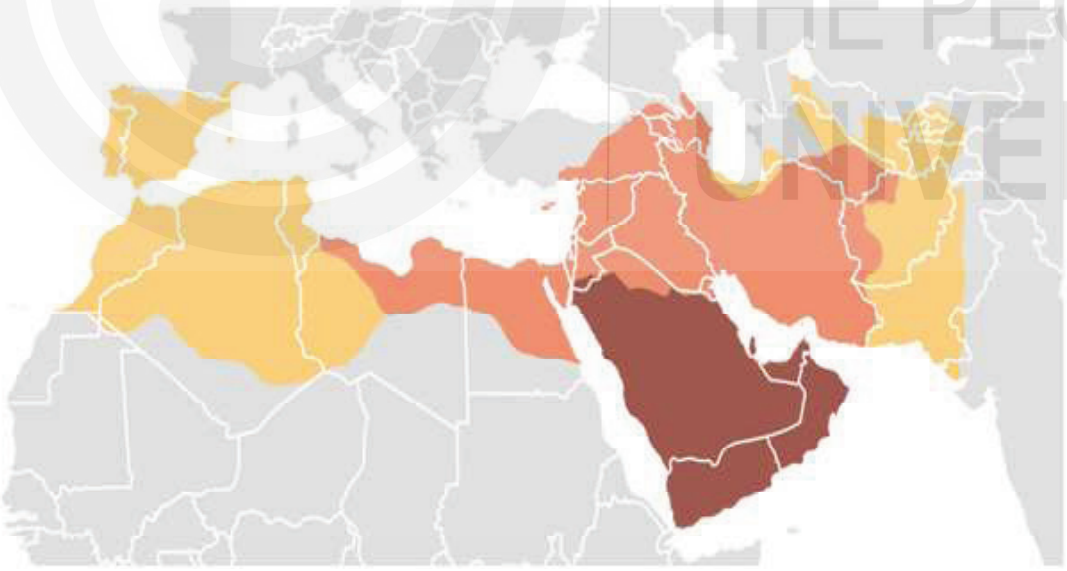

मानचित्र 13.1: इस्लाम का विस्तार

लेखक: दीब्यूशे, जुलाई, 2010

स्रोत: http://guides.library.iit.edu/content.php?pid=27903&sid=322018 (via Image:Age_of_Caliphs.png);
https://en.wikipedia.org/wiki/Spread_of_Islam#/media/File:Map_of_expansion_of_Caliphate.svg

13.6 इस्लाम और पश्चिम : धर्मयुद्ध

635-645 की अरबों की विजय के साथ इस्लाम ने ईसाई पश्चिम में प्रवेश किया। हमने देखा है कि कैसे अरबों ने बाइज़ेंटाइन और ईरान को अधीनस्थ किया था। बाइज़ेंटाइन अपने बेशकीमती क्षेत्रों – सीरिया, मिस्र, फिलीस्तीन और अन्त में 698 में उत्तरी अफ्रीका (मगरिब) तक को अरबों के हाथों हार गये। इससे ग्रीक-भाषी बाइज़ेंटाइन निवासियों को अनातोलिया (तुर्की) में प्रवासन के लिए मजबूर होना पड़ा। आइबेरियन प्रायद्वीप की ओर, मुस्लिम सेनाओं ने कोरडोवा पर कब्जा कर लिया, पिरेनीस पर्वत को पार कर लिया और गॉल प्रदेश (दक्षिण फ्रांस) में अन्दर तक घुसते हुए बोरदो तक जा पहुँचीं। हालांकि, 731 में अरबों को तुलूज़ में हार मिली और अगले साल (732) में उनकों प्वातिएर (टूर्स) की ऐतिहासिक लड़ाई में चार्ल्स मार्टल द हैमर के हाथों करारी हार का सामना करना पड़ा। बाइज़ेंटाइन की 'ईसाई' राजधानी कॉन्सटेन्टीनोपल को परास्त करने के लिए अरबों के प्रयास निरंतर जारी रहे।

अब्बासिदों ने (विस्तृत विवरण के लिए **इकाई 14** देखें) बाइज़ेंटाइन के खिलाफ युद्धों को अपने 'धार्मिक कर्त्तव्य' के रूप में परिकल्पित किया, और उन्हें 'आततायी' पुकारा और उनके विरूद्ध युद्ध को जिहाद का नाम दिया। इस सम्बन्ध में 1071 में बाइज़ेंटाइन को गंभीर चुनौती का सामना करना पड़ा था, जब सेलजुक सेनानायक अल्प अरसलान ने मन्ज़ीकर्ट (पूर्वी तुर्की) में बाइज़ेंटाइन सेनाओं को बुरी तरह से पराजित किया और बाइज़ेंटाइन सम्राट रोमानास चर्तुथ को अपना कैदी बना लिया। इस घटना ने ग्रीक आबादी को अनातोलिया से और भी आगे बाल्कन की ओर प्रवास करने के लिए मजबूर कर दिया। इन गतिविधियों ने ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में स्पेन/आइबेरियन प्रायद्वीप में *रीकॉनक्विस्टा* (*reconquista*: पुनर्विजय आंदोलन) को जन्म दिया। इसके परिणामस्वरूप क्रमिक रूप से ईसाई सेनाओं को तोलदो (1085) और सिसली (1095) में विजय मिलीं। बाइज़ेंटाइन सम्राट अलेक्सियस प्रथम (शासन 1081-1118) ने 1071 की भयंकर हार के बाद अपने ईसाई बिरादरी से अपील की। अलेक्सियस प्रथम की अपील पर पोप अर्बन द्वितीय ने त्वरित प्रतिक्रिया दिखाई और 1095 में दक्षिण फ्रांस के क्लेमोन्ट की परिषद में 'सारासेनों' के खिलाफ 'पवित्र युद्ध' (Holy war) की घोषण की। इस प्रकार 1095 में पहला धर्मयुद्ध (Crusade) शुरू हुआ। इस युद्ध का नारा था 'पवित्र भूमि, ईसा मसीह की भूमि और ईसाई धर्म के धर्म-प्रचारकों की पुनर्विजय' हो (नीश 2017 : 345)। धर्मयुद्धों की अगली लहर 1099 में शुरू हुई जो काफी हद तक सांमतों (Barons) वाले धर्मयुद्ध थे। धर्मयुद्ध की सेनाओं ने अनातोलिया, ऐंड़ेसा सहित सीरिया, एन्टीओक और त्रिपोली पर कब्जा कर लिया और 1099 में जेरूसलम को लूट लिया।

हालाँकि, सेलजुक *अमीर* ज़ेन्गी, जो मोसुल का शासक था, उसने फ्रेंको से ऐंड़ेसा को 1144 में हथिया लिया। ज़ेन्गी के बेटे नूर अल-दीन ने सीरिया और फिलिस्तीन में ईसाई धर्म-योद्धाओं के कई गढ़ों पर कब्जा कर लिया। इन विजयों ने पोप यूजेनियस तृतीय को यूरोप के कुलीन वर्ग को 'पूर्वी चर्च की रक्षा के लिए' आह्वान करने के लिए बाध्य किया। इस प्रकार दूसरा धर्मयुद्ध शुरू हुआ, जो 1146 से 1148 तक चला। 1174 में नूर अल-दीन की मृत्यु के बाद *जिहादी* सेनाओं की कमान मिस्र में उनके प्रतिनिधि सलाह अल-दीन ने संभाली। उसने उत्तर फिलिस्तीन में हातिन (1187) की लड़ाई में धर्म-योद्धाओं की सेनाओं को बुरी तरह पराजित किया और जेरूसलम पर कब्जा कर लिया।

एक बार फिर पोप ने तीसरे धर्मयूद्ध (1189-1192) के लिए आह्वान किया। 1193 में सलाह अल-दीन की मृत्यु के बाद भी पूरी 13वीं शताब्दी में *जिहाद* जारी रहा। साहसी मामलुक सेनापति बेबर्स (मृत्यु 1277) धर्म-योद्धाओं को लेवांत से पीछे धकेलने में सफल रहे। इसके बाद कई धर्मयुद्ध हुएः दो का नेतृत्व फ्रांसीसी राजा लुई IX ने किया, जिन्हें संत लुईस (1214-1270) की उपधि से विभूषित किया गया।

उस्मान के तत्वाधान में ऑटोमन साम्राज्य की स्थापना के साथ, जेरूसलम को कब्ज़े में करने का धर्म-योद्धाओं का सपना लगभग असंभव हो गया। झड़पों की श्रृंखला चलती रही। ऑटोमन सुल्तान मुराद ने कोसोवो फील्ड (1389) की लड़ाई में सर्बिया की सेना को हराया; 1389 में ऑटोमन सुल्तान बयाज़िद प्रथम ने हंगरी, फ्रांसीसी और जर्मेनिक धर्म-योद्धाओं को निकोपोलिस (हंगरी) की लड़ाई में हराया। ऑटोमन शासक मेहमेद द्वितीय (शासन 1444-1446; 1451-1481) ने 1453 में अन्ततः अन्तिम बाइज़ेंटाइन गढ़ कॉन्सटेंटीनोपल पर कब्जा कर लिया। इस प्रकार धर्म-योद्धाओं की जेरूसलम पर कब्जा करने की सभी आशाओं पर पानी फिर गया।

लेकिन, पश्चिमी देशों के साथ इस्लामिक पारस्परिक संबंधों के गहरे सांस्कृतिक प्रभाव पड़े। उस समय अरब-इस्लाम पश्चिम के लिए विचारों का स्रोत था। यूरोपीय चिकित्सा विज्ञान पर रहाज़ेस और एविसीना, (इब्न सीना) का लंबे समय तक प्रभाव रहा। पश्चिम ने अरबों से खगोल विज्ञान, गणित, रसायन विज्ञान और दृग्विद्या (optics) सीखी। ग्रीक ग्रंथों के अरबी अनुवादों ने ग्रीक ज्ञान को पश्चिम में उपलब्ध कराया। अरस्तु के ग्रंथों का इब्न रूश्द (जिसे यूरोपीयों ने एवेरोस के नाम से जाना; 1126-1198) द्वारा किए गए अरबी अनुवाद को यूरोपीय विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जाता था। शून्य (zero) का ज्ञान और कागज बनाने की तकनीक भी पश्चिम ने अरबों के माध्यम से सीखी, जिसे अरबों ने क्रमशः भारत और चीन से प्राप्त किया।

बोध प्रश्न-4

1) पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु के बाद उठे उत्तराधिकार के विवाद पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) खलीफा उमर के तहत इस्लामी क्षेत्रों के विस्तार पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) मुस्लिम सेनाएँ अपने बाइज़ेंटाइन और सासानिद प्रतिद्वन्द्वियों पर इतनी सफल क्यों हुईं?

.....

.....

.....

.....

.....

4) धर्मयुद्ध क्या थे? वे क्यों लड़े गये थे?

.....

.....

.....

.....

.....

13.7 सारांश

अरब प्रायद्वीप में इस्लाम का उदय एक प्रमुख घटना थी जिसने ना केवल प्रायद्वीप को हिला दिया, बल्कि इसके समस्त विश्व पर दूरगामी प्रभाव पड़े। यह पैगम्बर मुहम्मद थे, जिन्होंने अरब प्रायद्वीप के बिखरे हुए कबीलों को एक राज्य के रूप में इकट्ठा किया। हालाँकि इस्लाम का उदय प्रायद्वीप में हो रहे बहुत गहरे सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों का परिणाम था। व्यापार केन्द्र के रूप में अरब प्रायद्वीप की लाभप्रद स्थिति, बाइज़ेंटाइन और सासानिद साम्राज्य के मिलन बिंदु पर स्थित होने से और लाल सागर और फारस की खाड़ी और भू-मध्य सागर के माध्यम से नीचे दक्षिण में हिन्द महासागर के नेटवर्क से जुड़े होने के कारण इसने आर्थिक शक्ति और श्रेष्ठता प्राप्त की। हालाँकि देशीय मत के प्रणेता विद्वान इस पर बल देते हैं कि पैगम्बर की सफलता 'व्यापार में बढ़ती समृद्धि' की तुलना में कबीलों को एकजुट करने में अधिक थी। पैगम्बर की मृत्यु के बाद अबु बकर और उस्मान ने काफी हद तक इस्लाम की सीमाओं के विस्तार और सुदृढ़ीकरण पर ध्यान केन्द्रित किया। वह ऐसा सफलतापूर्वक इसलिए कर पाये क्योंकि उन्होंने स्थानीय सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था में अधिक व्यवधान ना डालने की अहस्तक्षेप की नीति का अनुसरण किया था। और न ही उन्होंने स्थानीय आबादी (यहूदी और ईसाई) के इस्लाम में धर्मांतरण पर बल दिया था। उस्मान के शासन काल में और अधिक सुदृढ़ीकरण हुआ और प्रशासनिक मसलों को सुलझाया गया। लेकिन उनका रवैया अपने उमय्यद कुल के प्रति पक्षपातपूर्ण था, और उन्होंने प्रमुख पदों पर अपने कुल के लोगों को नियुक्त किया जिसने असंतोष को बढ़ावा दिया। लेकिन अली के काल में इस्लाम में मतभेद मुखर हो गये और मुसलमान दो प्रमुख समूहों – सुन्नी और शिया और तीसरा जो अधिक कट्टरपंथी था – *खारिजी* में विभाजित हो गये, जो अन्ततः अली, जो चौथे पवित्र *खलीफा* थे, जिसके बारे में हम **इकाई 15** में जानेंगे, की हत्या के लिए जिम्मेदार थे।

13.8 शब्दावली

कॉप्टिक : ग्रीक भाषा में इस शब्द का अर्थ मिस्र के लोगों से है। यह काफी हद तक मिस्र के ईसाईयों को दर्शाता है। कॉप्टिक काल (चौथी से नौवीं शताब्दी सी ई) के दौरान बड़े पैमाने पर मिस्र की आबादी ईसाई थी।

ईसनाद/ सनद : *हदीस* का संचरण की श्रृंखला के माध्यम से प्रमाणीकरण (अनगिनत संख्या में वर्णन करने वाले; *हदीस* के विद्वान)।

मोनोफाइसाइट्स : उनका मानना था कि यीशु के पास एक ही 'स्वरूप' (दिव्य या मानवीय और दिव्य का संश्लेषण) था,

इसके विपरीत डायोफाइसाइट्स का यकीन था कि ईसा मसीह के दो 'स्वरूप' थे – एक दिव्य और दूसरा मानवीय। मोनोफाइसाइट्स को पूर्वी रोमन साम्राज्य के ईसाईयों के रूप में संदर्भित किया गया था जिन्होंने 451 सी ई में चालसीडॉन की परिषद् को अस्वीकृत कर दिया था।

नस्तूरी (Nesterian) : वे पूर्व की चर्च के ईसाई हैं, सीरियाक चर्च, जिसे ईरानी चर्च भी कहा जाता है। इसकी स्थापना 410 सी ई में हुई थी। एफेसस की परिषद् ने नेस्टोरियस (386-451) की निंदा की थी, जिसका नतीजा नेस्टोरियन मतभेद के रूप में हुआ। इसके पश्चात् नेस्टोरियस के समर्थक प्रवास करके सासानियन ईरान में चले गये। नेस्टोरियनवाद ने यीशू के दिव्य और मानवीय स्वरूपों पर बल दिया।

पपायरोलॉजी – पपायरस प्रलेख: पपायरस (भोज पत्र) पर लिखे गये दस्तावेज

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 13.2 देखें

2) भाग 13.2 देखें

3) भाग 13.2 देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 13.3 देखें

2) भाग 13.3 देखें

3) भाग 13.3 देखें

बोध प्रश्न-3

1) उप-भाग 13.4.1 देखें

2) उप-भाग 13.4.2 देखें

3) उप-भाग 13.4.3 देखें

बोध प्रश्न-4

1) भाग 13.5 देखें

2) भाग 13.5 देखें

3) भाग 13.5 देखें

4) भाग 13.6 देखें

13.10 संदर्भ ग्रन्थ

क्रोन, पेट्रिशिया, (1987) *मैक्कन ट्रेड़ एन्ड द राइज ऑफ इस्लाम* (प्रिसंटनः प्रिसंटन यूनिवर्सिटी प्रेस).

डोनर, फ्रेड, (2011) 'मार्डन एप्रोचेस टू अर्ली इस्लामिक हिस्ट्री' *द न्यू केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इस्लामः द फॉरमेशन ऑफ द इस्लामिक वर्ल्डः सिक्स्थ टू इलेवन्थ सेन्चुरीज़* (केम्ब्रिजः केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस), भाग 1, अध्याय 15, पृ. 625-647.

डोनर, फ्रेड, (2015) 'द स्टडी ऑफ इस्लाम्स ओरिजिंस सिन्स डब्ल्यू. मॉन्टगोमरी वाटॅस पब्लिकेशन्स', प्रेज़ेन्टड शुक्रवार, नवम्बर 23, द यूनिवर्सिटी ऑफ एडिनबर्ग.

फारूकी, अमर, (2012) *अर्ली सोशल फॉरमेशन्स* (नई दिल्लीः मानक पब्लिकेशन्स).

हॉगसन, मार्शल जी.एस., (1961) *द वेन्चर ऑफ इस्लाम, कान्शन्स एन्ड हिस्ट्री इन ए वर्ल्ड सिविलाइज़ेशन,* भाग 1, *द कलासिकल ऐज ऑफ इस्लाम* (शिकागोः शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस).

हूरानी, एलबर्ट, (2010) *ए हिस्ट्री ऑफ द अरब पीपुल्स* (हॉरवर्ड : बेल्कनेप प्रेस ऑफ हॉरवर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

किस्टर, एम. जे., (1986) 'मक्का एन्ड द ट्राइब्स ऑफ अरेबियाः सम नोट्स ऑन देअर रिलेशन्स', मोशे शेरॉन, संपा., *स्टडीज इन इस्लामिक हिस्ट्री एन्ड सिविलाइज़ेशन इन ऑनर ऑफ प्रो. डेविड अयालॉन* (जेरूसलम एवं लाइडनः ई. जे. ब्रिल), पृ. 33-37.

नीश, अलेक्जेंडर, (2017) *इस्लाम इन हिस्ट्रारिकल पर्सपेक्टिव,* द्वितीय संस्करण (न्यूयार्कः रूटलेज).

लेपिडस, इरा एम., (2002) *ए हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक सोसाइटीज* (केम्ब्रिजः केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस), द्वितीय संस्करण.

वॉट, डब्ल्यू. मान्टगोमरी एवं एम. वी. मेकडोनाल्ड, (1988) *द हिस्ट्री ऑफ अल-तबरी,* भाग VI, *मुहम्मद एट मक्का* (अलबेनीः स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयार्क प्रेस).

सरजेन्ट, आर. बी., (1990) 'मेक्कन ट्रेड एन्ड द राइज ऑफ इस्लामः मिसकन्सेप्शन्स एन्ड फ्लॉड पॉलीमिक्स' (रिव्यू आर्टिकल आन् पेट्रिशिया क्रोन्स वर्क), *जर्नल ऑफ द अमेरिकन ओरियन्टल सोसाइटी,* भाग 110, पृ. 472-486.

13.11 शैक्षणिक वीडियो

द बर्थ ऑफ इस्लामः मुहम्मद, द प्रीचर
https://www.youtube.com/watch?v=MU1tHggYR6k

राइज़ ऑफ इस्लाम
https://www.youtube.com/watch?v=Uvq59FPgx88

इकाई 14 खिलाफत : उमय्यद और अब्बासिद*

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 उमय्यद खिलाफत : सूफयानिद काल

14.3 उमय्यद खिलाफत : मारवानिद काल

14.4 बाद के उमय्यद

14.5 उमय्यदों का सौंदर्य शास्त्र और भौतिक संस्कृति

14.5.1 दरबार संस्कृति

14.5.2 महल और मस्जिदें

14.6 उमय्यदों की अर्थव्यवस्था : राज्य, व्यापार और सिंचाई

14.6.1 स्थायी खेती

14.6.2 उमय्यद व्यापार, नगरीकरण और *सुक्क* (बाज़ार)

14.7 उमय्यद सुल्तान और प्रांत (*विलायत*)

14.8 उमय्यद वंश का पतन

14.9 अब्बासी खिलाफत : अब्बास और मंसूर

14.10 अब्बासी खिलाफत : हारुन और अल-मामून

14.11 बाद के अब्बासी खलीफा

14.12 अब्बासी खिलाफत : सिंचाई, कृषक तथा राजकीय भूमि

14.12.1 सिंचाई

14.12.2 अब्बासी खिलाफत के समय के प्रमुख विद्रोह

14.12.3 अब्बासियों के समय में राजकीय भूमि का स्वरूप

14.12.4 अब्बासियों के समय में मिस्र में ठेके पर कृषि की व्यवस्था

14.13 अब्बासी काल में कर और *दीवान*

14.14 सारांश

14.15 शब्दावली

14.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.17 संदर्भ ग्रंथ

14.18 शैक्षणिक वीडियो

* डॉ. शाकिर-उल हसन, डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

14.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम उमय्यद और अब्बासी खिलाफत के बारे में पढ़ेंगे, जिनकी स्थापना क्रमशः मुआविया प्रथम और अब्बास अस-सफ्फाह ने की थी। खलीफा अबू बकर और उमर के विजय अभियानों को उमय्यदों ने जारी रखा। भौगोलिक दृष्टि से वह सबसे बड़ा साम्राज्य था। लेकिन खिलाफत में उमय्यदों के शासन काल में वंशानुगत उत्तराधिकार की प्रवृत्ति आ गई। उमय्यद इस्लामी खिलाफत की राजधानी दमिश्क ले गए। 750 सी ई में अब्बासिदों ने उमय्यद वंश का तख्ता पलट दिया, और उन्होंने अपना शासन बगदाद से चलाया। अब्बासी खिलाफत पर ईरानी राजनीतिक तंत्र की परंपराओं, ईरानी अभिजात्य वर्ग और बाद में तुर्की सेना का प्रभुत्व रहा। *वजीर, दीवान* और *इक्ता* जैसी संस्थाओं का विकास अब्बासिदों के ही जमाने में हुआ। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- उन परिस्थितियों का विवेचन कर सकेंगे जिन्होंने उमय्यद खिलाफत के एकीकरण को संभव बनाया,
- उमय्यद और अब्बासी खिलाफत (7वीं से 10वीं सी ई के बीच) के जटिल कर-ढांचे को समझ सकेंगे,
- राजकीय भूमि के विकास, भू-स्वामित्व और इस्लाम के केंद्रीय क्षेत्र में कृषि के प्रसार की व्याख्या कर पायेंगे,
- उमय्यदों के पतन के कारणों की पहचान कर सकेंगे,
- उमय्यदों की कला और स्थापत्य को समझ सकेंगे, और
- अब्बासी साम्राज्य के अधीन खिलाफत की प्रकृति में आये बदलाव की चर्चा कर सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

जिस समय कूफा में खलीफा अली की हत्या की गई, उस समय मुआविया प्रथम सीरिया का गवर्नर था। अपने विरोधियों के साथ सन्धि स्थापित कर और अवसरवादी स्थानीय शासकों के समर्थन तथा इराक के कुलीन तबके (*अशराफ*) को प्रसन्न कर 661 सी ई में वह खलीफा बनने में सफल रहा। अपने प्रशासन में उमय्यद काफी हद तक तत्कालीन बाइज़ेंटाइन परंपराओं पर निर्भर थे, इसलिए प्रमुख सीरियाई ईसाई भी उनकी प्रशासनिक संस्थाओं में शामिल किए गए। उमय्यदों ने नई सिंचाई की तकनीक द्वारा भूमि के पुनः अर्जन और उसके विस्तार की नई संभावनाएं पैदा कीं। मारवानिद उमय्यद खिलाफत काल में तीन बदलाव सामने आएः (1) सुदूर पूर्व में सिंध तक और पश्चिम में आइबेरियन प्रायद्वीप के पार तक बड़े पैमाने पर विजय अभियान, (2) *दीवान* प्रथा और सिक्कों का अरबीकरण, तथा (3) नौकरशाही तथा प्रशासन का केंद्रीकरण। उमय्यद शासन इस्लाम के प्रति अपनी निष्ठा के कारण टिका रहा, लेकिन साथ ही उसने अरब कबीलों के गठजोड़ का भी सम्मान किया। इसी के साथ किसानों और व्यापारियों से कर के जरिए विशाल राजस्व उगाहने के अपने कौशल के कारण वे खूब फले-फूले। खुरासान के एक मुस्लिम गवर्नर ने एक बार जोर देकर कहा था, 'मुसलमानों की ताकत *खराज* (भूमिकर) में मौजूद है'।

अब्बासिद साम्राज्यवादी राजवंश ने अपना शासन बगदाद से चलाया, अब्बासिद प्रशासन अत्यंत केंद्रीकृत और जटिल हो गया और राजकीय कार्यालयों में ईरानी कुलीनों की भरमार हो गई। अब्बासिद प्रशासन में आश्रय और संरक्षण की प्रमुखता थी। अब्बासिदों ने, पहले खुरासानियों और बाद में तुर्कियों को संरक्षण दिया और ईरानी *दिहकानों* (किसानों) को भी उनमें शामिल किया। *वजीरों* के पद पर ईरानी बरमाकिद परिवार के सदस्यों का वर्चस्व था।

इसीलिये इरा लैपिडस टिप्पणी करती हैं कि अब्बासी शासन काल में क्षेत्रीय और स्थानीय ताकतों को संरक्षण देना अब्बासिदों के लिए जरूरी था क्योंकि, 'हर समुदाय के प्रमुख व्यक्ति उनके मुखिया, भूस्वामी और धनाढ्य एवं समर्थ लोग ही थे, जिनका समाज में रुतबा था, वे विशिष्ट रूप से प्रांतीय और केंद्रीय प्रशासन में पदासीन ताकतवर लोगों से जुड़े हुए थे और उनका संरक्षण प्राप्त करते थे। सरकारी संगठन, सरकारी सूचना और कर वसूली का पूरा ढांचा अपनी प्रकृति में नौकरशाही था, लेकिन जिस सामाजिक तंत्र की सहायता से यह सांगठनिक ढांचा काम करता था, वह केंद्रीय अफसरों और प्रांतीय अभिजात्यों के संपर्कों के आधार पर ही कायम था।'

पाठ्यक्रम की यह इकाई मुआविया प्रथम के अधीन इस्लामी खिलाफत की बदलती तस्वीर को रेखांकित करती है, विशेष रूप से अब्दुल मलिक बिन-मारवान के काल से, जब भू राजस्व पर उमय्यदों का नियंत्रण सख्त हुआ और नए सिक्के प्रचलन में लाए गए। आगे के भाग में यह बताया जाएगा कि किस तरह उमय्यदों के समाज का स्वरूप घुमंतू विजेताओं की जगह आबाद स्थायी समाज में रूपांतरित हुआ, तथा उनकी सौंदर्य-दृष्टि और भौतिक संस्कृति कैसी थी। उमय्यदों के अधीन राजकीय भूमि, व्यापार और सिंचाई व्यवस्था पर यहां विशेष ध्यान दिया गया है। अब्बासिदों के बारे में जो उप-भाग हैं, उनमें आप पढ़ेंगे कि अल-मंसूर ने उनमें क्या क्या सुधार किए। उसने अनेक *दीवानों* के जरिए प्रशासन को भी मजबूत बनाया। बाद में हारून और अल-मामून के समय में उन *दीवानों* की संख्या बढ़ाकर 20 कर दी गई। अल-मामून के समय अब्बासी सेना का संघटन नाटकीय ढंग से परिवर्तित हुआ और सैन्य संस्थाओं में तुर्कों का प्रभुत्व बढ़ गया। आखिरी भाग में आप अब्बासिदों के शासन काल की सिंचाई व्यवस्था, किसानों, खलीफाओं के भू-क्षेत्र, कर विधान और *दीवान* नामक संस्था के बारे में जानेंगे।

14.2 विशाल उमय्यद खिलाफत : सूफयानिद काल[1]

661 सी ई में खलीफा अली की हत्या के तुरंत बाद ही सीरिया के गवर्नर मुआविया प्रथम ने उमय्यद खिलाफत की नींव रखी, जिसके साथ ही प्रथम *फितना* (मुसलमानों में अपने ही बीच गृह युद्ध; *फितना* के बारे में विस्तार से जानने के लिए देखें इकाई 13) की समाप्ति हुई। इस अत्यंत सफल रहे वंश के प्रथम उमय्यद खलीफा मुआविया दो कारणों से अपनी राजधानी दमिश्क ले गयेः एक तो इस शहर में सार्वलौकिक खुलापन था, और दूसरे, मदीना में मुआविया को लेकर लोगों में आक्रोश था। मदीना में मुआविया की कृषि गतिविधियों ने ***अमसारों*** को बड़े पैमाने पर नाराज कर दिया था। मदीना के बाशिंदे यह महसूस करते थे कि एक प्रवासी भूमिपति उनका शहर हथिया रहा है। इसके अलावा मुआविया लगभग 15 वर्षों तक सीरिया का गवर्नर रहा था। इसलिए इतने बड़े साम्राज्य के प्रशासन हेतु सीरिया का विन्यास सटीक था और वहां मुआविया प्रथम की ताकत का मजबूत आधार भी था।

अपने शासन काल में (661 से 680 सी ई) मुआविया प्रथम ने अपने राजनीतिक प्राधिकार को इस प्रकार पुनर्व्यवस्थित किया कि वह प्रशासनिक नौकरशाही की गुटबाजी का सामना कर सके और मुस्लिम *उम्मत* की राजनैतिक एकता को भी बनाए रख सके। मुआविया प्रथम के दौर में इस्लामी खिलाफत का दूर-दूर तक अतुलनीय विस्तार हुआ – उक्बा बिन नफी के नेतृत्व में उत्तर अफ्रीका में फिर से विजय प्राप्त की गई और जियाद इब्न अबी सूफियान के नेतृत्व में पूर्वी इरान के खुरासान में भी, जो ट्रांसोक्सियाना का प्रवेश द्वार था, विजय अभियान हुए। खुरासान में पचास हजार से ज्यादा अरब परिवार बसाने के लिए भेजे गए। खलीफा मुआविया प्रथम ने खुरासान को एक अलग प्रांत बनाकर उबैदुल्ला इब्न जियाद को उसका

[1] मुआविया के उत्तराधिकारी सूफयानिद के रूप में जाने जाते थे क्योंकि मुआविया, अबू सूफयान का वंशज था।

गवर्नर नियुक्त कर दिया। मुआविया प्रथम एक शक्तिशाली सेना तैयार करने में सफल रहा, जिसमें अधिकतर सीरियाई कबीले भर्ती थे। उसने मारमोरा सागर के चारों ओर अपनी नौसेना भी खड़ी की। ये सभी बड़े अभियान लूट की नीयत से चलाए गए, ताकि कबीलों के मुखियाओं को संतुष्ट रखा जा सके तथा आपस में झगड़ रहे कल्ब और कुदा कबीलों का रुख विदेशी जमीन की तरफ मोड़ा जा सके। प्रांतीय करों (***जकात*** और *खराज*) के अलावा मुआविया प्रथम ने राजकीय राजस्व को निम्नलिखित तीन तरीकों से बढ़ाया :

1) ***सीमावर्ती युद्ध*** : यह लूट और नज़राना के लिए था ताकि सीरियाइयों की निष्ठा बनाए रखी जा सके।

2) ***विस्तृत कृषि गतिविधियां*** : *मवाली* श्रमिकों की मदद से बड़े पैमाने पर खेती का विस्तार। इसके द्वारा राजकोष के लिए भारी आय सुनिश्चित हुई। इराक में विशाल भू-क्षेत्रों पर खेती शुरू की गई और उस भू-क्षेत्र को खलीफा ने अपने ही नियंत्रण में रखा।

3) ***कर वृद्धि और पारंपरिक नज़रानों की मांग*** : मुआविया प्रथम ने मिस्र के करों में वृद्धि की और इसी तरह ईरानियों से *नवरुज* (के नज़राने) की मांग की।

मुआविया प्रथम निस्संदेह एक अनुभवी प्रशासक था। उसने शासन से जुड़े कुलीनों की सरल और कार्यकुशल व्यवस्था बनाई और प्रभावी संचार के लिए एक मजबूत डाक व्यवस्था तैयार की। अरब इतिहासकारों का विचार था कि अपने आपको परम अधिकारी या सर्वोच्च सत्ता के स्वामी के रूप में दर्शाने की जगह मुआविया प्रथम एक *'हिल्म'* (संयमी और आत्म विवेकी व्यक्ति) की तरह काम करता था। वह अपने ऊपर हमेशा नियंत्रण रखता था, निर्णायक और गूढ़ फैसले लेता था और अंतर-कबीलाई शत्रुता के मामले में स्पष्ट संतुलन बनाकर रखता था। एम.ए. शाबान के मुताबिक, 'यह समझते हुए कि किसी भी गुट को पूरी तरह से संतुष्ट करना पूरी तरह से संभव नहीं था, उसने (मुआविया प्रथम) अपने अधिकारों की धौंस दिखाने के बजाय सर्वमान्य समझौते कराते समय लोगों की शांति की व्यापक इच्छा का लाभ उठाया। वह निश्चित रूप से *'अमीर-उल मुमीनीन'* था, लेकिन अन्य अरब सरदारों से बात करते समय ज्यादा से ज्यादा अपने आप को *'बराबरी वालों में श्रेष्ठ'* जैसा ही पेश करता था। उसने अली की सत्ता की अपमानजनक असफलता देखी थी, इसलिए वह अपने आप को धार्मिक सत्ता की दावेदारी से सावधानीपूर्वक अलग रखता था।'

अली की हत्या के बाद मुआविया प्रथम ने उसके बड़े बेटे हसन से संपर्क स्थापित किया और उसके साथ एक शांति संधि की, इराकी संभ्रान्तों (बड़े कबीलाई अरब मुखिया) से समझौते किए और उन्हें आश्वस्त किया कि इराक पर उनकी सत्ता बनी रहेगी, बशर्ते वे उसे खलीफा स्वीकार कर लें। मुआविया प्रथम ने इराकी *अशराफों* (संभ्रांतों) को इराक और ईरान में अबाधित अधिकार दिए। जैसा कि पहले बताया गया है कि मुआविया के आदेश पर बड़ी संख्या में अरब परिवार खुरासान में आबाद हो गए और उन्होंने वहां की अधिकांश उपजाऊ जमीनों पर कब्जा कर लिया। सूफयानिदों के दौर में उमय्यद खिलाफत का राज्य संघटन मजबूती से केंद्रीकृत नहीं था। वह कबीलाई राज्य-तंत्र का प्रतिनिधित्व करता था, जिसकी बुनियाद प्रभुत्वशाली पितृसत्तात्मक अरब कबीला प्रमुखों के आपसी समझौतों पर टिकी थी। इसलिए वह प्रशासन और राज्य-तंत्र, दोनों ही मामलों में विकेंद्रित व्यवस्था थी। एक व्याख्या यह भी है कि मुआविया प्रथम ने अन्य प्रांतों पर शासन के लिए अपनी सैन्य शक्ति के इस्तेमाल से परहेज रखा; 'जब कि उसने स्वयं को सीरिया में स्थापित रखा और प्रांतों के प्रशासन के लिए स्थानीय कुलीनों पर भरोसा किया और अपनी ओर से सिर्फ हल्के निर्देष दिए।'

मुआविया प्रथम का विवाह कल्ब कबीले में हुआ था, जो सीरिया का एक शक्तिशाली बद्दू कबीला था। ईसाईयों के प्रति उसने सहिष्णुता बनाए रखी। अपनी मृत्यु के बाद किसी रक्तपात की आशंका से बचने के लिए उसने अपने बेटे यजीद बिन मुआविया (680 से 683

सी ई) को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया और इस तरह इस्लामी खिलाफत को वंशानुगत शासन में बदल दिया।

यजीद को अली के बेटे हुसैन और अब्दुल्ला इब्न ज़ुबैर की ओर से चुनौती मिली। हुसैन के विद्रोह के कारण यज़ीद के तीन साल के शासन के दौरान गृह युद्ध जैसी स्थिति बनी रही। करबला के मैदान में हुए नरसंहार में हुसैन की उनके अनेक रिश्तेदारों के साथ शहादत हुई। अब्दुल्ला इब्न जुबैर ने यजीद के खलीफा होने के अधिकार को नहीं माना था, इसलिए एक दशक तक वह उसका कट्टर विरोधी बना रहा। 683 सी ई में यजीद की मृत्यु के बाद उमय्यद राज्य-तंत्र लडखड़ाने लगा, क्योंकि उसके बाद उत्तराधिकारी के रूप में शासक बना मुआविया द्वितीय अक्षम था और वह राजनैतिक वैधता हासिल नहीं कर सका। 692 सी ई में अब्दुल्ला इब्न ज़ुबैर मक्का में मारे गए। इस बीच उमय्यदों के कबीले में आपसी लड़ाई फूट पड़ी और 684 सी ई में मारवान प्रथम ने सूफ़यानिद शाखा को सत्ताहीन कर दिया। इसलिए इस शाखा के परावर्ती शासकों को, जो उसके उत्तराधिकारी बने, 'मारवानिद' या 'बानू मारवान' कहा गया (उम्मयद राज़्य के विस्तार के लिए *मानचित्र* 13.1 देखें)।

14.3 उमय्यद खिलाफत : मारवानिद काल

उमय्यदों के मारवानिद् वंश का संस्थापक मारवान प्रथम जब मुआविया द्वितीय को अपदस्थ कर खलीफा बना, तब तक वह काफी वृद्ध हो चुका था। वह खलीफा उस्मान के अधीन काम कर चुका था। उसकी मां अमीना बिंत अलकामा प्रभुत्वशाली *बानू कल्ब* कबीले से संबंधित थीं। चूंकि मारवान प्रथम का सीरिया में स्वयं का कोई आधार नहीं था, वह पूरी तरह से यमनी कबीले के अशराफों पर आश्रित था, जिन्होंने उसे चुना था। अपने राज्यारोहण के समय मारवान प्रथम ने नई व्यवस्था में *कुदा* कबीले पर हमेशा कृपादृष्टि बनाए रखने का वादा किया। जब इब्न बहदल ने सीरियाई *अशराफों* की सभा बुलाई, उसके कुछ ही समय बाद जाबिया में हुए *शूरा* ने कुछ वित्तीय वादों की एवज में मारवान प्रथम को उमय्यदों की ओर से अपना उम्मीदवार घोषित कर दिया।

दूसरे फितना (मुआविया द्वितीय के समय की राजनैतिक अव्यवस्था) के दौरान मारवान प्रथम ने खिलाफत के लिए अब्दुल्ला इब्न जुबैर की उम्मीदवारी का विरोध किया था। जुबैर ने मारवान प्रथम को सफलता पूर्वक हेजाज़ से बाहर खदेड़ दिया। मारवान प्रथम को लग रहा था कि अब जुबैर की ताजपोशी निश्चित है। लेकिन उसी समय खुरासान और बसरा के उमय्यद गवर्नर उबैद इब्न जियाद ने मारवान प्रथम को खिलाफत के लिए उमय्यदों का उम्मीदवार घोषित कर उनकी राजनीति में पुनः वापसी कर दी। सीरिया में रहते हुए इब्न जियाद ने – जिसने बानू कैस और उनके नेता अल-दहक इब्न कैस को परास्त किया – 684 सी ई में कैस (उत्तरी) और कल्ब (दक्षिणी) कबीलों के बीच हुई मर्ज राहित की लड़ाई में इब्न जुबैर की खलीफाई हेतु नुमाइंदगी को स्वीकार किया था। इसी नेता ने खिलाफत के लिए इब्न जुबैर की उम्मीदवारी का समर्थन किया था। इस निर्णायक लड़ाई के बाद उमय्यद उत्तराधिकार का संकट लगभग सुलझ गया और मारवान इब्न अल-हक्काम के खलीफा की गद्दी पर बैठने से 684 सी ई में उमय्यद सत्ता फिर से बहाल हो गई।

अब्दुल मलिक बिन मारवान : उमय्यदी नियंत्रण का सुदृढ़ीकरण

दूसरे *फ़ितना* की समाप्ति पर मुआविया प्रथम के बाद उमय्यद वंश का सबसे यशस्वी शासक अब्दुल मलिक बिन मारवान दो दशकों तक (685 से 705 सी ई) गद्दी पर आसीन रहा। इस अवधि में अब्दुल मलिक को इराक, हिजाज़ और बाइज़ेंटाइन में शत्रु पक्ष से जूझना पड़ा। अब्दुल मलिक ने जो नीतियां लागू कीं और प्रशासनिक सुधार किए, वे उसके परावर्ती विशेषकर अब्बासिदों के जमाने तक जारी रहे, हालांकि उनका दृष्टिकोण अब्दुल मलिक से

बिलकुल अलग था। उसकी नीतियां उमय्यद साम्राज्य में राजनैतिक स्थिरता और समरूपता ले आईं।

दूसरे *फितना* के आरंभ से ही सीरिया, इराक और खुरासान के मुस्लिम सेनापतियों ने बड़ी संख्या में बगावत करते हुए प्रतिद्वंदी खिलाफत के उम्मीदवार अब्दुल्ला बिन ज़ुबैर के साथ मक्का में जा मिले। इसलिए सबसे पहले अब्दुल मलिक ने बाइज़ेंटाइन सम्राट से एक युद्ध विराम संधि की, (जो उमय्यदों के विकट और पुराने शत्रु थे) जिससे कि वह खरीजी प्रभुत्व वाले इराक के बसरा में उमय्यद सत्ता को प्रभावी ढंग से स्थापित कर सकता था, और यह उसने बिना विलंब किए 691 सी ई में किया। अगले साल अब्दुल मलिक की सेना, मक्का में घोषित खलीफा अब्दुल्ला बिन जुबैर की सेना से भिड़ गई। इराक और उमय्यदों के पूर्वी क्षेत्र के गवर्नर अल-हज्जाज बिन युसुफ ने उमय्यदी सेना का नेतृत्व किया और 692 सी ई में मक्का में जुबैर और उसके अनुचरों को परास्त कर दिया। मुस्लिम इतिहास में इस साल को 'संप्रदाय की एकजुटता का साल' के रूप में याद किया जाता है।

अब्दुल मलिक ने बाइज़ेंटाइन राज्य के सम्राट जस्टीनियन द्वितीय (685 से 695 सी ई) से तब तक संधि बनाए रखी, जब तक उसकी आंतरिक समस्याएं प्रभावी ढंग से निबट नहीं गईं। बाइज़ेंटाइन इतिहासकार संत थियोफनीस (758 से 817 सी ई) के शब्दों में, 692 सी ई के बाद (यानी दूसरे *फितना* की समाप्ति) बाइज़ेंटाइन शासक जस्टीनियन द्वितीय ने अरब सिक्कों में नज़राना लेने से मना कर दिया, जिसकी वजह से एक दशक पुराना शांति समझौता टूट गया। अपने साम्राज्य में कायम हो चुकी शांति से बढ़े आत्मविश्वास के बलबूते अब्दुल मलिक अनातोलिया तक आगे चढ़ आया और 693 सी ई में काला सागर के निकट सेबस्टोपोलिस के युद्ध में बाइज़ेंटाइनी सेना (जिनमें ज्यादातर स्लाव थे) को परास्त कर दिया। भविष्य में उमय्यद सत्ता को भीतर या बाहर से कोई चुनौती नहीं मिले, इसके लिए खलीफा ने राज्य निर्माण के ऐसे सफल कदम उठाए जिसके द्वारा आधिपत्य स्थापित करने वाले साधनों को परिवर्तित और मजबूत किया गया तथा सत्ता के केंद्रीकरण के दौर की शुरुआत हुई।

सिक्के

अब्दुल मलिक के द्वारा प्रचलित नए सिक्कों के प्रचलन में आने से पहले उमय्यद साम्राज्य में दो तरह के सिक्के व्यवहार में लाए जाते थेः

अरब-बाइज़ेंटाइन किस्म : प्रारंभिक इस्लामिक सिक्के **यूनानी या अरबी लिखावट** में ईसाई छवियों और प्रतीक चिह्नों के साथ बाइज़ेंटाइन सिक्कों की नकल में ढाले गए थे (चित्र 1)। बाइज़ेंटाइनों के सामान्य पारंपरिक बाइज़ेंटाइनी सिक्कों पर ईसा का चित्र (bust) या

चित्र 1: बाइज़ेंटाइनी सिक्काः जस्टीनियन प्रथम (527 से 565 सी ई) हाफ फोलिसः कांस्टेन्टीनोपल टकसाल : 538-539 सी ई।
साभारः अंग्रेजी विकीपीडिया, मूल अपलोड Panairjdde **द्वारा**
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/51/Half_follis-Justinian_I-sb0165.jpg

क्रास का निशान बना होता था। बाइज़ेंटाइनी सिक्कों की नकल में ढाले गए उमय्यदों के सिक्कों का विवरण देते हुए अल-बालादुरी ने लिखा कि रोम, मिस्र से कागज मंगाता था और मुस्लिम रोम से दीनार लेते थे।

अरब-सासानी किस्मः ये वह प्रारंभिक इस्लामी सिक्के थे, जिन पर ईरानी या अरब प्रतीक चिह्न बने होते थे और जो सासानी शैली का अनुकरण करते हुए ढाले गए थे, जिन्हें *दरहम* कहा जाता था। पारंपरिक सासानी सिक्कों पर सामने की ओर बादशाह खुसरू द्वितीय (590-628 सी ई) का चित्र और पीछे की ओर अग्नि वेदी बनी हुई थी (**चित्र 2**)।

चित्र 2: अरब-सासानी सिक्का : बहराम द्वितीय, उसकी रानी शापुरदुखतक और राजकुमार बहराम सकनशाह

साभारः Classical Numismatic Group; https://www.cngcoins.com/Coin.aspx?CoinID=133971

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/4/46/Bahram_II%2C_with_Queen_and_Prince.jpg

लेकिन 680 सी ई के बाद अब्दुल मलिक मारवान ने अपने शासन क्षेत्र में एक विशेष शैली के सिक्के जारी किए, जो पूरी तरह से अरबी शैली वाले थे और जिसने बाइज़ेंटाइन तथा सासानी सिक्कों को प्रचलन से बाहर कर दिया। अब्दुल मलिक का यह निर्भीक कदम न सिर्फ सिक्कों को, बल्कि उसके पूरे प्रशासनिक ढांचे का अरबीकरण करने का स्पष्ट प्रमाण माना गया। सिक्कों का यह मानकीकरण बुनियादी रूप से 'बाइज़ेंटाइनी शत्रुओं के खिलाफ विचारधारात्मक और आर्थिक युद्ध की अभिव्यक्ति थी'।

चित्र 3: सिक्कों में सुधार के पहले का दीनार (693 से 695 सी ई)

साभारः PHGCOM, 2008

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/b/bd/First_Umayyad_gold_dinar%2C_Caliph_Abd_al-Malik%2C_695_CE.jpg

चित्र 4: सिक्कों में सुधार के बाद का *दीनार* (696 सी ई से) : उमय्यद खलीफा अब्द अल-मलिक इब्न मारवान द्वारा दमिश्क (सीरिया) में ढलवाई गई सोने की दीनार : ए एच 75 (697-698 सी ई)

साभार: thefireball777 , November 2014

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/a/a3/Dinar_of_Abd_al-Malik%2C_AH_75.jpg

अब्दुल मलिक की खिलाफत में (**चित्र 3**, सोने की *दीनार*) बाइज़ेंटाइन की सोलीदी (Solidi) शैली की नकल करते हुए सोने, चांदी और तांबे के सिक्कों पर तत्कालीन खलीफा का चित्र ढाला हुआ था और बाद में 696 सी ई में हुए सुधारों के बाद मानक *दीनार* (**चित्र 4**) पूरी तरह से शब्द अंकित (epigraphic) बन गया और उन पर से चित्र तथा प्रतीक हट गए। मारवानियों ने त्रि-धात्विक सिक्के जारी किए और हिजाज़ तथा नज्द की सोने की खानों से सोना प्राप्त करने के लिए खनन् कराया।

संभवतः इस्लामी सभ्यता को अब्दुल मलिक मारवान का सबसे महत्वपूर्ण योगदान यह था कि उसने अपने साम्राज्य के दरबारों तथा प्रशासनिक कार्यालयों में यूनानी, कॉप्टिक तथा ईरानी की जगह अरबी को राज भाषा के रूप में स्थापित किया। इस बदलाव के चलते एक मानकीकृत अरबी भाषा-निपुण लेखक वर्ग का जन्म हुआ, जो सरकारी टैक्स रजिस्टर अरबी में लिख सकते थे। उसने भूमि की पैमाइश की नई पद्धति लागू की, कर वसूली की सहूलियत के लिए प्रत्येक व्यक्ति का पंजीकरण करवाया, सिंचाई के लिए अनेक नहरें खुदवाईं और टयूनिस में जहाज बनाने का कारखाना स्थापित किया। इब्न खलदून के शब्दों में वह सबसे महान् शासक था, क्योंकि 'उसने राज्य के शासन के मामले में दृढ़तापूर्वक खलीफा उमर के पदचिह्नों का उनके द्वारा मानवीकृत अरबी अनुसरण किया।' एक मजबूत सीरियाई सेना, अपने सिक्कों और कुशल अरबीकृत केंद्रीय शासन तंत्र की बदौलत मारवान शासक आसानी से अपनी सत्ता का विस्तार और अपने पूरे साम्राज्य को संघठित कर सके।

14.4 बाद के उमय्यद

बाद के उमय्यदों (684 से 750 सी ई) के दौर के सामाजिक आर्थिक वातावरण और अंततः 750 सी ई में इस वंश के पतन को ठीक से समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि पहले मारवानी खलीफा अब्दुल मलिक के समय में क्या-क्या रूपान्तरकारी बदलाव लाए गए थे।

सूफयानिद उमय्यद राज्य	मारवानिद उमय्यद राज्य
परोक्ष नियंत्रण: मुआविया प्रथम प्रांतों के कामकाज में हस्तक्षेप नहीं करता था, बशर्ते प्रांतों के गवर्नर दमिश्क को कर अदा करते रहें। आरंभ के चार खलीफाओं और मुआविया प्रथम ने अप्रत्यक्ष नियंत्रण की परंपरा बनाए रखी। जिससे प्रांतीय गवर्नरों को अपने मामलों को अपने ढंग से निबटाने की आजादी थी। सूफयान कोर्ट, कार्यालयों और राजकीय अधिकारियों	**प्रत्यक्ष नियंत्रण:** प्रांतीय शासन परोक्ष रूप से चलाने और उसमें सीधे हस्तक्षेप नहीं करने की सूफयानिदों की नीति के विपरीत, मारवानी अपनी केंद्रीकृत शासन प्रणाली की बदौलत हमेशा अशराफों (कबीलाई नेताओं) और गवर्नरों के बीच संतुलन रखने के प्रयास में लगे रहते थे। दूसरे गृह युद्ध के बाद की परिस्थितियों को देखते हुए खलीफा अब्दुल

पर बाइज़ेंटाइन प्रशासनिक शैली का प्रभाव था। इसका कारण यह था कि मुसलमान हालांकि षासक थे, वे सीरिया, खुरासान और मिस्र में अल्प संख्या में थे। बड़े पैमाने पर धर्मांतरण अल-वलीद के बाद शुरू हुआ चूंकि उमय्यद राज्य ने न सिर्फ खुद को विजय अभियानों से विमुख कर लिया, बल्कि आम लोग भी रोजगार की तलाश में कूफा, बसरा आदि छावनी शहरों की ओर पलायन करने लगे।	मलिक ने सीरियाई सैनिकों की एक विश्वस्त साम्राज्यवादी सेना खड़ी की, जिसकी जवाबदेही अमीर उल मुमिनीन (खलीफा) तथा गवर्नरों के प्रति होती थी। वह सेना उमय्यद साम्राज्य की रक्षा, उसके औपचारिक नियंत्रण और केंद्रीकृत प्रशासन में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी।
निरंतरता और विकेंद्रिकृतः मुआविया और यजीद प्रथम के काल में उमय्यद राज्य तंत्र प्रांतों के सीधे नियंत्रण पर आधारित नहीं था। राजनैतिक और प्रशासनिक ढांचे में इसकी निरंतरता सूफयानी उमय्यदों के काल में भी झलकती थी। इसलिए साम्राज्य के दरबार और सरकारी कार्यालयों में शासकीय भाषा यूनानी, कॉप्टिक और फारसी बनी रही। हालांकि सत्ता सीरियाई अरबों के हाथों में थी, सूफयानी प्रशासन के दस्तावेज अभी भी यूनानी में लिखे जाते थे। खरीद-फरोख्त के लिए उन क्षेत्रों में क्रमशः सासानी और बाइज़ेंटाइन सिक्के ही चलते थे।	**रूपांतरित और केंद्रीकृतः** मारवानियों के समय में गवर्नरों का चुनाव उनके कुल गोत्र के संबंधों से नहीं, बल्कि योग्यता के आधार पर होता था। यूनानी और फारसी को हटाकर अरबी को राजकीय भाषा बनाया गया था। और नए इस्लामी सिक्के चलाए गए थे। अब्दुल मलिक ने सीरिया और इराक में राजस्व रजिस्टरों के अरबीकरण की भी शुरुआत की थी, जिन्हें दीवान कहा जाता था। उनमें सैनिकों के नाम और उनके वेतन आदि (पे रोल) दर्ज किए जाते थे। बाद में अल-वलीद के जमाने में मिस्र में ये दीवान सिर्फ अरबी में लिखे जाने लगे। मारवानी अपने प्रांतीय प्रशासन, जनता और गवर्नरों पर सीधा नियंत्रण रखते थे।
योग्यता की जगह रक्त संबंधः सूफयान काल में आमतौर पर गवर्नर (*अमीर*) वही नियुक्त किए गए, जो खलीफा के रिश्तेदार और उमय्यद वंश से होते थे। मुआविया प्रथम संगठित स्थायी सेना के बदले अपने निजी रक्षक रखता था। सूफयानों ने अपनी कोई पेशेवर सेना नहीं खड़ी की, बल्कि किसी भी विद्रोह को दबाने के लिए वे सीरियाई सैनिकों पर आश्रित रहे।	**रक्त संबंधों की जगह योग्यता और कौशलः** सैन्य योग्यता और प्रशासनिक कौशल वाले लोगों को तरक्की देकर प्रांतों का *अमीर* (गवर्नर) बनाया जाने लगा, (जैसे अल-हज्जाज)। अब्दुल मलिक ने सीरियाई टुकड़ियों वाली एक शक्तिशाली स्थायी सेना खड़ी की, जिन्हें उपद्रवग्रस्त इलाकों में भेजा जाता था और सामान्य करों में से जिन्हें वेतन दिया जाता था। इसके अलावा प्रांतीय सेनाएं भी थीं। अब्दुल मलिक के नेतृत्व में मारवानियों ने अरब इस्लामी पहचान की शुरूआत की और उसे आगे बढ़ाया।

अल-वलीद (705-715 सी ई) ने अपने पिता अब्दुल मलिक के सैन्य अभियानों तथा उपक्रमों को ज़ारी रखा। उसके शासन काल में उमय्यद साम्राज्य का भौगोलिक विस्तार अपनी पराकाष्ठा पर जा पहुंचा। अल-हज्जाज और मुहम्मद बिन कासिम के नेतृत्व में मुस्लिम सेना ने क्रमशः ट्रांसऑक्सियाना और पूरब में सिंध तक विजय प्राप्त की। 711 सी ई में पश्चिम में तारिक इब्न ज़ियाद के नेतृत्व में उसने स्पेन तक फतह हासिल की। अल-वलीद ने मिस्र में *दीवानों* (रजिस्टरों) के अरबीकरण का कार्य पूरा किया। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि खुरासान में *दीवानों* के अरबीकरण का कार्य नस्र बिन सयीर ने किया। वलीद ने मदीना में पैगंबर की मस्जिद का भी जीर्णोद्धार कराया और येरुशलम में शिला-गुंबद (Dome of Rock) के निकट एक विशाल भवन का निर्माण कराया, जिसे अल-अक्सा मस्जिद के नाम से जाना जाता है। 715 सी ई में उमय्यदों की गद्दी पर सुलेमान बिन अब्द अल-मलिक आसीन हुआ और 717 सी ई तक शासन किया। इस तथ्य के विशिष्ट ऐतिहासिक प्रमाण मिलते हैं कि उसने न सिर्फ बेहद योग्यता से प्रांतीय गवर्नर हटाए या नियुक्त किए, बल्कि *काज़ियों* (न्यायधीश) का चयन सीधे दमिश्क से किया। प्रांतीय अधिकारी किसी भी नियुक्ति की शक्ति और अधिकार से वंचित कर दिए गए। अब्दुल मलिक बिन मारवान की तरह उसके सभी उत्तराधिकारियों, वलीद प्रथम (705 से 715 सी ई), यजीद द्वितीय (720 से 724 सी ई), हिशाम (724 से 743 सी ई) और वलीद द्वितीय (743 से 744 सी ई) ने कॉस्टैंटिनोपल पर लगातार हमले किए और कई बार उसकी घेरेबंदी भी की।

लेकिन उमर द्वितीय (717 से 720 सी ई) ने उमय्यद कर प्रणाली को पुनर्व्यवस्थित किया, जिसे 'राजकोषीय पुनर्लेख' (*फिस्कल रेसक्रिप्ट*) के नाम से जाना जाता है। अपने राजनैतिक प्रयासों में उमर द्वितीय ने उमय्यद राज्य को अनावश्यक राजनीतिक विवादों में उलझने से बचाकर रखा। एच. ए. आर. गिब्ब का तर्क है कि उमर द्वितीय ने अरबों की एकजुटता बनाए रखी, *मवालियों* (नव दीक्षित) की शिकायतों का समाधान किया और राजनीतिक जीवन तथा धार्मिक दावों के बीच की टकराहट खत्म की। अपने अधिकारों और कर्तव्यों के मामले में नव दीक्षित (*मवाली*) भी अरबों के बराबर और समान समझे गए। ये नव दीक्षित अपनी जगहें छोड़ कर *अमसार* (छावनी शहरों) की तरफ पलायन कर रहे थे। इन नव दीक्षितों की जमीनें खेती योग्य बनाई गईं और कर व्यवस्था (*खराज*) के अंतर्गत लाई गईं। उमर द्वितीय ने बाद में न सिर्फ कॉस्टैंटिनोपल की घेराबंदी के लालच से स्वयं को दूर रखा, बल्कि खारिजियों के विद्रोह के समय सख्ती और ताकत का इस्तेमाल करने की जगह उसे बातचीत से सुलझाने का रास्ता चुना। आखिरी उमय्यद खलीफा मारवान द्वितीय (744 से 750 सी ई) ने अपना शासन दमिश्क से चलाया। उसके शासन के दौरान पूरे इराक और खुरासान में उमय्यदों के खिलाफ हो रहे विद्रोहों को व्यापक समर्थन मिला। 750 सी ई में खुरासान के लोगों ने अबू मुस्लिम के नेतृत्व में बगावत कर दी, जिसने इराक में ज़ाब की लड़ाई में मारवान द्वितीय को बुरी तरह से पराजित किया। आखिर में मारवान द्वितीय और उसका पूरा परिवार (अब्दुर रहमान को छोड़ कर) अब्बासी राजवंश के संस्थापक अब्बास अल-सफा द्वारा मिस्र में मारा गया।

पैट्रिशिया क्रोन के अनुसार, उमय्यदों का बाद का समय सामाजिक-सांस्कृतिक विकास की दृष्टि से समृद्ध था, क्योंकि वह एक *उत्तर-कबीलाई व्यवस्था* के काल की शुरुआत कर रहा था और साथ ही एक *विशिष्ट इस्लामिक संस्कृति* विकसित कर रहा था। उत्तर-उमय्यद काल में आजाद गैर-अरबों, जिन्हें *मवाली* कहा जाता था, का बड़े पैमाने पर इस्लाम में धर्मांतरण हुआ। और अब्दुल मलिक के समय में 'ग्रामीण लोग इस उम्मीद में छावनी शहरों की तरफ पलायन करने लगे कि धर्मांतरण के बाद वहां वे विजेता सेना का अंग बन जाएंगे।' लेकिन पराजित गैर-अरबों के इस्लामीकरण ने, जो बुनियादी तौर पर पहले उनके करदाता थे, अरब समाज के सम्पूर्ण सांस्कृतिक और राजस्व ढांचों की नींव हिला दी। उत्तर उमय्यद काल में अरब सैनिकों के कृषिकरण की प्रक्रिया के रूप में एक दूसरा बड़ा सामाजिक परिवर्तन भी आकार ले रहा था क्योंकि आठवीं सदी के आते-आते मुस्लिम समाज छावनियों में रहने वाले विजेता सैनिकों से रूपांतरित होकर वाणिज्य, व्यापार तथा कृषि में स्थिर समाज व्यवस्था का अंग बन गये थे। जैसा कि खुरासान में हुआ था।

उमय्यद काल में *मवाली*

उमय्यदों के समय में जो गैर-अरब लोग इस्लाम में धर्मांतरित हुए, उनके और अरबों के बीच मालिक-सेवक (*मौला-मवाली*) जैसा संबंध नजर आता है। पहले यह अंतर केवल धारणात्मक था, लेकिन बाद में अरबों को ज्यादा वेतन, पेंशन, जमीनें और अन्य सुविधाएं मिलने लगीं और सामाजिक पदानुक्रम में वे एक उच्च वर्ग बन गये। उमय्यद खास कर *मवालियों* से ज्यादा कर वसूलते थे, जिन्हें पहले से ही *अरबों* से कम तनख्वाह मिलती थी। *अरबों* को *मवालियों* (गैर-अरब धर्मांतरितों) से शादी-ब्याह करने से हतोत्साहित किया जाता था। दक्षिणी इराक में *मवाली* व्यापार और दुकानदारी करते थे और कुछ अपने मालिकों (*अरब-मौला*) के लिए व्यापारिक कारवां ले कर जाते थे। उमय्यदों ने अरब *नसब* (अरब नस्ल, अनुवांशिकी) पर जोर दिया, इसलिए सिर्फ अरब ही मालिक बन सके। हिशाम के काल में उमय्यदों ने खुरासान के धर्मांतरितों का *खराज* शुल्क माफ करने का वादा किया था, लेकिन ईरानी *दहकानों* ने उमय्यद गवर्नरों को चेताया कि इससे राज्य के राजस्व को कितना बड़ा घाटा उठाना पड़ेगा, इसलिए उमय्यदों ने *मवालियों* पर शुल्क लगाना जारी रखा, हालांकि वे धर्मांतरित हो चुके थे। इसने खुरासान में जन-विद्रोह की स्थितियां पैदा कर दीं। इस बीच ये *मवाली* न सिर्फ आर्थिक क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर चुके थे, बल्कि वे प्रशासन में भी अच्छे पदों पर मौजूद थे और बौद्धिक नेतृत्व

देने लगे थे। ज्यादातर *मवाली* बराबर का अधिकार पाने के लिए संघर्ष कर रहे थे, इसलिए उमय्यदों को सत्ता से बाहर करने के लिए हुई अब्बासी क्रांति में वे अग्रणी थे।

नौवीं सदी का एक स्पेनी अरब विद्वान इब्न अब्द रब्बीही (860-940 सी ई) उस समय की अरब व्यवस्था में *मवालियों* की दशा का चित्रण करते हुए लिखता हैः

वे (*कुछ अरब लोग*) कहते थे कि इबादत के समय सिर्फ तीन चीजें बाधा डालती हैं – गधे, कुत्ते और *मवाली*। *मवाली कुन्या* (अनुवांशिकी) का प्रयोग नहीं करते थे, उन्हें उनके अपने नाम या उप-नाम से पुकारा जाता था। लोग रास्तों में उनके बराबर नहीं चलते थे और जुलूसों में उन्हें आगे चलने की इजाजत नहीं दी जाती थी। अगर वे भोजन के समय मौजूद होते थे, तो वे (*मवाली*) खड़े रहते थे... जनाजे के समय यदि अरब मौजूद होते थे, तो वे *मवालियों* को जनाजे की नमाज पढ़ने की इजाजत नहीं देते थे।

14.5 उमय्यदों का सौंदर्य शास्त्र और भौतिक संस्कृति

उमय्यदों के समय में अरबी को दरबार की भाषा बनने का गौरव मिला। उमय्यदों ने अनेक कवियों को भी संरक्षण प्रदान किया। उनके समय में भवन निर्माण की गतिविधियां भी काफी तेज रहीं।

14.5.1 दरबार संस्कृति

मुआविया प्रथम ने उमय्यदों की समृद्ध राजधानी दमिश्क से अपना शासन चलाया, जहां उसने एक महल बनवाया था, जो उमय्यदों के दरबार का कार्य करता था। कुछ ही समय बाद अब्दुल मलिक ने अम्मान महल बनवाया, जो एक तरह का स्वागत हाल था, जहां वह अपने सैन्य अधिकारियों से मिलता था। उमय्यद दरबारों की संस्कृति मोटे तौर पर वाचिक (oral) परंपरा पर निर्भर थी, इसलिए वहां कामकाज के लिए लिखित दस्तावेजों की ज्यादा जरूरत नहीं थी। दरबार अरबों और अरब संस्कृति का समर्थन करता था; उमय्यद दरबार में आपस में लगातार झगड़ते रहने वाले कवियों की एक तिकड़ी का प्रभुत्व था, जिसमें अल-अख्तल, फराज़दक और जरीर शामिल थे। वे एक विशेष तरह की कविताएं रचते थे, जो *नकायद* (उड़ान) कहलाती थीं। इस तरह की कविताओं में दो प्रतिस्पर्धी कवि कबीलाई श्रेष्ठता स्थापित करने के लिए काव्य युद्ध में एक-दूसरे को अपमानित करते थे। उन्हें इसलिए संरक्षण मिलता था, क्योंकि जैसा कि *किताब-उल अग़ानी* जैसे स्रोत स्पष्ट करते हैं, अरबी गाने सुनना उमय्यद राजकुमारियों का अपना समय गुजारने का पसंदीदा साधन था।

अन्य विधाओं में, अपनी कविताओं के द्वारा उमय्यदों ने कबीलाई खानाबदोशों (उमन-बदावी) के साथ पारस्परिक संबंध बनाये। उमय्यदों के काल में *गजलें* (संबोध गीत), *कसीदें* (प्रशस्ति गान) से अलग होने लगीं। अबू अल-फराज इस्फहानी (897 से 967 सी ई) का ग्रंथ *किताब-उल अग़ानी* (गीतों की किताब) और इब्न अब्दुल रब्बीह (860-940 सी ई) की रचना *इ'क्द अल-फरीद* (गले का विलक्षण हार) जैसे स्रोत उमय्यदों और अब्बासियों के दरबारों की तहजीब, राजाओं की उक्तियों, परंपराओं और जीवन शैली के बारे में बहुमूल्य जानकारी देते हैं। उमय्यद बादशाह यजीद प्रथम (680-683 सी ई) खुद एक बड़ा संगीतज्ञ था। उसने उमय्यद दरबार में वाद्य यंत्रों का सूत्रपात किया। अब्दुल मलिक द्वारा अरबी को अपने दरबार की भाषा बनाने और अपने साम्राज्य में प्रशासन की भाषा बनाने से अरबी भाषा की तेजी से प्रगति हुई। एक अरब क्लासिकल कवि अल-अख्तल, अब्दुल मलिक का राज कवि था।

14.5.2 महल और मस्जिदें

उमय्यदों ने भव्य महलों वाले शहर, बड़ी-बड़ी मस्जिदें, *सुक* (बाजार) और रेगिस्तानी महल (*कस्र*) बनवाए। अब्दुल मलिक ने विशालकाय शैल गुंबद (Dome of Rock) बनवाया था। अल-वलीद द्वितीय के काल में उमय्यद साम्राज्य का दूर-दूर तक विस्तार हुआ। उसने

जेरिको में *कस्र* आमरा और खिरबत अल-मफजर जैसे किलेबंद महल बनवाए। खिरबत अल-मफजर एक रेगिस्तानी महल था जिसकी दीवारें अद्भुत मानव भित्ति चित्रों से सुसज्जित हैं। उमय्यद राजकुमारियां प्लेग से बचने के लिए ग्रामीण भवनों (*विला रस्टिका*) में रहना पसंद करती थीं। ज्यादातर वे रेगिस्तानी महलों (*कस्र*) में रहने के लिए लालायित रहती थीं। अल-वलीद को तीन मस्जिदों के निर्माण और उनके विस्तार का श्रेय जाता है – मदीना, येरुशलम और दमिश्क। पहले की दो मस्जिदों का पुनर्निर्माण कराया गया। भारी नुकसान के बावजूद 'अल-अक्सा मस्जिद का अपना मूल सौंदर्य काफी हद तक बरकरार रहा'। उसने अल-अक्सा की ऐतिहासिक मस्जिद के निर्माण का कार्य भी पूरा करवाया।

चित्र 14.5: अल-अक्सा मस्जिद, येरुशलम

साभार: Godot13; Andrew Shiva / Wikipedia / CC BY-SA 4.0

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/87/Jerusalem-2013-Temple_Mount-Al-Aqsa_Mosque_%28NE_exposure%29.jpg

चित्र 14.6: उमय्यदों का रेगिस्तानी महल (*कस्र आमरा*), जॉर्डन

साभार: GregAsche-commonswiki, Nov. 2005;image under the en:GFDL; CCBY-SA 3.0

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/53/Qasr_Amra.jpg

दमिश्क की मस्जिद उसी स्थान पर बनाई गई, जहां पहले रोमनों का बृहस्पति (Jupiter) मंदिर था, जिसे बाइज़ेंटाइनों के समय में चर्च में परिवर्तित कर दिया गया था। इसे मदीना की मस्जिद की तर्ज पर 706-716 सी ई में बनवाया गया था। इसमें मुस्लिम और ईसाई दोनों ही प्रार्थना करने जाते थे। लेकिन बाद में अल-वलीद द्वितीय ने एक भव्य और उस समय की सबसे बड़ी मस्जिद के निर्माण के लिए उस पूरी जगह को खरीद लिया। इब्न बतूता (1304-1369 सी ई) ने अपने *रिहला* में अत्यंत सुंदर शब्दों में इसका चित्रण करते हुए लिखा है, 'यह दुनिया की सबसे उत्कृष्ट मस्जिद है, इसकी बनावट सबसे श्रेष्ठ है और इसका सौंदर्य, लालित्य तथा बनावट अनुपम तथा परिपूर्ण है। यह अतुलनीय और अद्वितीय है।'

अल-मुकद्दसी (945-991 सी ई) ने *अहसन-उत तक़सीम* में दमिश्क की मस्जिद के निर्माण के लिए अल-वलीद द्वितीय के अनुराग के बारे में अपने चाचा को उद्धृत करते हुए लिखा है, 'अल-वलीद बिल्कुल सही था। वह देख रहा था कि सीरिया एक ऐसा देश है, जहां ईसाई बसे हुए हैं। उसने वहां उनके चर्च देखे, जो अत्यंत सुंदर थे, जिनकी सजावट सम्मोहित कर देने वाली थी, जिनकी दूर-दूर तक प्रसिद्धि थी। इसलिए उसने मुसलमानों के लिए एक ऐसी भव्य मस्जिद का निर्माण शुरू कराया, जो चर्च से उनका ध्यान इधर खींच लेगी और दुनिया के आश्चर्यों में से एक होगी।'

बोध प्रश्न-1

1) मुआविया प्रथम ने अपनी खिलाफत की राजधानी क्यों बदली? उसने राजस्व के स्रोत बढ़ाने के लिए क्या उपाय किए?

.....

.....

.....

.....

.....

2) मलिक बिन मारवान ने उमय्यद खिलाफत की प्रकृति एक ढीले-ढाले संघटन से बदल कर केंद्रीकृत राज्य के रूप में कैसे बनाई?

.....

.....

.....

.....

.....

14.6 उमय्यदों की अर्थव्यवस्था : राज्य, व्यापार और सिंचाई

के. एन. चौधरी ने उमय्यद और अब्बासी राजवंश की अर्थव्यवस्था पर अत्यंत सटीक टिप्पणी की है कि वह तीन अवयवों पर आधारित थी – स्थायी खेती, नगरीकरण और लंबी दूरी का व्यापार।

14.6.1 स्थायी खेती

लाभ उठाने की व्यापक कोशिशों और विजित प्रदेशों में प्रवास के पीछे अरबों के प्राथमिक उद्देश्यों के बारे में अबू तम्माम (788-845 सी ई) ने *हमासा* में लिखा है:

वह जन्नत नहीं थी, जिसकी तलाश में तुमने पलायन किया
बल्कि, मैं सोचता हूं, तुम्हें रोटी और खजूर ने बुलाया था ।

उपर्युक्त अभिव्यक्त राय सिर्फ मारवानी काल के बारे में ही सच है, क्योंकि अब्दुल मलिक और उसके उत्तराधिकारी अल-वलीद द्वितीय के समय में अरबों को कृषि योग्य भूमि खरीदने की इजाजत थी। लेकिन प्रारंभिक इस्लामी काल में आम नियम यह था कि विजित प्रदेशों जैसे मिस्र, इराक और खुरासान में कृषि भूमि विजेता अरबों में पुनर्वितरित नहीं की जाती थी। जमीनें वहां के मूल बाशिंदों की निजी संपत्ति बनी रहती थीं। आरंभिक अरब शासकों को लगता था कि जमीन को ताकत से हड़पना या खरीद कर हासिल करना कोई आकर्षक सौदा नहीं होगा। हालांकि उमय्यदों की कृषि और परती जमीन (*मावात*) को कृषि योग्य बनाने में विशेष दिलचस्पी थी, क्योंकि इन पर उनके राज्य का राजस्व निर्भर करता था। *जजिया* और *खराज* उमय्यद राजस्व व्यवस्था की रीढ़ की हड्डी थे। अब्दुल मलिक के शासन काल में संपूर्ण जमीन और आबादी के सर्वेक्षण के बाद प्रति व्यक्ति केवल चार *दीनार* सालाना *जज़िया* लगाया गया था। इसके विपरीत उमय्यदों ने अच्छी जमीनें अपने कब्जे में लेकर उन्हें अपने संबंधियों और नातेदारों में बांटा। इस प्रथा से किसानों की निजी छोटी जमीन की मिल्कियत बड़ी कृषि भू-जागीरों में रूपांतरित हो गई।

मुआविया प्रथम ने अल-तैफ और मदीना में बांध और कुंए खुदवाए थे, जिन्हें मुख्य सिंचाई नहरों से जोड़ा गया था। अल-मकद्दसी के मुताबिक लेवांत में मुख्य फसल के रूप में खजूर, जैतून, अंगूर, सेब, नींबू, तरबूज, गन्ना, विविध प्रकार के रंगने के उत्पाद और शहद आदि प्राप्त होते थे।

उमय्यद गवर्नरों ने इराक और सीरिया में सिंचाई का पानी ले जाने के लिए भूमिगत नहरों और जल मार्गों (*कनात, कारेज़, फलज*) की खुदाई पर निवेश किया। इन कृषि उपायों के साथ इराक में खेती की नई-नई तकनीकों ने दक्षिणी अरब के अनेक कबीलों को अपनी जमीनें छोड़कर इन नवीन कृषि-जागीरों पर काम करने के लिए आकर्षित किया। इब्न खुर्दादबिह (820-912 सी ई) अपनी पुस्तक *किताब-उल मसालिक वल ममालिक* में वर्णन करता है कि उमय्यद गवर्नर मसलमा इब्न अब्दुल मलिक जिसे इराक में खारीजियों का विद्रोह दबाने के लिए भेजा गया था उसने वहां बड़े पैमाने पर कृषि और जल सुधार करवाये। सिंचाई की व्यवस्था और उसका रख-रखाव नगर अधिकारियों द्वारा किया जाता था, जिन्हें *साहिब अल-साक़िया* कहा जाता था जो पानी के वितरण का प्रबंधन करते थे। नीचे दी गई तालिका में हम हिशाम बिन अब्द अल-मलिक (724-743 सी ई) के शासन काल में *खराज* से प्राप्त होने वाली रकम के आंकड़े दे रहे हैं। ये आंकड़े अल-बालादुरी ने *फुतुह अल-बुलदान* में दिए हैं:

प्रांत	खराज की प्राप्ति
इराक	130,000,000 *दिरहम*
समरकंद	2200,000 *दिरहम*
मिस्र	12,000,000 *दीनार* और 48,000,000 *दिरहम*
फिलिस्तीन	400,000 *दीनार*
जॉर्डन	180,000 *दीनार*
दमिश्क	400,000 *दीनार*
हिम्स, किन्नासरी'न और अल-अवासीम	800,000 *दीनार*

इराक का गवर्नर अल-हज्जाज उन किसानों को नकद धनराशि और कृषि सामग्री लोन पर देता था, जो खेती का दायरा बढ़ाना चाहते थे ताकि इराक में आर्थिक बदहाली सुधारी जा सके। उसने वसीत के निकट अलसी'न नहर तथा अल-ज़ाबी और अल-नी'ल नाम की नहरें खुदवाईं और उन्हें दजला तथा फरात से जोड़ा। 8वीं शताब्दी में, जब उमय्यद साम्राज्य अपनी राजनैतिक सत्ता के चरम पर था, व्यापक, खेती और स्थायी जीवन के लिए हिशाम अब्दुल मलिक (724-743 सी ई) द्वारा दमिश्क और मक्का के बीच बड़े पैमाने पर सिंचाई नहरों (*कनात*) का संजाल, बांध और कुंए बनवाए गए। बाद में इसी भूमिगत नहर तकनीक (*कनात*) का विस्तार उत्तरी अफ्रीका और आइबेरियन प्रायद्वीप[2] में हुआ, जो इस्लाम के ऐतिहासिक विस्तार को दर्शाता है।

विजित भूमि आरंभ से ही तीन श्रेणियों में विभाजित की जाती थीः *स्वादफी / सवाफी* भूमि, *सुल्ह* भूमि और *अहल अल-ज़िम्माह* भूमि।

***स्वादफी / सवाफी* भूमिः** ये खास भूमि की लंबी पट्टियां होती थीं, जो खलीफा और उनके परिवार के लिए रखी जाती थीं। राज्य की संपत्ति की निगरानी के लिए एक अलग *दीवान* हुआ करता था। ऐतिहासिक स्रोतों में इन जमीनों को इमाम की *सवाफी* (*सवाफ अल-इमाम*) के रूप में दर्शाया गया है। ये दस तरह की होती थीं: (1) खुसरो की जमीन; (2) ईरानी राज परिवार के अन्य सदस्यों की जमीनें; (3) डाक चौकियां और डाक मार्ग; (4) अग्नि मंदिर (*बुयूत अल-नेरान*); (5) दलदली जमीनें (*अजम*); (6) युद्ध में मारे गए लोगों की जमीनें; (7) आर्द्र या जल भराव वाली जमीनें जैसे दक्षिणी इराक में *बतिहाह*; (8) वे जमीनें जहां के नागरिक युद्ध के समय जगह छोड़कर भाग गए; (9) वह जमीन जिसे खुसरो ने राजकीय जमीन – *सवाफी* घोषित कर रखा था; और (10) दीवारें (*अरजा*)।

सुल्ह भूमिः वे जमीनें, जिनके नागरिकों ने मुस्लिम विजेताओं का प्रतिरोध नहीं किया और उनसे शांति का समझौता कर लिया, वे *सुल्ह* भूमि कहलाई। वहां के लोगों से यह अपेक्षा की जाती थी कि वे सामुदायिक कर अदा करेंगे और अपनी जमीन की मिल्कियत बरकरार रखेंगे।

अहल अल-ज़िम्माहः संरक्षित गैर-मुस्लिमों की जमीनें।

राज्य के अधिकारी *सवाफी*, *सुल्ह* और *ज़िम्माह* की श्रेणी के अनुसार इन जमीनों के रिकार्ड तैयार करते थे।

उमय्यद काल के उत्तरार्ध में परिस्थितियां बदल गईं। अरब इतिहासकार इस बात के ठोस सबूत पेश करते हैं कि उमय्यद काल के बाद के समय में गरीब किसान अपनी परेशानियों की शिकायत करने लगे थे, पशु-पालकों में विद्रोह होने लगा था और पलायन जैसे प्रतिरोध सामने आने लगे थे। अल-राय अल-नुमायरी ने अब्दुल मलिक इब्न मारवान के सामने शिकायतों की एक फेहरिस्त पेश की थी, जिसमें बताया गया था कि कर (*जकात* और *खराज*) वसूलने वाले अधिकारियों की क्रूरता के कारण किसान कैसी आर्थिक बदहाली का शिकार बन रहे हैं और दयनीय जीवन बिता रहे हैं। किसान सरकारी जमीनों पर काम करने के लिए इराक की ओर पलायन कर रहे थे। वहां दो तरह की जमीनें थीं, *इक्ता अल-मुल्क*, जो निजी संपत्ति थी, और *इक्ता अल-इजार*, जो राज्य की जमीन थी और किसानों को खेती के लिए लगान प्राप्ति के लिए किराए पर दी जाती थी। अल-बालादुरी कहता है कि जब हिशाम के पूर्ववर्ती यजीद द्वितीय ने राज्य की वे जमीनें वापस लेने की कोशिश की, जो पहले किसानों को दी गई थीं, तो उसकी यह योजना न सिर्फ असफल हुई, क्योंकि इसके कारण

[2] आइबेरियन प्रायद्वीप आज के आधुनिक यूरोप का दक्षिण-पश्चिमी कोना है, जिसमें मोटे तौर पर स्पेन, पुर्तगाल, अंडोरा और जिब्राल्टर शामिल हैं।

न केवल हिंसक विद्रोह उठ खड़े हुए बल्कि खलीफा को राज्य की खालिसा जमीनों में से कुछ अतिरिक्त जमीनें अधिकारियों को भी देनी पड़ीं। उमय्यदों ने *नवरूज़* और *मिहराजान* त्योहारों के अवसर पर दो सासानी कर दोबारा लागू किए। अल-याकूबी, *तारीख़-याकूबी* में लिखता है कि मुआविया प्रथम ने 'मांग की कि *अस-सवाद* के लोग *नवरूज़* और *मिहराजान* के अवसर पर उसे उपहार और भेंट दें। तो उन्होंने वैसा ही किया, यह राशि लगभग दस हजार *दीनार* के बराबर थी।'

हालांकि आरंभिक इस्लामी काल में अरबों ने शायद ही कभी किसी स्थानीय आर्थिक व्यवधान को प्रोत्साहन दिया हो। उमय्यदों के काल में अरब साम्राज्य के कर ढांचे ने सामूहिक धर्मांतरण और विजित प्रदेशों में जमीन के व्यापक स्तर पर अधिग्रहण तथा उनके पुनर्वितरण को कोई प्रोत्साहन नहीं दिया गया। और न ही राज्य ने भूमि सुधार से स्वयं को अलग-थलग ही किया।

इसके अलावा, छावनी नगरों में रहने वाले अरब स्थायित्व के लिए अपना शौर्यपूर्ण पेशा छोड़कर बल्ख, इस्फहान और खुरासान के गांवों में घुलने-मिलने लगे, उनका कामकाज सीखने लगे और भूस्वामी अभिजात्यों की तरह रहने लगे। हम पहले वर्णन कर चुके हैं कि मुआविया प्रथम के शासन काल में 670 सी ई में 50,000 परिवार खुरासान में बसाए गए थे। 730 सी ई तक आते-आते मात्र 15,000 परिवार सैनिक सेवा में बचे रह गए थे। अन्य क्षेत्रों, जैसे अजरबाइजान में अनेक अरब कबीलाई मुखियाओं ने (ज्यादातर) अवैध ढंग से उजाड़ जमीनें हथिया लीं और उन्हें कृषि योग्य बना लिया। वे भूस्वामी बन गए और उन्होंने वहां नई खेतिहर बस्तियां बसाईं। ईरान में अरब, ईरानी सामाजिक ढांचे में शामिल हो गए, उन्होंने ईरानी महिलाओं से शादी की, वे ईरानी बोलने लगे और वहां के त्योहार मनाने लगे। उमय्यद खिलाफत के दौरान एक सहयोगी कर-तंत्र का विकास हुआ, जिसमें सुशिक्षित ईरानी *मवाली* प्रशासक, छावनी नगरों में रहने वाले अभिजात्य अधिकारियों तथा अपने अरब स्वामियों की ओर से राजस्व और करों का रजिस्टर (*दीवान*) संभालने लगे।

14.6.2 उमय्यद व्यापार, नगरीकरण और *सुक्क़* (बाज़ार)

एक उग्र मध्यकालीन इतिहासकार हेनरी पिरेन (1862-1935 सीई) के मुताबिक इन सभी जगहों पर अरबों की विजय ने 'यूरोप और एशिया में एक अभूतपूर्व भ्रम की स्थिति पैदा कर दी।' उनका (पिरेन) विचार है कि अरबों की विजय से पश्चिमी यूरोप की दूरस्थ व्यापारिक गतिविधियां गतिहीन होने लगीं और पूरब के रास्ते भी बंद होने लगे। यूरोपीय अर्थव्यवस्था बाधित होकर अंतर्मुखी बनने लगी और अपने निर्वाह के लिए उसका ग्रामीणीकरण (व्यापार से प्राप्त धन की अर्थव्यवस्था की जगह प्रकृति और जमीन पर आधारित अर्थ व्यवस्था) होने लगा क्योंकि पूरब से आने वाले सामानों की आपूर्ति बंद हो गई। हालांकि पुरातात्विक और दस्तावेजी साक्ष्य एक दूसरा ही चित्रण प्रस्तुत करते हैं। वे संकेत देते हैं कि पांचवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से ही भूमध्यसागरीय व्यापार में काफी गिरावट आ गई थी। वे इस वाणिज्यिक संबंधों में निरन्तरता के तथ्य को भी रेखांकित करते हैं, क्योंकि मिस्र से फ्रांसीसी मेरोविंजियन राजवंश (450-751 सी ई) के पंजिका कार्यालयों (chancery) में पपायरस (papyrus) की आपूर्ति आठवीं शताब्दी में भी काफी समय बाद तक पहुंचती रही।

आरंभिक इस्लामी बस्तियों का संघटन जो मुसलमानों की उन सैन्य छावनियों से निर्मित हुआ था, जिनमें कबीलाई सैन्य इकाइयां रहती थीं, के विपरीत उमय्यदों ने धीरे-धीरे उन छावनियों में रहने वाले अरबों को निहत्था कर दिया, जो बिना किसी बाधा के तत्कालीन बाइज़ेंटाइन और ईरानी नगरीय ढांचे में समाहित हो गए थे। अपने पूर्ववर्ती बाइज़ेंटाइनों की तर्ज पर उमय्यदों ने भव्य सांस्कृतिक परियोजनाएं आरंभ कीं। उन्होंने अपने नगरों और बस्तियों में आलीशान मस्जिदें, रेगिस्तानी महल, छावनियां और स्नानागार बनवाए, जो एक विशिष्ट

इस्लामी नगरीय प्रकृति और इस्लामी भवन निर्माण की साम्राज्यीय शैली का स्वरूप प्रदर्शित करते थे। इस्लामी विजय के क्रम में वसीत, बसरा, कूफा, फुस्तात, अंजार और इस तरह की अन्य नगरीय छावनी बस्तियाँ, आर्थिक गतिविधियों की बढ़ोतरी के आरंभिक उत्प्रेरक थे। उदाहरण के लिए, बड़े पैमाने पर भवन निर्माण की गतिविधियां, यातायात के लिए सड़कों का संजाल, आसपास के इलाकों से भोजन सामग्री, घरेलू इस्तेमाल की चीजों तथा औजारों की आपूर्ति आदि।

छावनी नगरों का निर्माण अतीत और भविष्य, दोनों से जुड़ा हुआ था। इसने औद्योगिक विस्तार को भी तेजी प्रदान की। आर्थिक सेवाएं देने के लिए इन नगरों में अन्य लोगों, खास तौर पर गैर-अरब व्यापारियों और दस्तकारों का आवागमन बढ़ने लगा। *मवाली* व्यापारियों के बारे में एक उमय्यद कवि अम्र बिन बहर ने अपनी एक काव्य रचना में टिप्पणी की है, 'मैंने इराक के बाजारों पर गौर किया तो पाया कि वहां मात्र *मवाली* उनकी दुकानों के मालिक हैं।' भवनों, जलकूपों, जलाशयों और सड़कों के संजाल जैसे आर्थिक ढांचागत निर्माण के लिए लोहा, कोलतार, डामर और संगमरमर की जरूरत थी। नगरों में अनके प्रकार के उद्योग बाजार की इन जरूरतों की आपूर्ति के लिए उभरे। इसकी वजह से तैफ में धातुकर्म, वस्त्र उद्योग और चमड़े का काम, मक्का में लौह भट्ठियां, हिजाज़ में स्वर्णकारी और अनेक नगरों में कागज बनाने के कारखाने फलने-फूलने लगे। कागज बनाने के लिए कपास, जूट और सिल्क का इस्तेमाल किया जाता था।

मध्य एशिया के अजरबाइजान, मिस्र और ईरान में अरबों के विस्तार से इन जगहों से सोना, चांदी और तांबे की आपूर्ति में विशेष तेजी आई। धातु के विशाल भंडारों के हासिल होने से उमय्यद सिक्कों को व्यापार और वाणिज्य के लिए मजबूत आधार प्राप्त हुआ। आठवीं शताब्दी के एक नगर के स्थानिक निर्माण और उसकी संस्कृति का प्रतीकात्मक वर्णन करते हुए अल-मकद्दसी टिप्पणी करता है कि, 'हलाब (एलेप्पो) एक शानदार और अच्छी तरह से किलेबंद नगर है ... यहां के बाशिंदे संपन्न और सुसंस्कृत हैं। यहां एक विशाल किला और एक भव्य मस्जिद है।'

अल-मकद्दसी विस्तार से ब्योरा देता है कि साबुन, कालीन, फर, उत्कृष्ट तलवारें, तीर-धनुष, अनेक प्रकार की छुरियां, सूई, कैंची और जामा ट्रांसऑक्सियाना के प्रमुख उत्पाद थे। खुरासान और ट्रांसऑक्सियाना कपास उत्पादन के महत्वपूर्ण केंद्र थे। अजरबाइजान और खुरासान सिल्क उत्पादों के लिए भी मशहूर थे। *इस्लामी क्षेत्र* में ही स्थित लेवांत का इलाका अपने शीशे के उत्पादों के लिए जाना जाता था। दमिश्क में एक विशेष प्रकार का चमकीला और मुलायम कपड़ा तैयार होता था, जिसे दमस्क कहते थे। हम पाते हैं कि उमय्यदों ने नगरों की स्थापना का शुभारंभ किया, मजबूत त्रि-धात्विक सिक्कों का प्रचलन शुरू किया और ऐसे धार्मिक तथा आर्थिक ढांचों का विकास किया, जो नगरीकरण की प्रक्रिया में बेहद मददगार साबित हुए। रेशम मार्ग क्षेत्र में इस्लामी विस्तार अल-वलीद प्रथम (705-715 सी ई) के काल में ही शुरू हुआ। उसने ट्रांसऑक्सियाना और फरगना को उनके व्यावसायिक केन्द्रों के साथ फतह करने हेतु खुरासान के उमय्यद गवर्नर कुतयबा बिन मुस्लिम को भेजा। उसने चीन के साथ व्यावसायिक और कूटनीतिक संबंध बनाने के लिए दूत भेजने शुरू किए, यह सिलसिला पूरे उमय्यद काल में जारी रहा।

इस्लाम पूर्व आइबेरियन प्रायद्वीप, अंतरराष्ट्रीय वाणिज्य के मामले में पिछड़ा रहा, लेकिन आठवीं सदी के बाद इसके व्यापारिक ढांचे में बदलाव आया और यह क्षेत्र धीरे-धीरे मुस्लिम जगत को पश्चिमी यूरोप से आर्थिक रूप से जोड़ने वाले पारगमन स्थल में तब्दील होने लगा। बाद की सदियों में स्पेन 'यूरोप का उपवन' (गार्डन ऑफ यूरोप) कहा जाने लगा। समुद्र के जरिए होने वाला अरब व्यापार, छोटे गोलाकार जहाजों, जिन्हें *नफ्स* कहा जाता था, के

माध्यम से होता था। बाजार निरीक्षक (*मुहतसिब*) *सुक्क़* में वस्तुओं के वजन और परिमाण का नियमन करते थे।

14.7 उमय्यद सुल्तान और प्रांत (*विलायत*)

उमय्यद प्रशासनिक ढ़ांचा संस्थागत हो गया, क्योंकि इसमें सैन्य तथा राजस्व प्रशासन की निगरानी के लिए अलग-अलग अनेक *दीवान* जिम्मेदार थे। उमय्यद खलीफा वस्तुतः पूरे साम्राज्य का प्रधान था। वह दरबार (कोर्ट), *शूरा* (सलाहकार परिषद्) तथा केंद्रीय *दीवानों* जैसे *दीवान अल-जुंद* (सैन्य मंडल) जिसकी स्थापना सबसे पहले खलीफा उमर के समय की गई थी, के माध्यम से अपनी नीतियां और प्रशासन चलाता था। वह मुख्य रूप से सैनिकों के नाम, उनके वंश और उनके वेतन भत्तों (*अलो*) की पंजिका तैयार करता था और उसका रख-रखाव करता था। *दीवान-ए खराज* (वित्त मंडल) एक अन्य विभाग था, जो राज्य के राजस्व की पंजिका तैयार करता था। मुआविया प्रथम ने *दीवान-ए रसायल* (पत्राचार मंडल) की स्थापना की, जिसका काम राजकीय संचार को सुगम बनाना था। उसने एक डाक प्रणाली की भी स्थापना की। *दीवान अल-खातम* (मोहर मंडल) प्रशासनिक पत्राचारों की गोपनीयता सुनिश्चित करता था और दस्तावेजों की जालसाजी से रक्षा करता था। इन *दीवानों* (सरकारी विभागों) की जरूरत आरंभिक इस्लामी काल में सैन्य और वित्तीय मामलों की देखरेख के लिए पैदा हुई। मुआविया प्रथम और अब्दुल मलिक ने उमय्यद सीमा क्षेत्र में *बरीद* व्यवस्था (गुप्तचर व्यवस्था) को मजबूत बनाया और उसके काम की विश्वसनीयता सुनिश्चित की। उमय्यदों, अब्बासियों और ऑटोमन शासकों द्वारा विशाल साम्राज्यों के केंद्रीकरण में *बरीद* जैसे तंत्र की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका थी।

उमय्यदों के जमाने में सीरिया में सैन्य उद्देश्यों के लिए चार प्रशासनिक खंड (*अजनाद*) थे। इनमें *फिलस्तीन* (फिलिस्तीन की स्थापना सुलैमान बिन अब्दुल मलिक ने 715 सी ई में की थी), जिसकी राजधानी रामला थी, *अल-उर्दून* (तिबरिस), *दिमश्क*, जिसकी राजधानी दमिश्क शहर था और *हिम्स* तथा उसके आसपास के क्षेत्र शामिल थे। बाद में 680 सी ई में उत्तर में एक पांचवां खंड *किन्नास्रीन* भी इनमें जुड़ गया। उमय्यदों के सभी प्रांतों (*विलायत*) में अपनी काली उर्वर जमीन (*अस-सवाद*), जलवायु और दजला तथा फरात जैसी नदियों के कारण इराक सबसे धनी था। इराक में दो बड़े छावनी नगर कूफा और बसरा थे। बाद में अब्दुल मलिक के समय में इराक के गवर्नर अल-हज्जाज द्वारा एक तीसरा छावनी नगर वासित भी बसाया गया। दोनों छावनियों कूफा और बसरा को सैन्य प्रशासन की आवश्यकताओं को देखते हुए 670 सी ई तक अलग-अलग बांट दिया गया। खुरासान उमय्यद साम्राज्य का एक अन्य बड़ा प्रांत था। मर्व और निशापुर इसके दो प्रमुख नगर थे। ट्रांसऑक्सियाना के सैन्य अभियान के लिए इसने आधार स्थल की भूमिका निभाई। मिस्र भी उमय्यदों के अधीन एक महत्वपूर्ण प्रांत था। उमय्यदों ने इन प्रांतों पर अपने प्रतिनिधियों और *शुर्ता* (पुलिस) की मदद से शासन किया। सत्ता में स्थानीय *अशराफों*, कबीलाई मुखियाओं और प्रांतीय अभिजात्यों की जगह सुनिश्चित की गई। उमय्यदों के पूरे प्रशासनिक ढांचे को बुनियादी तौर पर दो कार्य करने होते थे : एक *सैन्य कार्य* यानी सभी कबीलाई गुटों के बीच व्यवस्था बनाए रखना। और दूसरा, *नागरिक कार्य*, अर्थात कर संग्रहण (*खराज* और *ज़कात*) में राज्य की सहायता करना।

14.8 उमय्यद वंश का पतन

744 सी ई के बाद जब सीरियाई सैनिकों ने खलीफा अल-वलीद द्वितीय की हत्या कर दी, तब दावेदारों के बीच फिर से गृह-युद्ध शुरू हो गया, जिसे इस्लामी इतिहास में तीसरे *फितना* के नाम से याद किया जाता है। उमय्यद खलीफा के रूप में यज़ीद तृतीय (744 सी ई) के

राज्यारोहण को बाद में मारवान द्वितीय ने अस्वीकार कर दिया, जो कतई सुलह नहीं चाहता था। उसने आरमेनिया से अपनी सेना लेकर दमिश्क पर आक्रमण कर दिया। अपने समर्थकों की मदद से उसने यजीद तृतीय को बुरी तरह से परास्त किया और खुद को खलीफा घोषित कर दिया। मारवान द्वितीय को क़ल्बी गुट की वजह से नहीं, बल्कि असल में प्रभुत्वशाली क़ै'सी कबीलाई सेना का समर्थन मिल जाने से ताकत मिली। इस गृह-युद्ध की वजह से अनेक बगावतें भड़क गईं और इराक, मिस्र, खुरासान तथा हिजाज़ में आंतरिक लड़ाइयां होने लगीं। मारवान द्वितीय (744-750 सी ई) कूफा में बगावत की आग बुझाने में व्यस्त रहा, जिसका नेतृत्व एक अली वंशीय, अब्दुल्लाह बिन मुआविया कर रहा था। 746 सी ई में अब्दुल्लाह अल-याहया और अल-मुख्तार के नेतृत्व में *इबादी खारिजियों* ने विद्रोह कर दिया, जो हिजाज़ से उमय्यदों को बाहर खदेड़ने की योजना बना रहे थे। लेकिन मारवान द्वितीय ने उन्हें परास्त कर दिया। उसने अत्यंत प्रभावशाली ढंग से हिजाज़ और यमन में *खारिजी* विद्रोह, कूफा में अली अनुयायी शियाओं का विद्रोह और इसी तरह का एक और विद्रोह सीरिया में कुचल दिया। वास्तव में ये सारे विद्रोह इसलिए कुचले जा सके, क्योंकि उनके पास संगठनात्मक और विचारधारात्मक समर्थन का अभाव था।

स्पष्टतः कूफा के अली के अनुयायी क्रांतिकारी पहले भी 736 सी ई में केंद्र में बगावतें कर उमय्यदों को सत्ता से बाहर निकालने में असफल रहे थे। इन स्थितियों में अब्बास अल-सफ्फाह और उसके कबीले के लोगों ने खुरासान के शहर मर्व में घुसपैठ बनाई, *इमामत* की अपनी पहचान छुपाए रखी, भूमिगत गतिविधियां चलाने के लिए अपने गोत्र के लोगों (*निस्बाह*) से गुप्त रूप से संपर्क साधा, और वहां के शोषित, पीड़ित, खासकर असंतुष्ट आबादी के बीच उनके *उद्धार* करने का संदेश प्रसारित किया, ताकि अपने आंदोलन के पक्ष में उनका समर्थन प्राप्त कर सकें (*अल-रिदा मिन अह्ल-बैत*)। इस पृष्ठभूमि में उमय्यदों की सैन्य कमजोरियों ने अब्बासिदों का साहस बढ़ाया, जो खलीफा हिशाम के शासन काल में उजागर होने लगी थीं। उमय्यद सेना को काकेशियन खानाबदोशों (खज़ार), जिन्होंने आरमेनिया पर धावा बोल दिया था, के साथ लड़ाई में भारी नुकसान उठाना पड़ा था। उत्तरी अफ्रीका में बरबर मुसलमानों ने तथा ज़ैद इब्न अली ने कूफा में विद्रोह कर दिया। हिशाम कॉस्टेंटिनोपोल पर निरर्थक हमले और घेरेबंदी करता रहा, जिससे राजकीय कोष खाली हो गया। विद्रोहियों को दबाने में मारवान द्वितीय की व्यस्तता ने एक कुशल सेनापति अबू मुस्लिम के नेतृत्व में खुरासानियों की उम्मीदों को हवा दी।

खुरासान एक दूर-दराज का प्रांत था, जो 747 सी ई में नासिर इब्न सियार और हरीथ के आपसी झगड़ों की वजह से तहस-नहस हो चुका था। हाशिमी-अब्बासी प्रचार (*दावों*) से उत्साहित होकर जल्दी ही अबू मुस्लिम ने भी काला झंडा उठा लिया और खुरासान में 7000 सैनिकों की एक फौज खड़ी कर ली। मर्व में उसने खुरासान के उमय्यद गवर्नर नासिर (मृत्यु 748 सी ई) को बुरी तरह परास्त किया। सिर्फ दो साल के भीतर अब्बास अल-सफ्फाह की सेना, जिसे इराकी *शियाओं* के साथ यमनी कबीले और मर्व में रहने वाले कुछ ईरानी *मवालियों* का समर्थन प्राप्त था, वह अबू मुस्लिम के नेतृत्व में कूफा में प्रवेश कर गई, उत्तरी इराक के पास उमय्यदी सेना से उनकी भिड़ंत हुई और इसने ज़ैब के महान् युद्ध (जनवरी 750 सी ई) में उमय्यदी राजवंश के भविष्य पर सदा के लिए मोहर लगा दी।

बोध प्रश्न-2

1) उमय्यदों के बांध बनवाने और भूमिगत सिंचाई नहरों के निर्माण से कृषि और किसानों पर क्या प्रभाव पड़ा?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) उमय्यद खिलाफत के समय के व्यापार और नगरीकरण की प्रक्रिया पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। क्या आप इस बात से सहमत हैं कि अरबों की फतह से बड़े पैमाने पर आर्थिक और सामाजिक व्यवधान पैदा हुए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

14.9 अब्बासी खिलाफत : अब्बास और मंसूर

अब्बासी खिलाफत की स्थापना (750 से 1258 सी ई) अब्बास अस-सफ्फाह (750 से 754 सी ई) द्वारा की गई, जिसने कूफा की प्रतिष्ठित मस्जिद में खलीफा के रूप में निष्ठा की शपथ ली। वहां उसने निर्भीक भाव से उद्घोषणा की, 'अपने आप को तैयार रखो, क्योंकि मैं निर्मम खून बहाने वाला (अस-सफ्फाह) हूँ और विनाश करने वाला प्रतिशोधक हूँ ... अल्लाह ने हमें कुलगोत्र से अपना संदेशवाहक चुना है... उसने हमें अपने वृक्ष की शाखा बनाया है... उमय्यदों ने इस पर (*खिलाफत* पर) अपना एकाधिकार जमा रखा था और हमारे लोगों पर वे अन्याय कर रहे थे। और आखिर में अल्लाह ने अपने लोगों को यह अधिकार वापस दे दिया...।'

चूंकि अब्बासियों ने खिलाफत को अपना पैगम्बर का उत्तराधिकारी होने का अधिकार बताया था, फिर भी उन्होंने अपने शिया अली अनुयायी साथियों को *अहल अल-बैत* का वंशज होने का अधिकार देने से तुरंत मना कर दिया। उन्होंने उमय्यदों के अन्याय से आजाद हुए *खारिजियों* और *मवालियों* को भी समाज का अभिजात्य वर्ग मानने से इनकार कर दिया। अब्बास ने अपनी सारी उर्जा उन उमय्यदों, असंतुष्ट शियाओं और सेनापतियों को खोज कर निकालने, उन्हें बेअसर बनाने और उन्हें खत्म करने में लगाई, जो किसी भी रूप में उसकी सत्ता के लिए चुनौती बन सकते थे। 751 सी ई में अब्बास ने दमिश्क पर कब्जा कर लिया। बाद में अब्बास द्वारा सभी उमय्यद राजकुमारों को मिस्र में एक 'शांति भोज' पर बुलवाया गया, जहां उसने उन सभी के सर कलम करने के लिए हत्यारे नियुक्त कर रखे थे। इसीलिए अब्बास को *अस-सफ्फाह* (खून बहाने वाला) कहा जाने लगा। उस नृशंस रक्तपात में उमय्यदों में से सिर्फ एक विशिष्ट राजकुमार अब्दुर रहमान बच निकला, जो स्पेन भाग गया और बाद में वहां का शासक बना।

इस्लामिक इतिहास में अब्बासी क्रांति के रूप में मशहूर, अब्बासी सत्ता की स्थापना ने दो महत्वपूर्ण परिवर्तनों की आधारशिला तैयार कीः एक, इसने लंबे समय से चल रही क्षेत्रीय इस्लामी लड़ाइयों की समाप्ति की। दूसरे, इसने न सिर्फ प्रशासन और सेना में उच्च स्तर (*अब्न-उद दौलाह*) पर खुरासानियों के प्रभुत्व का रास्ता खोला, बल्कि अपने केंद्रीय

प्रशासनिक ढांचे में *वज़ीर* (सहायक) के पद को भी निर्णायक बनाया। अब्बास अपने राजकीय मामलों का प्रबंधन कूफा से करता था। इराक में उमय्यदों को परास्त करने के बाद अब्बास ने अपने विश्वस्त मार्गदर्शक अबू सलामा अल-खलाल को *वज़ीर* (*वज़ीर अल-मुहम्मद*) नियुक्त किया, लेकिन वह शीघ्र ही मारा गया। खालिद अल-बरमक को *दीवान अल-खराज* (राजकोष का सचिव) बनाया गया, क्योंकि विद्रोह के समय उसने खुरासान में *खराज* की वसूली की थी। अब्बास अस-सफ्फाह ने प्रांतों का शासन अपने विश्वस्त गवर्नरों के माध्यम से चलाया – जो या तो अब्बासी कुलगोत्र के सदस्य थे या जो अब्बासी वंश के उद्देश्यों के प्रति समर्पित थे। अबू ज़फर, जो बाद में अब्बास अस-सफ्फाह का उत्तराधिकारी बना, को इराक, अजरबाइजान और आरमेनिया का गवर्नर बनाया गया। हिजाज, यमामा और यमन का दायित्व दाउद बिन अली को सौंपा गया। इब्न अली को सीरिया का गवर्नर नियुक्त किया गया। सेना की कमान आकर्षक व्यक्तित्व वाले खुरासानी योद्धा अबू मुस्लिम के हाथों में सौंपी गई। अब्बास अस-सफ्फाह (मृत्यु 754 सी ई) ने अबू जाफर अल-मंसूर को अपना उत्तराधिकारी नामजद किया, जिसे अब्बासी खिलाफत का असली संस्थापक भी माना जाता है।

प्रतिद्वंदियों का दमनः अब्बासी राज्य के असली संस्थापक अल-मंसूर (754-775 सी ई) ने न सिर्फ अपने प्रतिद्वंदियों का सफाया किया, बल्कि उन लोगों को भी हटाया, जिन्होंने पहले अब्बासियों से हाथ मिलाया था, क्योंकि वह अब्बासी शासन को उनके उद्धारक आंदोलनों से अलग करने की कोशिश कर रहा था। रवादानिया अतिवादियों (*गुलु*) समर्थकों पर मंसूर ने 758 सी ई में अपना शिकंजा जकड़ा। अबू मुस्लिम को एक बड़े खतरे के रूप में उभरता देख अल मंसूर ने 755 सी ई में उसकी हत्या करवा दी। खजारों को आगे आरमेनिया पर हमले से रोक दिया गया। बाद में अल-मंसूर को मुहम्मद अल-ज़किया (मदीना) और इब्राहीम (बसरा) के नेतृत्व में उभर रही अली अनुयायिओं की बगावत को भी 762 सी ई में दबाना पड़ा। अल-मंसूर ने तबरिस्तान की विजय का अभियान भी शुरू किया था।

राजधानी का स्थानांतरणः खलीफा अल-मंसूर एक समझदार और 'दीर्घकालिक निश्चय के साथ चलने वाला' व्यक्ति था। केंद्रीय प्रशासनिक तंत्र का आकार बढ़ने के कारण, खालिद अल-बरमाक की सलाह पर 762 सी ई में अब्बासी खिलाफत की अपनी राजधानी वह दमिश्क से स्थानांतरित कर तिगरिस नदी के किनारे ले गया। इस नए राजधानी नगर का नाम *मदीनत - उस सलाम* (बगदाद) रखा गया। यह भूमध्यसागरीय क्षेत्र से ईरानी प्रभुत्व वाले सार्वभौमिक क्षेत्र की ओर एक बड़ा स्थानांतरण था। बगदाद जल्दी ही एक बड़ा व्यापारिक केंद्र और विशेषकर ईरानी सर्वदेशीयता का प्रतीक बन गया। संभवतः महत्वपूर्ण रूप से अब्बासी सत्ता को ईरानी भाषीय *मवालियों* के बीच केंद्र में रखा गया। अल-मंसूर ने अत्यंत सफलतापूर्वक बगदाद में एक ऐसा नया साम्राज्यिक अभिजात्य वर्ग तैयार किया, जिसमें अरब और गैर-अरब दोनों शामिल हुए। अब्बासी साम्राज्य का कृषीय और वित्तीय आधार होने की वजह से इराक और खुरासान भी उसके अस्तित्व के लिए जीवन रक्षक बने रहे।

***वज़ीर* का संस्थागत दर्जाः** *वज़ीर* का पद जो अब्बासी खिलाफत के साथ स्थापित हुआ था, अल-मंसूर के शासन में एक संस्था के रूप में स्थापित हो गया। एक ईरानी, अबू अयूब को *वज़ीर* नियुक्त किया गया, जो केंद्रीय प्रशासन का नियंत्रण करता था। अब्बासी प्रशासनिक पद-सोपान में *वज़ीर* सर्वोच्च अधिकारी था। वह अपने पद के लिए काफी हद तक खलीफा की सद्भावना पर आश्रित था। इसके पहले *वज़ीर*, राजकुमारों के निजी सलाहकार और मार्ग दर्शक मात्र हुआ करता था। हालांकि अल-मंसूर ने स्वयं किसी निरंकुश की तरह शासन किया और *वज़ीर* को उसने शायद ही ऐसा कोई

अधिकार दिया हो, जिसका वह प्रयोग कर सके। कौशल और दक्षता के आधार पर उसने *मवालियों* को भी *वज़ीर* बनाया। अल-बालादुरी और तबरी ने अबू अयूब को *कातिब अल-मुनिईन* (खलीफा का कलमनवीस) के रूप में वर्णित किया है, *वज़ीर* के रूप में नहीं। बाद में उच्च पदस्थ कुशल बरमाकिद *वज़ीरों* ने प्रशासन का केंद्रीकरण किया। वे अब्बासी राज्य के राजस्व को नियंत्रित करते थे, खलीफा और अन्य प्रशासनिक अधिकारियों के बीच संपर्क का काम करते थे और *उलेमा*, कवि, विद्वान तथा अन्य प्रतिभाओं को संरक्षण प्रदान करते थे। ये सारे कार्य वे (*वज़ीर*) मज़ालिम (फरियाद विभाग) की बैठकों के माध्यम से करते थे।

***वाला* संस्थाः** अब्बास अल-सफ्फाह ने सेना का नियंत्रण अबू मुस्लिम खुरासानी के हाथों में छोड़ रखा था, लेकिन खलीफा के पद की ताकत बढ़ाने के लिए अल-मंसूर ने अबू मुस्लिम का कत्ल करवा दिया था, ताकि खुरासानियों से सैन्य शक्ति छीनी जा सके। अब्बासी साम्राज्य का सैन्य-राजनैतिक अभिजात्य वर्ग, खुरासानी क्रांतिकारियों तथा ईरानी पृष्ठभूमि वाले प्रभुत्वशाली बरमाकिदों से भरा हुआ था। उन्हें बड़े पैमाने पर केन्द्रीय नौकरशाही में नियुक्त किया गया लेकिन प्रांतीय गवर्नरों के पद सीरियाई साम्राज्यीय सेना के हाथों में ही बने रहे। आरम्भ में अरब, *मवालियों* को गुलाम के बराबर समझते थे, क्योंकि वे योद्धाओं के विपरीत शांतिप्रिय किसानों की तरह व्यवहार करते थे। अतः उन्हें *दीवान अल-जुंद* में नियुक्ति का गौरव प्रदान नहीं किया गया। इसके अलावा, *मवालियों* से कई किस्म के अतिरिक्त कर वसूले जाते थे, जैसे *जिजिया*, *खराज*, *उश्र* (सिंचित भूमि पर पैदा होने वाली फसल पर लिया जाने वाला कर, जो 5 से 10 प्रतिशत तक होता था) आदि। अब्बासी काल में अल-मंसूर ने सैन्य कार्यों के लिए गैर-अरबों को नियुक्त किया और उन्हें व्यक्तिगत रूप से 'संविदात्मक *वाला*' की मार्फत अब्बासी परिवार से जोड़ा। इस गैर-अरबी सामाजिक साहचर्य में विभिन्न प्रकार की जातियां-प्रजातियां शामिल थीं, जिन्हें *मावला अमीर उल मुमिनीन* कहा जाता था और जिन्हें प्रांतीय गवर्नर जैसे उच्च सरकारी पद प्रदान किये गये। अल-मसूदी ने अल-मंसूर को उमय्यद खलीफाओं के आचरण की निंदा करते हुए उद्धृत किया है कि उनका कार्य धर्म के अनुरूप नहीं था। मक्का में अपने एक भाषण में अल-मंसूर ने कहा, 'ऐ लोगों, मैं धरती पर ईश्वर की शक्ति का प्रतिनिधित्व करता हूं, मैं ईश्वरीय मदद से तुम्हारा नेतृत्व करता हूं ... ईश्वर ने मुझे इसका न्यासी बनाया है और इसकी देखरेख की जिम्मेदारी सौंपी है।'

14.10 अब्बासी खिलाफत : हारून और अल-मामून

अपने भाई अल-हादी की हत्या के बाद हारून (766-809 सी ई) खलीफा बना। अब्बासी साम्राज्य के खलीफा के पद पर आसीन होने के पहले वह अनेक प्रांतों जैसे सीरिया, आरमेनिया, इफ्रीकिया (आज का ट्यूनिशिया, पश्चिमी लीबिया और पूर्वी अल्जीरिया) तथा अजरबाइजान के विजेता सैन्य कमांडर के रूप में अपनी सेवाएं दे चुका था। उसने चीन और बाइज़ेंटाइन के साथ अच्छे संबंध बना कर रखे और उनके साथ व्यापक स्तर पर राजनयिक तथा व्यापारिक संबंध फिर से बहाल किए। हारून अल-रशीद को विरासत में जो अब्बासी साम्राज्य मिला, वह राजनैतिक रूप से स्थिर और आर्थिक रूप से समृद्ध था। जिसने सरकारी संस्थाओं, व्यापार, साहित्य, कला और संगीत के क्षेत्र में असाधारण विकास का मार्ग प्रशस्त किया। उसने विशालकाय भवनों, नगरों, समुद्री बेड़ों और बंदरगाहों के निर्माण में निवेश किया। अब्बासी खिलाफत की सीमाएं पश्चिम में मिस्र से पूरब में मध्य एशिया और भारत तक फैल गईं (अब्बासी खिलाफत के क्षेत्रीय विस्तार के लिए देखें 8-11वीं शताब्दी के मध्य की अब्बासी खिलाफत का मानचित्र *वर्ल्ड हिस्ट्री टू 1500*, विलियम एवं जैक्सन, पृ. 198).

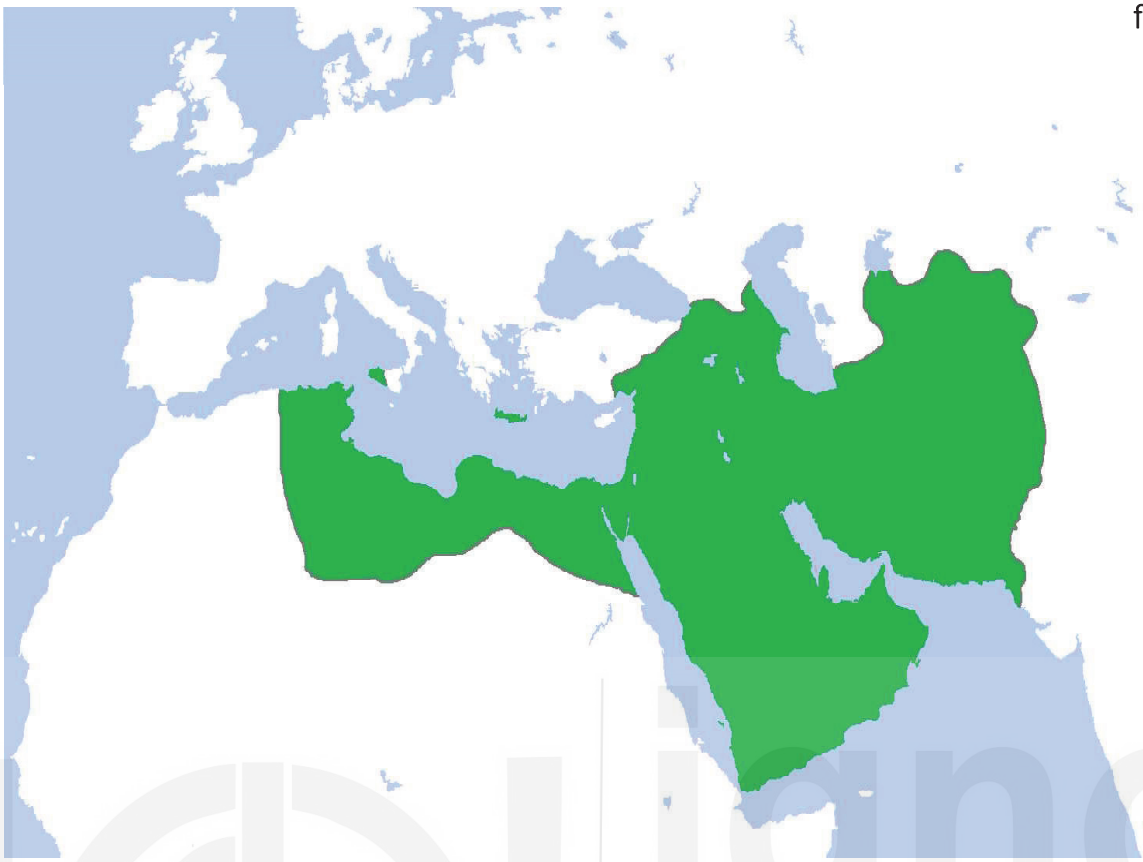

मानचित्र 14.1: अब्बासिद खिलाफत, लगभग 850 सी ई
साभारः गाबागूल, अप्रैल 2009।
स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/e/e1/Abbasids850.png

इफ्रीकिया प्रांत को अर्धस्वायत्तताः हारून को अपने शासन के उत्तरार्ध में राजनैतिक अस्थिरता का सामना करना पड़ा। इसकी वजह से प्रांतीय गवर्नरों को खुली छूट मिल गई बरमाकिद परिवार ने इफ्रीकिया को भी अन्य प्रांतों की तरह नियंत्रित करने की कोशिश की। लेकिन उनके तमाम केंद्रीयकरण के प्रयत्न असफल हो गए, जब 800 सी ई में हारून को इफ्रीकिया के गवर्नर इब्राहीम अल-अगलब को अर्ध-स्वायत्त दर्जा देने को बाध्य होना पड़ा। अगलबियों ने 800-909 सी ई तक इफ्रीकिया के सैन्य और राजस्व का प्रशासन संभाला। अगलबी सिर्फ नाम मात्र की अब्बासी खिलाफत की सत्ता स्वीकार करते थे और सालाना उन्हें भेंट देते थे।

बरमाकिद परिवार का विनाशः इतिहासकार अल-तबरी के अनुसार हारून अल-रशीद ने सितंबर 787 सी ई में याहया बिन खालिद बिन बरमक को *वज़ीर* नियुक्त किया। इसमें कोई संदेह नहीं कि हारून ने *वज़ीरों* के बरमाकिद परिवार से अच्छे व्यक्तिगत रिश्ते बनाए थे, लेकिन धीरे-धीरे खलीफा और बरमाकिद परिवार के बीच अविश्वास बढ़ता गया और कभी सबसे शक्तिशाली रहे अल-बरमाकी परिवार का अंतिम रूप से सफाया जनवरी 803 सी ई में हो गया, जब खालिद अल-बरमाक की हत्या कर दी गई। इसी के साथ अब्बासी साम्राज्य के राजनीतिक और सीमाई पतन के दौर की भी शुरुआत हो गई।

खलीफा हारून अल-रशीद ने अल-अमीन को अपना पहला उत्तराधिकारी (*वली अल-अहद*) घोषित किया था, जिसके बाद अल-मामून को खिलाफत मिलनी थी। हारून ने 802 सी ई में मक्का में इस पदारोहण की व्यवस्था के दस्तावेज तैयार करवाए थे, जिसके अनुसार अल-अमीन को साम्राज्य का गवर्नर बनाया जाना था और सांत्वना के रूप में अल-मामून को खुरासान सौंपा जाना था। तैयब अल-हिबरी सहित अनेक इतिहासकार हारून की 802

सी ई की मक्का की प्रसंविदा (दस्तावेज) की इस व्याख्या से असहमति जताते हैं। उनका तर्क है कि अल-मामून ने बाद में इसमें फेर बदल करवा दिया, जिसकी वजह से 'वह असंगत ढंग से अल-मामून के पक्ष में हो गया।' हालांकि 809 सी ई में अल-अमीन (मृत्यु 813 सी ई) और अल-मामून (786-833 सी ई) के बीच एक खूनी गृह-युद्ध (चौथा *फितना*) छिड़ा, जो चार वर्षों से भी ज्यादा समय तक चलता रहा। ईरानियों के समर्थन से अल-मामून अंततः अल-अमीन को हटाने में सफल हुआ। अल-मामून (813-833 सी ई) के अधीन अब्बासी साम्राज्य ने अत्यधिक बौद्धिक जीवंतता, लोक विद्रोह, सीमा का संकुचन और अब्बासी प्रभुत्व का पतन होते देखा।

अल-मामून (813-833 सी ई) अपने आरंभिक छह वर्षों तक मर्व नगर में खुरासानी कुलीनों के बीच रहा। अब्बासी साम्राज्य का प्रशासन *वज़ीर* अल-फद्ल इब्न सहल चलाता था। अल-फद्ल का भाई अल-हसन इब्न सहल वित्तीय मामलों का मंत्री था। अल-मामून एक नई सैन्य नीति लेकर आया, जिसे एक खुरासानी योद्धा ताहिर इब्न हुसैन ने लागू करवाया और जिसे खलीफा ने पूरी अब्बासी सेना का प्रमुख नियुक्त किया। इस नीति ने अरब वर्चस्व पर चोट पहुंचाई और अब्बासी सेना से धीरे-धीरे उनकी टुकड़ियां खत्म होने लगीं। इस बीच खलीफा ने दो तरह की सेना गठित कर खुरासानियों, विशेषकर ताहिरियों की ताकत पर भी लगाम कसीः

शाकीरिया : ये वो स्वतंत्र सैन्य इकाइयां थीं, जिनका गठन और देखरेख उनके अपने ट्रांसऑक्सिनियाई, आरमेनियाई और उत्तरी अफ्रीकी सामंत करते थे। वे खलीफा के सीधे नियंत्रण में नहीं थे। वे अक्सर ताहिरियों की शक्ति को संतुलित करने के काम आते थे। *मग़रिबी* सैन्य टुकड़ियां (उत्तरी अफ्रीकी सैन्य डिविज़न) *शाकीरिया* सैन्य दल का हिस्सा थीं।

ग़िलमन : यह सेना बुनियादी रूप से तुर्की के गुलाम सैनिकों से बनी थी, जिन्हें ट्रांसऑक्सियाना के सीमांत क्षेत्र से या तो पकड़ा गया था या खरीदा गया था। तुर्की गुलाम सैनिकों ने खलीफा की ताकत में इजाफा किया। ये तुर्की सैनिक जल्दी ही बगदादी लोगों से झगड़ने लगे। उन्होंने बगदादी सेना में कुछ अरबी सैनिकों को भी मार दिया। आखिरकार अल-मौआ तसिम के पास और कोई विकल्प नहीं बचा और उसे अपना राजधानी नगर उत्तरी बगदाद में समारा (838 सी ई) में बसाना पड़ा, ताकि सैन्य टुकड़ियों को आम जनता से अलग रखा जा सके।

अल-मामून की खिलाफत के दौरान (813-833 सी ई) समरकंद, फरगना और हेरात के गवर्नर राज्य के निगरानी के बिना सत्तारूढ़ परिवारों से वंशानुगत रूप से नियुक्त किये जाते थे। ट्रांसऑक्सायाना में सामानी और 820 सी ई के बाद खुरासान में ताहिरी भी वंशानुगत रूप से नियुक्त होने लगे।

ट्रांसऑक्सियाना से गुलाम सैनिकों का अधिग्रहण

अल-बालादुरी के अनुसार 'अल-मामून खुरासान में अपने *आमिलों* को लिखता रहता था कि वे ट्रांसऑक्सियाना में उन लोगों पर छापा मारें, जिन्होंने अब तक आत्मसमर्पण नहीं किया और इस्लाम को स्वीकार नहीं किया है। वह अपने दूत भेजता था, जो जाकर रजिस्टर (*दीवान*) में उन लोगों के लिए पेंशन जारी करें, जिन्हें वह पसंद करता था। वह इन क्षेत्रों के लोगों और वहां के सुल्तानों के बेटों की सद्भावना चाहता था और उपहार देकर उन्हें अपने पक्ष में मिलाना चाहता था। वे जब उसके दरबार में आते थे, तो वह उनका सत्कार करता था और ढेरों आशीर्वाद देता था। जब मआतसिम खलीफा बना, तो उसने अपने इस पूर्ववर्ती का यहां तक अनुकरण किया कि उसकी सेना के ज्यादातर सेनानायक ट्रांसऑक्सियाना की सैन्य टुकड़ियों, सोग्दियान, फरगना और उश्र'उसाना, अशाश तथा अन्य क्षेत्रों से लिए गए। उनके सुल्तान उससे मिलने आते थे। उन क्षेत्रों में इस्लाम प्रमुख धर्म बन गया। और उन देशों के बाशिंदे वहां से बाहर जाकर तुर्कों के खिलाफ युद्ध करते थे' (***फुतुह अल-बुलदान***, भाग 2: 205).

अल-मामून को बाइज़ेंटाइनी सीमा पर चली लंबी लड़ाइयों के लिए कम और मिह्ना (धर्माधिकरण), इस्लामी धर्मज्ञानियों के एक समूह मआतज़िलों के लिए अपने समर्थन (विस्तार से जानने के लिए देखें ***इकाई 15***) तथा ज्ञान सदन (*बैत-उल हिकमा*) को आर्थिक मदद देने के लिए अधिक याद किया जाता है। उसका शासनकाल जीवंतता और ओजस्विता से परिपूर्ण था और वह इस्लाम के बौद्धिक इतिहास का एक यशस्वी काल खंड है। खलीफा द्वारा पृथ्वी का एक नक्शा भी तैयार करवाया था – नीचे दिया गया चित्र देखें।

चित्र 14.7: *सूरत-उल अर्ज़* (पृथ्वी का चित्र): अल-मामून

साभार : इब्न फज़लउल्लाह अल-उमरी (1301-1349) की *मसालिक अल-अबसार,* तोपकापी सरे म्यूजियम, इस्तान्बूल, अहमेट 2797, पृ. 292v-293r।

स्रोतः http://www.myoldmaps.com/early-medieval-monographs/2261-ibn-fadi-allah-al/2261-al-umari.pdf

किन आंतरिक कारणों ने अल-मामून को इस धारणा को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित किया कि *कुरान* की रचना की गई थी? प्रारंभिक इतिहासकारों में यह धारणा प्रचलित थी कि अल-मामून एक 'मुक्त चिंतक' था, इसलिए *मिहना* (धर्माधिकरण) के माध्यम से उसने *उलेमाओं* की सच्चाई उजागर करने और उनका रुतबा नीचा करने की कोशिश की। पैट्रिशिया क्रोन और मार्टिन हाइंड्स ने अल-मामून के *मिहना* के बारे में एक अधिक संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। उमय्यदों ने *उम्मा* के नेतृत्व का दावा तीन आधारों पर किया थाः धार्मिक प्राधिकार और धार्मिक तथा कानूनी मामलों में हस्तक्षेप; इस्लाम में विश्वास नहीं करने वालों (बाइज़ेंटाइनों) के खिलाफ युद्ध; तथा *हज* यात्राओं का नेतृत्व और सुरक्षा प्रदान करना। अब्बासी शासकों, जैसे हारून ने अनेक बार हज की यात्रा की। फिर भी धर्म और धर्मज्ञान का आधिकारिक और प्रामाणिक विद्वान *उलेमाओं* को ही माना जाता था। अल-मामून ने *उलेमाओं* को बाहर कर उस खोई हुई धार्मिक सत्ता को फिर से वापस हासिल करने का प्रयास किया। इसलिए उसने अब्बासी शासन के अधीन *उलेमाओं* और *काज़ियों* पर निशाना साधा और उन्हें खलीफा या राज्य द्वारा की गई कानून की व्याख्या को स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। और इसके लिए उनका उत्पीड़न भी किया। लेकिन धर्माधिकरण आखिरकार असफल साबित हुआ, क्योंकि, जैसा कि पैट्रिशिया क्रोन ने टिप्पणी की कि,

'खलीफा की समस्या यह थी कि *उलेमाओं* (धार्मिक विद्वानों) का कोई एक ऐसा संगठित रूप नहीं था, जिसे वह सामूहिक रूप से दबा सके। वे सब धार्मिक नेता थे, जो अपने अनुयायियों के अनौपचारिक समर्थन से अपनी प्रतिष्ठा हासिल करते थे। वे नीचे से उभर कर आते थे और खलीफा के पास ऐसी कोई तजवीज नहीं थी, जिससे वह उनसे उनकी यह ताकत या रुतबा छीन सके।' *मिहना* (धर्माधिकरण) की प्रताड़ना तब तक चलती रही, जब तक बड़े पैमाने पर शुरू हुए विरोधों ने 848 सी ई में खलीफा अल-मुतवक्किल को इसे (*मिहना* को) त्याग देने के लिए मजबूर नहीं कर दिया।

14.11 बाद के अब्बासी खलीफा

अल-मआतसिम (833-842 सी ई) के शासन के दौरान तबरिस्तान और अजरबाइजान (बबक द्वारा; मृत्यु 838 सी ई) में अनेक आंतरिक विद्रोह हुए। तुर्की के भाड़े के सिपाहियों की भर्ती कर पहले उन्हें महलों के अभिजात्य रक्षाकर्मियों के रूप में नियुक्त करके, और बाद में 837-838 सी ई में बाइज़ेंटाइनों के खिलाफ अभियान में उन्हें इस्तेमाल कर मआतसिम ने इस्लामी राजनीतिक इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ा। खुरासानी और अरबों के विपरीत, तुर्की अत्यंत कुशल घुड़सवार तीरंदाज थे। वे अपने स्वामी, यानी खलीफा के प्रति पूरी तरह से निष्ठावान थे। उसने *दीवान* से अरबों को सामूहिक रूप से बाहर करने की कीमत पर अब्बासी इस्लामी जगत के लिए बड़े पैमाने पर एक *मामलूक* सैन्य समाज के निर्माण की शुरुआत की। इन तुर्की दास सैनिकों को *मामलूक* या *गुलाम* कहा जाता था। उन्हें बड़े पैमाने पर बन्दी बना लिया जाता था या खरीद लिया जाता था; उन्हें दूसरे सैनिक दलों की तुलना में ज्यादा तनख्वाह दी जाती थी; और परिवारों में ही पाला-पोसा (*परवरिश/तरबियत*) जाता था। यह एक ऐतिहासिक घटना क्रम था, जिसने अब्बासी साम्राज्य के पूर्वी सीमा क्षेत्रों में तीव्र इस्लामीकरण का रास्ता खोल दिया। अल-मआतसिम ने 838 सी ई में अपनी तुर्की *मामलूक* सेना को अमोरियम के मुख्य नगरों को घेर लेने का निर्देश दिया और इस तरह पहली बार तुर्क मध्य अनातोलिया तक बढ़ आए। लेकिन तुर्कों के उच्छृंखल व्यवहार के कारण अल-मआतसिम को अब्बासी साम्राज्य की राजधानी बगदाद से समारा ले जानी पड़ी (हारुन अल-रशीद कालीन अब्बासिद खिलाफत के मानचित्र के लिए देखें https://www.writing-endeavour.com/blog/the-abbasid-caliphate-p9.html)

अल-वतीक (842-847 सी ई), अल-मुतवक्किल (847-861 सी ई), अल-मुंतसिर (861-862 सी ई) और बाद में कुशल राजनीतिज्ञ अल-मुवाफक ने इस तुर्की सैन्य दल की ताकत को सीमित करने की कोशिश की। उत्तर अब्बासी काल ने उत्तराधिकार की अनेक लड़ाइयां देखीं, जिनके साथ ही पश्चिम की ओर बड़े पैमाने पर खानाबदोश पलायन हुआ, जिसने अब्बासी खिलाफत को विघटित कर दिया। हालांकि अब्बासी खलीफा 945-1258 सी ई तक औपचारिक प्रमुख बने रहे, लेकिन वह साम्राज्य स्वतंत्र प्रांतों के समूह जैसा था, जैसे खुरासान ताहिरियों के अधीन, समरकंद सामानियों के अधीन, ईरान बुयीदों के अधीन और मिस्र फातमियों के अधीन, क्योंकि बगदाद में खलीफा अभिजात्य तुर्की रक्षकों के हाथों की कठपुतली बनकर रह गए थे, जो खलीफा से वैसा ही करवाते थे, जैसा वे चाहते थे (उत्तर हारून अल-रशीद कालीन अब्बासी खिलाफत के लिए देखें https://www.writings endeavour.com/blog/the-abbasid-caliphate-p.9.html)।

बोध प्रश्न-3

1) अब्बासिद, उमय्यदों को हटाने में कैसे सफल हुए?

.....

.....

.....

.....

.....

2) अब्बासी क्रांति का प्रशासनिक ढांचे पर क्या असर पड़ा?

.....

.....

.....

.....

.....

3) खलीफा अल-मंसूर द्वारा अब्बासी राज्य में क्या बदलाव किए गए?

.....

.....

.....

.....

.....

14.12 अब्बासी खिलाफत : सिंचाई, कृषक तथा राजकीय भूमि

अब्बासी खिलाफत, अपने दौर में सिंचाई नहरों का संजाल बिछाने के लिए विशेष रूप से जानी जाती है। लेकिन अब्बासी खिलाफत के आखिरी दौर में बड़े पैमाने पर हुए किसानों और गुलामों के विद्रोहों ने साम्राज्य की नींव ही हिला दीं।

14.12.1 सिंचाई

जब अल-मंसूर ने बगदाद को अब्बासी खिलाफत की राजधानी के रूप में अपनाया, तो अब्बासी अभिजात्यों ने वहां की विशाल दलदली भूमि में कृषि का विस्तार करने और उसे समृद्ध करने में बहुत रुचि दिखाई, खासकर इराक के दक्षिणी हिस्से की विस्तृत समतल उर्वर भूमि में, जिसे *सवाद* क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। यह अनाज, सब्जियों और फलों का महत्वपूर्ण स्रोत था। गेहूँ, चावल और जौ *सवाद* क्षेत्र की मुख्य पैदावार थे। उन्होंने लंबे समय से उपेक्षित पड़ी सिंचाई प्रणाली को दुरुस्त किया और उसका कायाकल्प कर दिया। कृषि के विकास के लिए पुरानी *कनातों* (भूमिगत नहरें) की मरम्मत की गई, नई तरह के जलमार्ग (*तुरा*) या खाइयां खोदी गईं, अतिरिक्त जल बहाव मार्ग बनाए गए और उन नहरों को गाद के जमाव से बचाने के उपाय ढूंढे गए। इराक, खासकर उसके *अल-सवाद* क्षेत्र के अलावा, अब्बासिदों के दो अच्छे उपजाउ कृषि क्षेत्र मिस्र और खुरासान थे।

अल-मंसूर के एक सैन्य कमांडर अबुल अल-असद द्वारा जल भराव वाले दलदली क्षेत्र में *नहर अबुल-असद* नाम की एक नई नहर खुदवाई गई, जो काफी गहरी थी। उस क्षेत्र में जल आपूर्ति का वह मुख्य स्रोत थी। वासित में *नहर अल-बिलाह* का निर्माण हुआ। यह एक

विशाल नहर थी, जो अल-महदी के समय में निर्मित की गई थी। पहले वासित एक छावनी केंद्र था। अब्बासी काल में वह बगदाद के विकसित हो रहे बाजार को अपेक्षाकृत सस्ते दामों पर खाद्य सामग्री उपलब्ध कराता था। इस *नहरवां* प्रणाली (नहरों और जल बहाव मार्गों का निर्माण) ने विशाल क्षेत्रों को पुनर्जीवित करने में मदद की। एक इतिहासकार के मुताबिक इन भूमियों से प्राप्त होने वाली फसलें 'अल-हरमैन यानी ''दोनों पवित्र शहरों – मक्का और मदीना'' के बाशिंदों को सहायता और उपहार के रूप में दी जाती थीं, और वहां के गरीबों को खैरात में दी जाती थीं।' इनके अलावा, मक्का के लोगों तक पानी पहुंचाने के लिए *नहर ज़ुबैदा* का निर्माण किया गया। हारून अल-रशीद की मां ने *नहर अल-रयान* तैयार कराई, जिससे वासित का उत्तरी हिस्सा (मुबारक और सिल्ह) खेती के लायक हो गया। जहां से खलीफा हारून के 'सैनिकों के लिए, उनकी जरूरत का सामान आता था', हारून ने उन क्षेत्रों के लिए *नहर अल-क़तूल* नामक नहर खुदवाई, ताकि वहां पानी की आपूर्ति हो सके और इसके लिए उसने 'दो करोड़ *दिरहम* खर्च किए'।

अब्बासी साम्राज्य की कर व्यवस्था की भव्यता का मूल आधार कृषि से प्राप्त होने वाला कर ही था। अब्बासी खलीफा, उनके राजवंश की महिलाएं, गवर्नर और सभ्रांत तबके के लोग भी किसानों की जमीनों तक पानी पहुंचाने के लिए जलमार्गों, कुंओं, बांधों और उनसे जुड़ने वाली नालियों (*मुसन्नयात*) और अन्य नहरों के निर्माण में अपना योगदान दिया करते थे। अब्बासियों को राज्य की आय का ज्यादातर हिस्सा *अल-सवाद* की समतल उपजाऊ भूमि से ही मिलता था। राज्य के राजस्व के बारे में लिखी गई अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *किताब अल-खराज* में अबू यूसुफ ने खेतों की सिंचाई की व्यवस्था के संबंध में राज्य के कर्तव्यों का विस्तार से वर्णन किया है। अबू यूसुफ लिखता है, 'अगर *सवाद* के बाशिंदों को दजला और फरात से निकाले गए बड़े जलमार्गों से जुड़ने के लिए नहरों की खुदाई करने या उनकी गाद निकालने के जरूरत होती थी, तो उनके लिए यह काम राज्य द्वारा करवाया जाता था और उसका खर्च राजकीय कोष और *खराज* देने वाले (*अहल अल-खराज*) उठाते थे।'

अल-मंसूर ने बगदाद का निर्माण एक योजनाबद्ध संकेंद्रित शहर के रूप में कराया। इसे फरात से निकाली गई चार बड़ी सिंचाई नहरों – *नहर ईसा, नहर सरसर, नहर मलिक* और *नहर कूथा* से जल की आपूर्ति होती थी। पश्चिमी बगदाद में सिंचाई का काम फरात से निकलने वाली नहरों से होता था। पूर्वी बगदाद में सिंचाई का काम *नहर क़तूल* से होता था, जिसे दजला नदी से निकाला गया था। नौवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में खुरासान में गवर्नर ने कानून के विद्वानों को सिंचाई के बारे में एक किताब तैयार करने का निर्देश दिया, जो *किताब अल-कुनी* के रूप में लिखी गई। सभी प्रांतों में *दीवान अल-मा'* किसानों के बीच पानी का वितरण करवाता था और सिंचाई प्रणाली तथा सिंचाई व्यवस्था की देख-रेख करता था।

14.12.2 अब्बासी खिलाफत के समय के प्रमुख विद्रोह

अब्बासी काल में सबसे पहले अल-मंसूर के समय में सीरिया में राज्य के अधिकारियों द्वारा किए जाने वाले दमन के खिलाफ तेजी से किसान विद्रोह शुरू हुए। इनका नेतृत्व बुंदर कर रहे थे। अब्बासी काल में अब्बासियों ने दमनकारी शासन से मुक्ति पाने के लिए खुरासान, इफ्रीकिया, मिस्र और दूसरे प्रांतों में भी किसानों ने विद्रोह किए। हारून अल-रशीद के समय में मिस्र में कॉप्टिक ईसाईयों ने भी अब्बासी सत्ता के खिलाफ बगावत की। अज़रबाइजान और ट्रांसऑक्सियाना में हुए भारी कृषक विद्रोहों ने 'अत्याचारी अब्बासी गवर्नरों की सत्ता हिला दी'। 839 सी ई में कुर्द जनजातियों ने मोसुल और तिकरित में विद्रोह का झंडा उठाया।

जिस समय गृह युद्ध के कारण समारा अराजकताओं से घिरा हुआ था, उसी समय ज़ंज विद्रोह भी फूट पड़ा। ज़ंज गुलाम, दक्षिणी पूर्वी बगदाद के दलदली प्रदेशों में, खासकर बसरा में इस्तेमाल किए जाते थे। वे मिट्टी की ऊपरी परत हटाने का काम करते थे। अपनी इस

दयनीय दशा को देखकर उन्होंने कई बार बगावत की। लेकिन इनमें से जो सबसे बड़ी और अदमनीय बगावत थी, उसे ज़ंज की बगावत कहते हैं। वह पंद्रह वर्षों तक (868-883 सी ई) लगातार चलती रही। तबरी दासों के इन सामाजिक आंदोलनों का एक स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करते हैं, क्योंकि वे उस दौर में बगदाद में थे। ज़ंज विद्रोहियों ने बसरा पर कब्जा कर लिया और उसे अपने नियंत्रण में ले लिया। उन्होंने अब्बासी सेना को पराजित कर दिया और उनके नेता अली इब्न मुहम्मद को ***महदी*** घोषित कर दिया गया। हालांकि उनका नेता अन्ततः मारा गया। ज़ंज विद्रोह की प्रकृति के विषय पर इतिहासकार विभाजित हैं कि वह दास विद्रोह था भी या नहीं। यह विद्रोह, गुलामों की बगावत से शुरू जरूर हुआ था, लेकिन बाद में इसमें मुस्लिम किसान, बद्दू और अब्बासी सेना के असंतुष्ट सैनिक तथा दूसरे असंतुष्ट समूह भी शामिल हो गए थे।

14.12.3 अब्बासियों के समय में राजकीय भूमि का स्वरूप

अब्बासी खिलाफत के समय 8वीं सदी में राज्य या सरकार की भूमि *सवाद्फी/ सवाफी* कहलाती थी। उस दौर में भूमि के सुधार के लिए अनेक कार्य हुए थे, इसलिए ऐसा समझा जाता है कि अब्बासी शासकीय भूमि के दायरे में भी काफी इजाफा हुआ था। खलीफा और उनके परिवार के सदस्य अपने लिए निजी भूमि खरीदते थे। खलीफा की निजी भूमि को *दियाल-खिलाफह* कहते थे। ऐसा माना जाता है कि अब्बासी खलीफाओं, जैसे हारून अल-रशीद ने तबरिस्तान के स्थानीय शासक वंदाद हुरमुज़ाद को तबरिस्तान की अच्छी भूमि दस लाख *दिरहम* में उसे बेचने के लिए दबाव डाला था। उसी इलाके में हारून के बेटे ने तीन सौ गांवों की भूमियां खरीदने का प्रयास किया था। मोटे तौर पर हारून के शासन काल में *सवाद्फी* (खलीफा की राजकीय भूमि) भूमि में बढ़ोतरी हुई, लेकिन ज्यादा बढ़ोतरी अल-जज़ीरा (उत्तरी इराक) और सरहदी इलाकों में हुई। मध्य काल में अल-जज़ीरा का मतलब था, दजला के ऊपरी फैलाव और फरात के बीच की जमीन। अल-जज़ीरा में अनाज तथा अन्य खाद्य वस्तुओं का जो उत्पादन किया जाता था, उससे सिर्फ इराक और बगदाद की ही आपूर्ति की जाती थी।

जब अबू अल-अब्बास ने मारवानी उमय्यदों की निजी संपत्ति और जागीरें (*दीया*) जब्त कीं, तो उनकी देख-रेख के लिए एक विशेष *दीवान* नियुक्त किया। इरा लैपिडस का कहना है कि अब्बास राजकीय भूमि में उमय्यदों की जागीरों की जब्ती के कारण बढ़ोतरी हुई। दूसरे शब्दों में, जब अब्बासी सत्ता में आए तो उन्होंने वे जागीरें जब्त कर लीं, जो पहले उमय्यदों के नियंत्रण में थीं। अनेक क्षेत्रों में ऐसे चारागाह चिह्नित थे, जिनमें सिर्फ खलीफा के पशु चराए जाते थे। हसन इब्न मुहम्मद अपनी *तारीख-ए कुम* में बताता है कि प्रत्येक गांव के बगल में अब्बासी खलीफाओं और गवर्नरों के पशुओं के लिए बड़े-बड़े चारागाह सुरक्षित रखे जाते थे।

नौवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, जब तुर्की भाड़े के सैनिकों की नियुक्ति आरंभ हुई, तो अब्बासी खिलाफत का सैन्य खर्च काफी बढ़ गया। तब राज्य ने उन सैनिकों को वेतन के बदले जमीनें देने का सिलसिला शुरू किया, जिसे इक्ता कहते थे। इसका अर्थ था, जमीन का एक छोटा टुकड़ा (*क़ता*), जो निजी मिल्कियत में हो। बाद के अब्बासी काल में यह जमीन की मिल्कियत का एक महत्वपूर्ण रूप बन गया। संक्षेप में नौवीं शताब्दी में इस्लामी जगत में *इक्ता* प्रणाली ने राजकोष को सैनिकों के भारी भरकम वेतन की अदायगी के बोझ से राहत दी, क्योंकि अपर्याप्त राजस्व और सैन्य अभियानों से प्राप्त होने वाली मामूली लूट राशि के कारण सरकार के लिए उन्हें वेतन देना मुश्किल हो रहा था। एन एस. लैंबटन जैसे इतिहासकारों ने तो यह भी दावा किया है कि 'अब्बासी राज्य की लगातार बिगड़ती जा रही हालत के कारण ही *इक्ता* प्रणाली लागू की गई।' बेकर का दावा है कि पहले *मुक्ता* (*इक्ता* के मालिक) पर कोई सैन्य जिम्मेदारी

नहीं थी। यह तुर्कों के सेना में शामिल किए जाने के बाद हुआ कि इस तरह के राजकीय आबंटन की व्यवस्था में सेना को भी लाभार्थियों की श्रेणी में रखा जाने लगा। बेकर का मानना है कि इक्ता प्रणाली का विकास मूलतः एक प्रशासनिक और नौकरशाही उपकरण के रूप में हुआ था, लेकिन बाद में वह सैन्य अनुदान प्रणाली में बदल गया, ताकि स्वर्ण (मुद्रा) आधारित अर्थव्यवस्था के टूट जाने के बाद सेना का खर्च उठाया जा सके।

अब्बासी खिलाफत की स्थापना के बाद पूरे इस्लामी इतिहास में जो सबसे बड़ी घटना हुई, वह थी चीनी बंदियों के माध्यम से आई कागज बनाने की कला। सबसे पहला कागज उद्योग समरकंद में 751 सी ई में स्थापित हुआ। और फिर 794 सी ई में. बगदाद में। इसके बाद सीरिया, उत्तरी अफ्रीका, मिस्र और स्पेन सहित इस्लामी जगत में आश्चर्यजनक तेजी से कागज उद्योग विकसित हुआ। अरबों ने कागज बनाने की तकनीक में काफी सुधार किया और वे अच्छे किस्म के कागज बनाने लगे। कागज की प्रचुर उपलब्धता ने बड़े पैमाने पर किताबों के उत्पादन का रास्ता खोल दिया। कागज की उपलब्धता से भू-राजस्व प्रक्रिया के दस्तावेजीकरण, पत्राचार और सूचनाओं के आदान-प्रदान का काम भी आसान हो गया।

नौवीं शताब्दी में इराक में कृषि पैदावार में कमी आने लगी तो पूरा *सवाद* क्षेत्र ज़ंज विद्रोह के कारण अराजकता का शिकार बन गया। लेकिन मिस्र का विकास होता रहा। भू-स्वामियों और संपन्न तबके ने सिल्क और अलसी के उत्पादन में निवेश करना शुरू किया। कपास के उत्पादन में भी वृद्धि हुई। मिस्र से हेजाज़ तथा अन्य प्रांतों में कागज, वाइन, ऊनी वस्त्र और अनाज का निर्यात जारी रहा। अब्बासी काल में बसरा, मिस्र और बगदाद में ज्यादातर नगरों और शहरों के जीवन में *सुक्कों* या बाजारों ने एक आवश्यक भूमिका निभाई। इन *सुक्कों* की स्थापना शक्ति संपन्न लोगों द्वारा की जाती थी। वे लोगों को एक जगह एकत्र होने, बातचीत करने तथा खरीद-बिक्री करने के लिए एक वैकल्पिक सार्वजनिक स्थल प्रदान करते थे।

एकीकृत इस्लामिक अरब राज्य में अन्न उत्पादन और सिंचाई तकनीक का पूरे इस्लामी प्रदेश में फैलाव होने लगा। इसे अरब कृषि क्रांति कहा जाता है। यह प्रक्रिया बड़े पैमाने पर लोगों के प्रव्रजन, सीमा विस्तार और स्थान परिवर्तन के माध्यम से परवान चढ़ी। सरकारी नौकरशाही ने सिंचाई नहरों, भूमिगत जल संचय तकनीक (*कनात*), बांध और कुंओं के निर्माण को प्रायोजित किया, क्योंकि गन्ना और कपास जैसी फसलों की खेती के लिए काफी पानी की आवश्यकता होती थी। पानी को खीचने की *नोरिया* (पानी से चलने वाले पात्र) और *साक़िया* (पशुओं द्वारा खींची जाने वाली जल पात्रों की जंजीर) जैसी नई तकनीकों का प्रयोग होने लगा।

14.2.4 अब्बासियों के समय मिस्र में ठेके पर कृषि की व्यवस्था

कृषि राजस्व या कर उगाही को ठेके पर दिए जाने को *दमन* या *किबला* कहते थे। इस घृणित ठेका व्यवस्था में कुछ चुने हुए प्रांत या व्यक्ति विशेष राजकीय *आमिलों* को एक निश्चित रकम अग्रिम दे देते थे, ताकि उन्हें मनमाने ढंग से कर की वसूली की छूट मिल जाए। यह प्रथा विशेष रूप से खुरासान और मिस्र में विकसित हुई, जो बाद में नीलामी प्रथा में बदल गई। दीर्घ काल में अब्बासी सत्ता के लिए यह प्रथा अनर्थकारी साबित हुई। इसने भूमि की उर्वरता नष्ट कर दी और किसानों को बहुत नुकसान पहुंचाया। अबू यूसूफ ने राजस्व कृषि ठेका प्रणाली के बारे में और विशेष रूप से *सवाद* क्षेत्र के बारे में चेतावनी दी थीः

> मुझे लगता है कि *सवाद* या किसी भी अन्य जमीन को राजस्व कृषि के ठेके (*क़िबला*) पर नहीं दिया जाना चाहिए। कर के ठेकेदार या किसान (*मुतकब्बिल*) को यदि पैदावार में खराज से अधिक कुछ प्राप्त होता है, तो वे *खराज* देने वालों पर अतिरिक्त बोझ डालते हैं, और किसान को वह देना पड़ता है, जिसकी देनदारी उनके लिए अनिवार्य नहीं है, इस प्रकार वे उन्हें सुरक्षा प्रदान करने की बजाय उसे प्रताड़ित करते हैं और नुकसान पहुंचाते हैं। इससे या इस तरह की अन्य व्यवस्थाओं से भूमि नष्ट होती है और

उसकी आश्रित जनता बदहाल होती है। कर का ठेकेदार, उनके इस विनाश की तब तक कोई परवाह नहीं करता, जब तक ठेके से (*किबला*) उसकी अपनी उगाही सुनिश्चित रहती है; और वह ठेके में अधिशेष से निर्धारित अतिरिक्त लाभ प्राप्त करने के अलावा और ज्यादा उगाही कर सकता है। हालांकि वह यह सब प्रजा पर केवल निष्ठुर बल प्रयोग द्वारा ही कर सकता है। वह नृशंसता से उन्हें कोड़े लगाता है, उन्हें कड़ी धूप में खड़ा रखता है, और उनकी गर्दन से भारी पत्थर बांधकर लटका देता है। यह वह कठोर दंड है, जो वह *खराज* अदा करने वालों को देता है।

नौवीं शताब्दी के अंत तक आते-आते अब्बासी शासन ने एक नई वित्तीय व्यवस्था *इक्ता-ए कबाला* कायम की, जिसमें एक निश्चित रकम के कर भुगतान के बदले भूमि आबंटित की जाती थीं। अब्बासी काल में फसलों के आढ़तियों और सिक्के बदलने वाले (मनी चेंजर) व्यापारियों ने कर संग्रहण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। हालांकि गृह युद्ध (*फितना*) के दौरान जमीनों की जब्ती ने उन्हें खुरासान और सीरिया में जा बसने के लिए बाध्य कर दिया। इससे अब्बासी शासन की वित्तीय अवस्था को तगड़ा झटका लगा, क्योंकि राजस्व घटने लगा। अनेक कुलीन अब्बासियों की खुरासान, तबरिस्तान, सीरिया, मिस्र, इराक और अल-यमामा में अपनी निजी जागीरें थीं। उनके मालिक *दीवान-ए* दीया नामक विभाग से सीधे अनुबंध करने के बाद अपनी जागीरों पर कृषकों से फसल की साझेदारी (sharecropping) के हिसाब से खेती करवाते थे।

बोध प्रश्न-4

1) अब्बासी खलीफाओं और कुलीनों ने नहरों, बांधों और कुंओं का निर्माण क्यों कराया?

.....

.....

.....

.....

.....

2) अब्बासी खिलाफत के समय सिंचाई तंत्र के प्रबंधन के बारे में एक टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) अब्बासी साम्राज्य के अधीन राजकीय भूमि और भू-स्वामित्व की प्रमुख किस्में कौन-कौन सी थीं?

.....

.....

.....

.....

.....

14.13 अब्बासी काल में कर और *दीवान*

खराज (भूमि से प्राप्त होने वाला राजस्व) का आशय था जमीन से होने वाली कृषि पैदावार पर लगाया जाने वाला नियमित लगान। शुरुआती इस्लामी अभियानों के समय जो विजित भूमि मुसलमानों में बांटी जाती थी, उन पर इस तरह का कोई शुल्क नहीं लगाया जाता था, लेकिन वे *उश्र* और *ज़कात* अदा करते थे, जबकि गैर-मुसलमान *खराज* अदा करते थे। यह राज्य की आय का एक बड़ा भाग होता था। भूमि पर लिया जाने वाला कर *खराज*, दूसरे करों की तुलना में बहुत ज्यादा होता था। अबू हनीफा एक मशहूर इस्लामी धर्मशास्त्री और उच्च कोटि के न्यायविद् थे। उन्होंने अब्बासी खलीफा अल-मंसूर के शासन काल (754-775 सी ई) में निगमनात्मक उद्धरणों के आधार पर इस्लामी न्यायशास्त्र तैयार करने का प्रयास किया था, जो *क़ियास* कहलाई। भूमि कर (*खराज* अथवा *उश्र*) और भूमि सुधार के बारे में उनका रवैया लचीला था और वह किसानों के पक्ष में कर-भार कम करने की ओर झुकाव रखते थे (नीचे दिया गया बॉक्स देखें)। उनके शिष्य अबू मुस्लिम ने हारून अल-रशीद के निर्देश पर राज्य के कर विधान को इस्लामी सिद्धांतों के अनुरूप बनाने के लिए इस्लामी कर व्यवस्था के बारे में एक आधिकारिक संकलन *किताब-उल खराज* तैयार किया था।

खराज भूमि के नियम

सिर्फ वही जमीनें *खराज* का विषय हैं, जिन्हें युद्ध में हासिल किया गया है, जैसे *अस-सवाद* (इराक), *अस-शाम* (सीरिया) आदि। अगर सेनानायक ने उसे उन लोगों के बीच बांट दिया, जिन्होंने उसे फतह किया था, तो यह भूमि उसका दसवां हिस्सा (tithe-land) होगा और वहां के बाशिंदे गुलाम होंगे। लेकिन यदि सेनानायक ने ऐसा नहीं किया और उसे पूरे मुस्लिम समाज को दे दिया, जैसा कि उमर ने *अस-सवाद* के मामले में किया था, तो वहां के लोगों को *जिज़िया* का बोझ उठाना होगा और उस स्थिति में वहां की जमीन *खराज* का विषय होगी। लेकिन वहां के लोगों का दर्जा गुलाम का नहीं होगा। यह अबू हनीफा की उक्ति है।

'*जिन पर हमला हुआ*' और जो इस्लाम स्वीकार करते हैं: *खराज*, उनकी जमीन पर लिया जाएगा, और इसके अतिरिक्त फसल पर *ज़कात* (दान कर) लिया जाएगा। यह अल-औज़ा' की उक्ति है। अबू हनीफा और उनके शरिया के सिद्धांत अनुसार: एक ही व्यक्ति से *खराज* और *ज़कात* दोनों नहीं लिया जाना चाहिए... और अगर कोई व्यक्ति *खराज* भूमि पर साल में कई बार फसल उगाता है, तो उससे सिर्फ एक ही बार *खराज* लिया जाना चाहिए। इब्न अबू लैला का कहना है कि जितनी बार फसल मेरे लिए तैयार होती है, उतनी बार मुझसे *खराज* लिया जाता है। अबू हनीफा और मलिक का उस *खराज* भूमि के बारे में मानना है कि जिसका कोई स्वामी नहीं हो अगर उस जमीन पर मुसलमान रहते हैं या उस पर अपना व्यापार चलाते हैं और उसे दुकान या बाजार की तरह इस्तेमाल करते हैं, तो उनसे इसके लिए कोई *खराज* नहीं लिया जाना चाहिए।

उमर ने उन सब लोगों का *खराज* खत्म कर दिया था, जिनका खुरासान में इस्लाम में धर्मांतरण कराया गया था और उन लोगों को आर्थिक अनुदान दिया था, जिन्होंने इस्लाम स्वीकार किया था।

अल-बालादुरी, *फुतुह अल-बुलदान*, परिशिष्ट 1, *खराज भूमि के नियम के संबंध में*, पृ. 237 और 426

उश्र का शाब्दिक अर्थ है दसवां हिस्सा। अबू यूसुफ ने स्पष्ट किया कि '*उश्र* सिर्फ वही लिया जाना चाहिए जो नहरों की खुदाई, घरों और भवनों (*बुयूत*) के निर्माण और जमीन पर किए जाने वाले काम की तकलीफ उठाने के मेहनताने की एवज में *इक्ता* के मालिक की देनदारी होती है।' दूसरे प्रकार के करों में *जिज़िया* (व्यक्तिगत कर), *खुम्स*, *मक्स*, बाजार तथा बाजार में बिकने वाली वस्तुओं पर कर आदि शामिल थे। बाजार पर लगने वाले कर को *दरीबत अल-असवाक* के नाम से जाना जाता था। एक इतिहासकार लिखता है कि 'अल-मंसूर ने अपनी मृत्यु के समय तक बाजारों पर किसी तरह का राजस्व कर नहीं लादा। जब अल-महदी उसका उत्तराधिकारी बना, तो अबू उबैद अल्लाह ने उसे इस बात का ध्यान दिलाया। उसने

इसके लिए तुरंत आदेश जारी किया और दुकानों पर *खराज* (*हवानित*) लागू कर दिया, ऐसा उसने 873 सी ई में किया।' भारत और चीन से आने वाले जहाजों पर कर लगाया जाने लगा, जो दसवां हिस्सा होता था और जिसे *उशूर अल-सुफुन* कहा जाता था। बसरा जाने वाले जहाजों पर *मक्स* नामक कर वसूला जाता था। बाद में दसवीं शताब्दी में जहाजों पर लगने वाले कर *मक्स* और *उशूर अल-सुफुन* बंद कर दिए गए। अब्बासी राज्य, बाजार में बिकने वाली हर प्रकार की खाद्य सामग्री, फल और सब्जियों पर कर वसूलता था। बाजार में बिकने वाले पशुओं, खासकर घोड़ों, बोझ ढोने वाले खच्चरों, गायों और भेड़ों पर कर लिया जाता था। पेय पदार्थों के उत्पादन, *खुमुर* (वाइन) की बिक्री, सिल्क तथा कपास पर कुछ विशेष प्रकार के शुल्क देने पड़ते थे।

अब्बासी सैन्य, नागरिक और कृषि प्रशासन में काफी सुधार किए गए, वे उमय्यदों से मिली विरासत पर सुनियोजित संशोधन थे। उमय्यदों के शासन काल में *दिहक़ान* करों का संग्रहण करते थे, जबकि अब्बासी राज्य में उन्हें प्रशासनिक अधिकारियों में शामिल कर लिया गया और करों की वसूली सीधे राज्य के अधिकारी करते थे। ईरानी परंपराओं के अनुसार उन्होंने अधिक केंद्रीकरण किया और *वजीर* नामक संस्था को ज्यादा अधिकार सौंपे। उन्होंने अनेक *दीवान* (विभाग) भी बनाए। *वजीर* सभी *दीवानों* की निगरानी करता था। घाटे पर रोक लगाने के लिए अब्बास अल-सफ्फाह के शासन काल में *दफ्तरों* (codices) में पंजीकाओं को व्यवस्थित किया गया और अल-मंसूर के समय में *वजीर* नामक संस्था बनाई गई। आरंभिक अब्बासी काल के ये दो बुनियादी प्रशासनिक बदलाव थे, जिन्होंने राजस्व पर केंद्रीय नियंत्रण सुनिश्चित किया। हारून अल-रशीद ने *काज़ी अल-कुज़ा* नामक एक अलग पद बनाया। *वजीरों* के अधीन इन विभागों और *मजलिसों* (समितियों) की संख्या लगातार बढ़ती रही, यहाँ तक कि खलीफा अल-मुक्तदीर (908-929 सी ई) के शासन काल में बगदाद में लगभग 20 केंद्रीय *दीवान* हो गए थे। उनमें से कुछ का ब्योरा यहां दिया जा रहा हैः

दीवान अल खराज : यह राज्य के केंद्रीय प्रशासन की धुरी था। अब्बासी काल (750-945 सी ई) में *दीवान अल-खराज*, भू-कर तथा उससे जुड़े केंद्रीय सरकार के वित्तीय मामलों की निगरानी करता था। ज्यादातर वह खेती और राज्यों के आर्थिक उत्पादन की देखरेख करता था। वह अन्य *दीवानों* से स्वतंत्र होता था और *वजीरों* पर आंतरिक लेखा परीक्षक की तरह काम करता था।

दीवान अल-अजीमाह : अब्बासियों (750-945 सी ई) द्वारा इस विभाग की स्थापना सर्वोच्च लेखा परीक्षण कार्यालय के रूप में की गई, ताकि वह दूसरे *दीवानों* (विभागों) के लेखा की जांच कर सके, निगरानी कर सके और उन्हें नियंत्रित कर सके। वह विभिन्न *दीवानों* और *वजीरों* के कार्यालयों के बीच संपर्क सूत्र की तरह काम करता था।

दीवान अल-*दैयाह* : इस केंद्रीय कार्यालय की स्थापना अब्बास अल-सफ्फाह द्वारा की गई। अब्बासी खिलाफत के समय यह खलीफा की विभिन्न निजी जागीरों की निगरानी, निवेश और लगान के मामले देखता था।

दीवान अल-खजीन : अब्बासी प्रशासन में यह विभाग प्राकृतिक उत्पादों के सरकारी भंडारों और शस्त्रागारों की देखभाल करता था।

दीवान अल नफाकत : इस विभाग की स्थापना राजसी दरबार के खर्च की व्यवस्था करने के लिए की गई थी। यह दरबार के कर्मचारियों के वेतन, दरबार भवनों के निर्माण, विस्तार तथा मरम्मत का काम देखता था।

दीवान अल-सवाद : यह अब्बासी राज्य का सबसे प्रभुत्वशाली विभाग था। इसकी स्थापना अब्बासियों के शुरुआती दौर में इराक की कृषि भूमि से विभिन्न प्रकार के करों का संग्रह करने वाले घटक के रूप में की गई थी।

दीवान अल-माल : अब्बासी काल के राजस्व का यह प्रांतीय विभाग, 'विभिन्न प्रांतों के संबंध में ऐसे विवरणों की पंजिका (रजिस्टर) तैयार करता था कि कौन सा प्रांत इस्लामी साम्राज्य में किस प्रकार शामिल किया गयाः बल प्रयोग (*अनवाह*) द्वारा या समझौते (*सुल्ह*) द्वारा। इस पंजीयन में भूमि कर के बारे में यह दर्ज होता था कि किस प्रांत में किस बिंदु पर कौन सा कर लगता है (वह प्राप्ति *खराज* है या *उश्र*। *खराज*, लगान के रूप में लिया जाता है या जिज़िया के रूप में)। इस पंजीयन में मिल्कियत के नाम के साथ जमीन का सर्वेक्षण, *खराज* का निर्धारण और उसकी किस्म (वह *मिसहाह* है या *मुकसमाह*, *मिसहाह* के मामले में *खराज* की तय दर और *मुकसमाह* के मामले में पैदावर का तय भाग) का पूरा विवरण रखा जाता था'।

दीवान अल-मा' : यह विभाग बुनियादी तौर पर सिंचाई कार्य की निगरानी और पानी के बंटवारे के लिए जिम्मेदार था। विभाग कृषि उत्पाद का हिसाब रखता था। यह *दीवान अल-खराज* को *इबरह* (औसत पैदावार) की गणना के लिए आवश्यक आंकड़े भी भेजता था।

प्रांतों में राजकोषीय तथा सैन्य प्रशासन दो विभागों के जिम्मे थाः *दीवान अल-हर्ब* (सैन्य मामले) और *दीवान अल-खराज* (राजस्व के मामले), जिनकी नियुक्ति केंद्रीय सरकार करती थी। इन विभागों में अधिकारियों के साथ लिपिक, सिक्के बदलने वाले (मनी चेंजर), टकसाल पर्यवेक्षक (supervisors), *मुहतसिब* (बाजार निरीक्षक), चुंगी अधिकारी तथा सहायक (clerks) शामिल रहते थे। *रुस्तक* सबसे छोटी प्रशासनिक इकाई थी। कैस्पियन पठारी क्षेत्र के प्रशासन की सीधी निगरानी में नहीं आने वाले कुछ प्रांत जिलान, तबरिस्तान, देलाम और जरगान थे। अंदरूनी एशियाई प्रांतों में ट्रांसऑक्सियाना, फरगना, उशरुसना और काबुल इस तरह के क्षेत्र थे।

बोध प्रश्न-5

1) क्या आप इस विचार से सहमत हैं कि उमय्यद और अब्बासी, दोनों राज सत्ताएं कृषि कर पर आधारित थीं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) अब्बासी प्रशासनिक ढांचा बेहद जटिल था। अब्बासी इस विशाल केंद्रीय साम्राज्यिक नौकरशाही, प्रांतीय तथा स्थानीय अभिकर्ताओं तथा प्रभावशाली व्यक्तियों को किस प्रकार नियंत्रित करते थे?

.....

.....

.....

.....

.....

3) **नाम** **परिभाषा**

अ)	*दीवान अल-मा'*	i)	भूमि कर
ब)	*खराज*	ii)	सिंचाई विभाग
स)	*दमन*	iii)	भूमि का आबंटन
द)	*इक्ता*	iv)	राजस्व कृषि

14.14 सारांश

सारांश में, यह इकाई सातवीं से दसवीं शताब्दी के बीच इस्लामिक समाज के विकास का चित्र प्रस्तुत करती है – प्रशासनिक नवाचार और विभिन्न प्रकार की जागीरें, साथ ही एक ढीली-ढाली विकेंद्रित राज्य सत्ता से एक अत्यंत जटिल और केंद्रीकृत सत्ता के रूप में बदलने वाली खिलाफत की प्रकृति। उमय्यदों ने अपनी प्रशासनिक संस्थाएं बनाईं, अपने सिक्के चलाए तथा बाइज़ेंटाइन और सासानी परंपराओं का अनुकरण करते हुए तथा उन्हें परिष्कृत करते हुए राजस्व तथा दरबार संस्कृति का विकास किया। उन्होंने खिलाफत की सीमाओं का अत्यधिक विस्तार किया, परती जमीनों को उर्वर बनाने के लिए *कनात* और कुंए खुदवाए और जल निकास नालियों (sluices) के साथ बांधों का निर्माण कराया। उमय्यदों ने *दीवानों* की स्थापना के साथ राज्य प्रशासन को और बेहतर बनाया। हालांकि उमय्यदों ने ज्यादातर गैर-मुस्लिम लोगों पर शासन किया। लेकिन उन्होंने शायद ही कभी सामूहिक धर्मांतरण को प्रोत्साहित किया। अब्बासी काल, इस्लामी सभ्यता के श्रेष्ठतम विकास को प्रदर्शित करता है। उन्हें उमय्यदों से एक समृद्ध और केंद्रीकृत प्रशासन विरासत में मिला और उन्होंने शासन की ईरानी परंपरा को भी उसमें शामिल किया। अब्बासी प्रभुत्व के बाद से, साम्राज्य की सेना और नौकरशाही में अरब लोगों की संख्या धीरे-धीरे घटने लगी। उनकी जगह खुरासानी और तुर्क भरे जाने लगे। अब्बासी काल में तुर्कों के इस्लामीकरण और सामुहिक धर्मांतरण की प्रक्रिया देखने को मिलती है।

14.15 शब्दावली

ज़कात : धार्मिक कर, यह कुल संपत्ति के ढाई फीसदी के बराबर था।

नहर : जल मार्ग या सिंचाई के लिए बनाई गई जलधारा

नवरूज़ : इरानी कैलेंडर का पहला दिन

अम्सार : अरबी में *मिस्र* का मतलब होता है छावनी शहर। *अमसार* इसका बहुवचन रूप है।

***न्यूमिस्मेटिक्स* (Numismatics)** : सिक्कों का अध्ययन और संग्रहण

महदी : एक मसीहा, इस्लाम का उद्धारक। इस्लामी विश्वास के अनुसार कयामत के दिन, समस्त पापों से छुटकारा दिलाने के लिए एक *महदी* प्रकट होगा।

14.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 14.2 और 14.3 देखें

2) देखें भाग 14.4, मारवानियों के बारे में। देखें बॉक्स, सूफयान तथा मारवानी राज्य के बारे में।

बोध प्रश्न-2

1) उमय्यद अर्थव्यवस्थाः राज्य भूमि, व्यापार तथा सिंचाई उप-भाग 14.6.1 देखें

2) व्यापार, नगरीकरण और *सुक्क* के लिए उप-भाग 14.6.2 देखें। हेनरी पिरेन के तर्क पर जवाब केंद्रित करें।

बोध प्रश्न-3

1) भाग 14.9 देखें

2) भाग 14.9 देखें

3) भाग 14.9 और 14.10 देखें

बोध प्रश्न-4

1) देखें उप-भाग 14.12.1, अब्बासी खिलाफतः सिंचाई, कृषक और राजकीय भूमि।

2) देखें उप-भाग 14.12.1, अब्बासी खिलाफतः सिंचाई, कृषक और राजकीय भूमि।

3) देखें उप-भाग 14.12.3, अब्बासी काल में जागीरों की किस्में: *स्वादफी, इक्ता, दमन* और अन्य प्रकार के भू-स्वामित्व।

बोध प्रश्न-5

1) देखें भाग 14.13, कर और *दीवान*। *खराज* तथा अन्य प्रकार के करों पर उत्तर को केंद्रित करें।

2) भाग 14.13 देखें

3) अ, (ii) ब, (i) स, (iv) और द, (iii)

14.17 संदर्भ ग्रंथ

क्रोन, पैट्रिशिया एवं हाइन्ड्स, मार्टिन, (2003) *गॉड्स कैलिफः रिलिजियस अथॉरिटी इन द फस्ट सेन्चुरीज़ ऑफ इस्लाम* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

क्रोन पैट्रिशिया, (2003) *स्लेव्स आन हॉर्सेसः द इवॉल्यूशन ऑफ द इस्लामिक पॉलिटि* (कैम्ब्रिजः कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

दुरी, अब्द अल-अज़ीज़, (2011) *अर्ली इस्लामिक इन्सटीट्यूशन्स-एडमिनिस्ट्रेशन एंड टेक्सेशन फ्रॉम द कैलीफेट टू द उमय्यद्स एंड अब्बासिद्स* (लंदनः आई. बी. टॉरिस).

एस्पोज़िटो, जॉन-एल., (1999) *द ऑक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ इस्लाम* (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

फ्लड, फिनबार बैरी और नेसीपोग्लू, गुलरु, (2017) *ए कम्पेनियन टू इस्लामिक आर्ट एंड आर्कीटेक्चर* (न्यू जर्सीः जॉन विले एंड संस).

फ्राय, रिचर्ड नेलसन, (1975) *द कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ ईरान,* भाग-4, *फ्राम द अरब इनवेजन टू द सेल्जुक्स* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

हन्ना, नेली, (2002) *मनी, लैंड एंड ट्रेडः एन इकानॉमिक हिस्ट्री ऑफ द मुस्लिम मैडीटरेनियन* (लंदनः आई.बी. टॉरिस).

हॉटिंग, जी. आर., (2002) *द फर्स्ट डायनेस्टी ऑफ इस्लाम – द उमय्यद कैलीफेट एडी 661-750* (लंदनः रुटलेज).

हम्फ्रीज़, आर. स्टीफन, (1991) *इस्लामिक हिस्ट्रीः ए फ्रेमवर्क फॉर इन्क्वायरी,* रिवाइज़्ड एडीशन (प्रिंसटन : प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस).

केनेडी, ह्यू, (2004) *द प्रॉफेट एंड द ऐज ऑफ द केलीफेट्सः द इस्लामिक नियर ईस्ट फ्राम द 6 टू 11 सेन्चूरी* (लंदनः लांगमैन).

लैम्बटन, एन. एस., (1991) *लैंडलॉर्ड एंड द पैजेन्ट इन पर्शिया* (न्यूयार्कः आई. बी. टॉरिस).

लैम्बटन, एन. एस., (2013) *स्टेट एंड गवर्नमेंट इन मिडिवल इस्लाम* (लंदनः रुटलेज).

लेपिडस, इरा एम., (2002) *ए हिस्ट्र ऑफ इस्लामिक सोसाइटीज़* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

लेसनर, जेकब, (2017) *द शेपिंग ऑफ अब्बासिद रुल* (प्रिंस्टनः प्रिंस्टन लीगेसी लाइब्रेरी).

रॉबिन्सन, चेज़ एफ., (2010) *द न्यू कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इस्लाम,* भाग-1 (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

शाबान, एम. ए., (1970) *द अब्बासिद रिवोल्यूशन* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

14.18 शैक्षणिक वीडियो

द अर्ली मिडिल ऐज़ेस, 284-1000: द स्प्लैंडर ऑफ द अब्बासिद पीरियड

https://www.youtube.com/watch?v=ji8kKMSLEQo

इस्लामिक सोसाइटीज़

https://www.uctv.tv/shows/Islamic-Societies-with-Ira-Lapidus-Conversations-with-History-7242

इकाई 15 इस्लामिक समाजः विभिन्न संप्रदायों का उदय और विस्तार*

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 इस्लाम के उदभ्व के समय अरब प्रायद्वीप

15.2.1 *जहालिया* : इस्लाम पूर्व का अज्ञानता का काल?

15.2.2 महान् साम्राज्यों के मध्य अरब

15.2.3 दक्षिणी अरब प्रायद्वीप

15.3 अरब में इस्लाम और मुहम्मदः प्रारम्भिक इस्लामी समाज

15.3.1 622 सी ई में मदीना के लिए प्रव्रजन

15.3.2 मक्का की फतह

15.4 इस्लामी खिलाफत और इस्लामी जगत में फूट

15.5 उमय्यद खारिजी और शिया

15.5.1 खारिजी कौन थे?

15.5.2 शिया इस्लामिक संप्रदायों का उदय

15.6 अब्बासी खिलाफतः *मुआतज़िला* और *अशारी*

15.7 इस्लामी सूफी संप्रदाय

15.7.1 सूफी आंदोलन का उदय

15.7.2 सूफी *तरीका* का प्रसार

15.8 सारांश

15.9 शब्दावली

15.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.11 संदर्भ ग्रंथ

15.12 शैक्षणिक वीडियो

15.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम इस्लाम के उदय और विस्तार तथा इसके विभिन्न संप्रदायों के बारे में अध्ययन करेंगे। ज़ैसा कि ज्ञात है, इस्लाम का उद्भव अरब में हुआ लेकिन बाद में इसका प्रसार तीन महाद्वीपों – एशिया, यूरोप तथा अफ्रीका में भी हुआ। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- इस्लाम के उदय के समय की अरब प्रायद्वीप की सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों को समझ सकेंगे,

* डॉ. शाकिर-उल हसन, डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

- इस्लाम की स्थापना के लिए उत्तरदायी प्रारंभिक संघर्ष को जान सकेंगे,
- मदीना में प्रथम इस्लामिक राज्य (खिलाफत) की स्थापना तथा विश्व इतिहास पर पड़े इसके प्रभाव को जान सकेंगे,
- उमय्यद और अब्बासिद खिलाफतों के उदय की चर्चा कर पायेंगे, और
- इस्लाम में भिन्न मतावलंबी संप्रदायों – खारिजी, शिया, सुन्नी और सूफी पंथों के उदय और विकास के कारणों को समझ सकेंगे।

15.1 प्रस्तावना

हालांकि इस्लाम का उद्‌गम स्थल चट्टानी रेगिस्तानों और रेत से भरा प्रदेश अत्यधिक शुष्क था, परंतु उसने अनेक धार्मिक परंपराओं को जन्म दिया और पोषित किया, जिनमें मिस्र/मेसोपोटामिया के धर्म, ज़रथुष्ट्रों (पारसी) धर्म, यहूदीवाद और ईसाई धर्म शामिल थे। शक्तिशाली इस्लामिक अरब राज्य के निर्माण के पीछे एक बड़े उत्प्रेरक पैगंबर मुहम्मद थे। उन्होंने अपने धर्म इस्लाम के प्रचार की शुरुआत मक्का से की और बाद में उन्हीं इस्लामिक सिद्धांतों पर आधारित राज्य की स्थापना मदीना में की। उनकी मृत्यु के तुरंत बाद ही अरब एक साम्राज्यवादी शक्ति बनकर उभरा और इस्लाम का प्रसार एशिया, यूरोप और अफ्रीका तक जा पहुंचा। लेकिन इस पूरे दौर में इस्लामी समाज को उत्तराधिकार के हिंसक संघर्षों और विभिन्न इलाकों तथा संप्रदायों के विद्रोहों का सामना करना पड़ा। इस्लाम में आस्था और सभ्यता दोनों का समावेश था, क्योंकि मुसलमानों ने राज्य के यूनानी और ईरानी ढांचे को आत्मसात किया था। इस्लाम के भीतर ही अनेक मत-मतांतर पैदा हुए। वहीं यूनानी दार्शनिक विचारों के संपर्क में आने से कई प्रकार की आध्यात्म संबंधी शाखाएं फूटने लगीं और 1258 सी ई में अब्बासी खिलाफत के पतन के बाद रहस्यवादी सूफी सिलसिले भी उभरने लगे।

इस इकाई में छह भाग हैं, पहला हिस्सा इस्लाम पूर्व के अरब प्रायद्वीप के राजनीतिक-सामाजिक परिवेश का वर्णन करता है। दूसरे हिस्से में मुहम्मद के नेतृत्व में इस्लाम के प्रसार और मदीना में इस्लामिक राज्य की स्थापना का स्पष्ट विवरण है। तीसरा हिस्सा खिलाफत और *उम्मा* (इस्लामिक समुदाय) के बीच उभरे मतभेद से पैदा हुए खारिजी, शिया और सुन्नी संप्रदायों के बारे में है। चौथे भाग में शिया संप्रदाय की विभिन्न उप-शाखाओं ज़ैसे इस्माइली, इमामी और ज़ैयदी का ब्योरा है। पांचवां हिस्सा अब्बासी खिलाफत के समय की दो आध्यात्मिक शाखाओं – *मुताज़िला* और *अशारी* के सिद्धांतों और उनके विकास का चित्रण प्रस्तुत करता है। छठा और आखिरी भाग सूफी सिलसिलों के उद्‌भव का विवरण देता है।

15.2 इस्लाम के उद्‌भव के समय अरब प्रायद्वीप

छठी सदी के अरब समाज की प्रकृति मुख्य रूप से कबीलाई थी और वह दो शक्तिशाली साम्राज्यों – रोम (बाइज़ेंटाइन) और ईरानी (सासानिदों) के बीच मध्यवर्ती राज्य के रूप में स्थित था। इन परिस्थितियों में अरबों के मध्य किसी ऐसे सारगर्भित धार्मिक आंदोलन की शुरुआत जो विश्व इतिहास में एक नए अध्याय को आरंभ कर सके, असंभव और अव्यावहारिक स्वप्न की तरह प्रतीत होता है। लेकिन ऐसा ही हुआ और मुहम्मद तथा उनके उत्तराधिकारियों के नेतृत्व में इस्लाम ने एक सफल आंदोलन की तरह न सिर्फ अरबों को एकीकृत किया, बल्कि विशाल साम्राज्यों तथा संस्कृतियों की स्थापना भी की।

इस्लाम पूर्व के एक कवि अम्र इब्न क़ामिया ने बड़े तीखे ढंग से टिप्पणी की थी, *'एक आदमी का* **कबीला** *उसके पंजे (जिसके द्वारा वह अपने शत्रुओं को दूर रखता है) और टेक हैं (जो उसे सहारा देते हैं)।'* इस्लाम पूर्व अरब के लगभग सभी निवासी परस्पर मदद और जीवन

की सुरक्षा के लिए किसी न किसी *कबीले* विशेष से संबद्ध रहते थे। कबीले अनेक कुल-गोत्रों से मिल कर बनते थे। ज़ैसे पैगंबर मुहम्मद, बानू हाशिम कुल-गोत्र में पैदा हुए थे, जो मक्का के कुरैश कबीले का अंग था। व्यापार काफिलों और कारवांओं के माध्यम से होता था। एक अमीर विधवा महिला खदीजा ने मुहम्मद को मक्का और सीरिया के बीच चलने वाले अपने काफिलों की देखरेख और प्रबंधन के लिए नियुक्त कर रखा था।

दुर्खाइम के प्रतिमानों के अनुसार धार्मिक आस्थाएं मानव समाजों की बनावट को प्रतिध्वनित और प्रकट करती हैं। इस्लाम पूर्व अरब की आध्यात्मिक आस्थाएं विभिन्न प्रकार की थीं, क्योंकि वे अनेक देवताओं में श्रद्धा रखते थे। ये सभी कबीले अपनी एक विशेष स्थापित परंपरा के पालन से बंधे थे, जिसे *सुन्ना* कहते थे और जो उनके अपने कबीले की परंपराओं द्वारा मान्य और अनुकूलित होता था। *इमाम* कबीले का नेता होता था और उसके काम ही कानून को स्थापित और अभिव्यक्त करते थे। मक्का निवासी मूर्तिपूजक थे; हर कबीले का अपना एक देवता होता था। काबा में *हुबुल* (कुरैश कबीले का मूर्ति देवता), *लाट, मनत* और *उज़्ज़ा* का निवास था। वहां यहूदी धर्म और ईसाई धर्म का भी प्रचलन था। यहां तक कि छठी सदी में यहूदी राजा असद ने अपने राज्य यमन में ईसाईयों का उत्पीड़न भी शुरू किया था।

15.2.1 *जहालिया* : इस्लाम पूर्व का अज्ञानता का काल

इतिहास के इस्लामी स्रोतों में इस्लाम पूर्व काल को *जहालिया* कहा गया है, जिसका मतलब था इस्लामिक एकेश्वरवाद तथा दैवीय नियमों की जानकारी के अभाव का काल। इस्लामी स्रोतों में मुहम्मद के कर्तव्य का प्रतिनिधित्व बहुदेववाद के खिलाफ एकेश्वरवाद को और मुख्य रूप से पैगम्बर अब्राहम के एकेश्वरवाद को पुनःस्थापित करने के संघर्ष के रूप में पेश किया गया है। इस्लामी स्रोत *जहालिया* काल के प्रमुख लक्षणों के रूप में कम उम्र की कन्या हत्या, मूर्ति पूजा, सूदखोरी और कबीलाई झगड़े आदि कुरीतियों का उदाहरण देते हैं। कन्या हत्या की परंपरा के बारे में लैला अहमद कहती हैं कि 'कुरान में कन्या हत्या की जो भर्त्सना की गई है, वह उस शर्म और कुप्रथा को अभिव्यक्त करती है, जो *जहालिया* अरबों में लैंगिकता को लेकर मौजूद थी।'

हालांकि उसी काल में, न सिर्फ मक्का का विकास एक बड़े व्यापारिक केंद्र के रूप में हुआ, बल्कि अरबी साहित्य में ***कसीदा***, जीवनियां और किस्सागोई ज़ैसी अनेक नई साहित्यिक विधाएं भी परवान चढ़ीं। इस्लाम पूर्व अरबी काव्य की सात उत्कृष्ट रचनाओं के रूप में मशहूर *सबा मुआलक़त* उन सात संबोधन गीतों (Odes) का संग्रह है, जिसे काबा में टांगा गया था। इन *कसीदों* (स्तुति गानों) में कबीलाई परंपराओं का चित्रात्मक वर्णन तथा खानाबदोश अरब बद्दुओं की लड़ाई और वीरता का मंत्र मुग्ध करने वाला बखान यह स्पष्ट करता है कि इस्लाम के उदय से पहले भी अरबी भाषा और साहित्य के पास अपनी एक संपन्न परंपरा थी।

इमरु अल-कैस बिन हुज्र अल-किंदी रचित *क़िफा नबकी* को आज भी अरबी की एक उत्कृष्ट रचना माना जाता है। काव्य प्रतिभा के धनी और वीर योद्धा अंतार इब्न शादाद ने *सीरत अंतार* तथा अन्य कई *कसीदों* की रचना की थी। जुहेर बिन अबि सालमा, लेबिद और अल-हरीथ इस्लाम पूर्व अरबी साहित्य की कुछ मशहूर प्रतिभाएं थीं। ये स्रोत बताते हैं कि अरब बस्तियों में आमतौर पर अत्यधिक कबीलाई अराजकता का माहौल रहता था, केवल उन कुछ महीनों को छोड़कर, जिन्हें पवित्र महीने समझा जाता था, जब सब कुछ शांत हो जाता था। इन महीनों में आपसी युद्ध बंद हो जाते थे। लोग अपने कबीले के रिवाजों का पूरी तरह से पालन करते थे और उनके प्रति निष्ठावान रहते थे।

इस्लाम का महिलाओं की स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ा, इसके बारे में जैंडर (gender)

इतिहासकारों के दो परस्पर विरोधी विचार हैं। एक समूह, जिसका प्रतिनिधित्व जूडिथ टकर करती हैं, का तर्क है कि *जहालिया* के दौर में स्त्रियां पूरी तरह से कबीलों की निरंकुश सत्ता के अधीन थीं और संपत्ति में उनकी कोई हिस्सेदारी नहीं थी। इस्लाम ने न सिर्फ कन्या हत्या पर रोक लगाई, बल्कि उन्हें संपत्ति में भी अधिकार दिलाया। लेकिन एक अन्य इतिहासकार लैला अहमद इस धारणा को यह कहते हुए नकार देती हैं कि इस्लामी कानूनों ने औरतों की आजादी खत्म कर दी। हालांकि इस्लाम पूर्व अरब में विवाह ज़ैसी कोई निश्चित संस्था नहीं थी, लेयला अहमद तर्क देती हैं कि 'हालांकि *जहालिया* में विवाह का जो भी स्वरूप था, उसके आधार पर यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि उसमें औरतों को ज्यादा अधिकार प्राप्त थे या उसमें नारीद्वेष का अभाव था, लेकिन वे उसका संबंध इस तथ्य से जरूर जोड़ती हैं कि उसमें इस्लाम में दी गई आजादी की तुलना में औरतों को ज्यादा यौनिक आजादी हासिल थी। इस्लाम की स्थापना, इसके द्वारा पितृवंशीय पुरुषवादी वैवाहिक संस्था को वैध मानने की संकल्पना और इनके कारण होने वाले सामाजिक बदलावों ने औरतों की उस स्वायत्तता और भागीदारी में कटौती की।'

बोध प्रश्न-1

1) *'जहालिया'* शब्द का अर्थ संक्षेप में लिखिए। क्या आप इस धारणा से सहमत हैं कि इस्लाम पूर्व का समय अज्ञानता का काल था?

.....

.....

.....

.....

.....

2) इस्लाम पूर्व के अरब किस प्रकार के धार्मिक रिवाजों का पालन करते थे?

.....

.....

.....

.....

.....

15.2.2 महान् साम्राज्यों के मध्य अरब

छठी सी ई तक उत्तरी अरब प्रायद्वीप में दो कबीलाई राजनैतिक संघटन अस्तित्व में आ चुके थे – ग़सानिद और लखमिद। हालांकि ग़सानिदों (220-638 सी ई) ने आरंभ में पश्चिमी अरब में बाइज़ेंटाइनों के विस्तार का काफी प्रतिरोध किया, आखिरकार बाइज़ेंटाइन उन्हें पश्चिम की तरफ सासानिदों के विस्तार के खिलाफ एक अधीनस्थ और मध्यवर्ती राज्य बनाने में सफल रहे। ग़सानिदों (आज का सीरिया और जॉर्डन) की राजधानी जाबिया (सीरिया में स्थित) थी। धीरे-धीरे वे प्रधानतः ईसाई बन गए और अक्सर बाइज़ेंटाइन का पक्ष लेते थे। गसानिद शासक अपने नाम के साथ *मलिक* उपाधि लगाते थे और 529 सी ई में एक ग़सानिद राजा अल हरीथ पंचम ने बाइज़ेंटाइन सम्राट से पैट्रीकस की उपाधि प्राप्त की, जिसके नाम से वह सीरिया का शासन चलाता था।

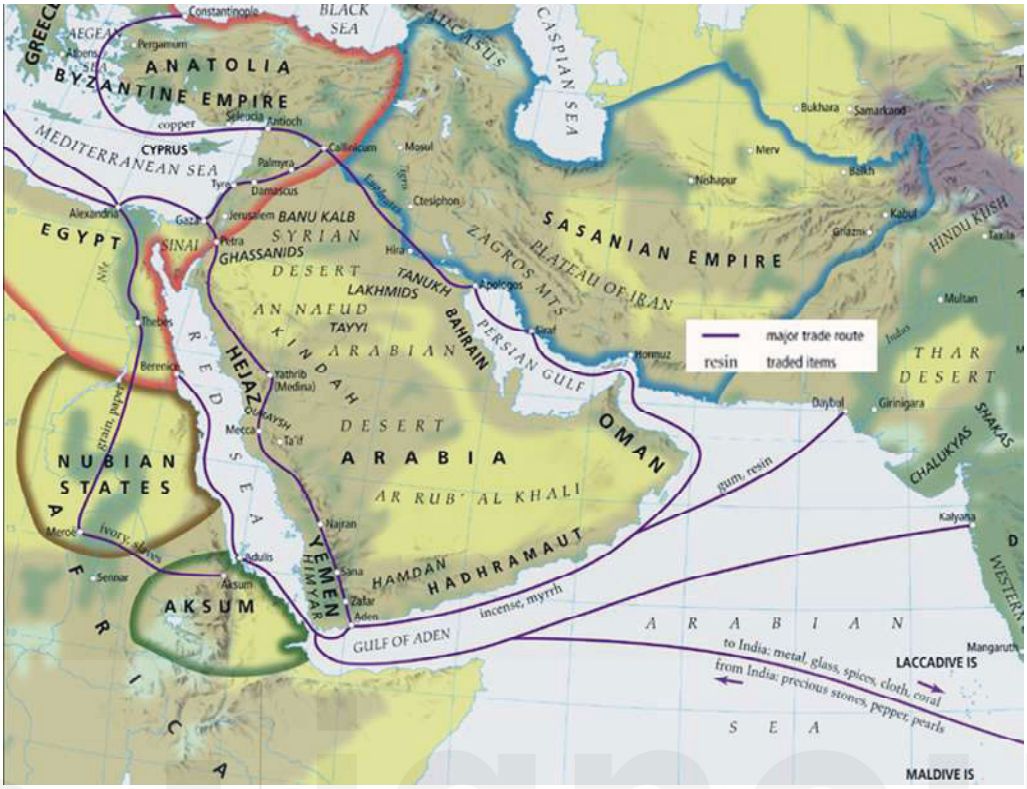

मानचित्र 15.1: इस्लाम पूर्व अरेबिया

साभार: एलन एस. (अक्टूबर 2016) इन्ट्रोडक्शन टू अरब हिस्ट्री (6 सेंचुरी); शार्ट हिस्ट्री वेबसाइट

स्रोत: https://www.shorthistory.org/middle-ages/islamic-world/introduction-to-arab-history-6th-century/

इसी बीच यूफ्रेट्स नदी के निचले हिस्से के निकट दक्षिण में (ईराक में) बानू लखम कबीले के अधीन समान राजनैतिक संघटन उभरा, जिन्हें लखमिद (300-602 सी ई) कहा जाता था, जिसकी राजधानी हीरा थी। वे राजनैतिक रूप से सासानिदों के लिए महत्वपूर्ण थे। लेकिन छठी सदी के आखिरी दशक में सासानी राजा खुसरो द्वितीय (590-628 सी ई) ने लखमिद राजा नुमान अल-मुंदीर का कत्ल करवा दिया, ताकि उस इलाके को सीधे अपने नियंत्रण में ले सके। लेकिन इस विस्तारवादी कदम का उलटा असर हुआ और लखमिदों ने सासानी सैनिकों को सीमा से बाहर खदेड़ दिया। इस तरह उनके बीच की संधि स्थायी रूप से टूट गई।

इतिहासकारों का तर्क है कि ईसा की छठी शताब्दी में उत्तर में बाइज़ेंटाइनों और सासानिदों के बीच के अनवरत संघर्ष के कारण व्यापारिक गतिविधियां बड़े पैमाने पर अरब प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग की ओर मुड़ने लगी थीं। मक्का को अपनी तटस्थता के कारण इससे फायदा हुआ। इसके अलावा, अरबों में यह भावना जगी कि वे हाजरा और इब्राहिम के बेटे 'इश्माइल' या 'हाजरा' के वंशज हैं। अरब अलग-अलग बोलियां बोलते थे, लेकिन वे अरबी भाषा की ही विभिन्न प्रकार की बोलियों के प्रकार थे, जिसे वे आपस में समझ लेते थे। वे यह तथ्य भी समझने लगे कि उनकी भाषा एक ही है, जो अरबी है, जो अलग से पहचानी जा सकती है और जिसके पास अपना काव्य और वाचिक परंपरा (oral tradition) है। इस तरह व्यापार, स्थायी कृषि, स्थानबद्ध जीवन निर्वाह के तरीके, अरब चेतना और समाज में बड़े पैमाने पर अर्जित दौलत ने कबीलों के बीच लंबे समय से संस्थापित संबंधों को कमजोर करना शुरू कर दिया। वे ढीले पड़ने लगे और अन्ततः टूट गए।

15.2.3 दक्षिणी अरब प्रायद्वीप

अरब प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग में तीन बड़े क्षेत्र थे – हेजाज़, ओमान और यमन। छठी शताब्दी के उत्तरार्ध तक मदीना में यहूदी आबादी का प्रभुत्व हो गया था, जिसका नियंत्रण *मरज़ुबान*

(सैन्य-नागरिक गवर्नर) द्वारा किया जाता था। मदीना के यहूदी कबीले *नादिर* और *कुरायजा*, *अव्स* और *खज़राज* ज़ैसे कबीलों से कर वसूलते थे, क्योंकि मदीना छठी शताब्दी के अंतिम दशक तक परोक्ष रूप से सासानिदों के नियंत्रण में रहा। *अव्स* और *खज़राज* अरबों की दो प्रमुख जनजातियां थीं, जिनके पास मदीना की पूरी **नखलिस्तानी** बस्तियों में अपनी जमीनें थीं।

बावजूद इसके, मक्का के कुरैशों ने अपनी बस्तियों को ज्यादा आंतरिक स्थिरता प्रदान की, जो उनके कबीलाई भाईचारे की वजह से नहीं, बल्कि आपसी मैत्री और समझौतों के कारण थी। एफ. राबिन्सन के मुताबिक, 'कुरैशों का विस्तार इस्लाम के उदय के पहले शुरू हो गया था...।' कुरैशों ने व्यापार में अपना पैसा लगाना शुरू किया, वे मक्का के व्यापार पर नियंत्रण करने लगे और समय के साथ उसे एक फलता-फूलता व्यापारिक शहर बना दिया। इसके अलावा, मक्का पहले से भी एक धार्मिक केंद्र था और मक्का के नेता पूरी अरब राजनीति से किसी न किसी रूप में जुड़े हुए थे। कुरैश दो भागों में बंटे हुए थे, *बीताह* और *ज़वाहिर – बीताह* ज़मज़म के नखलिस्तान को नियंत्रित करते थे जिसने उन्हें *ज़वाहिरों* पर श्रेष्ठता प्रदान की।

ओमान और यमन, ये दो बड़े क्षेत्र भौगोलिक रूप से भिन्न थे, क्योंकि वहां का मौसम सम शीतोष्ण था, जो कृषि कार्यों के अनुकूल था। प्रायद्वीप के उत्तरी क्षेत्रों के उलट, यमन और ओमान का भारत, इथियोपिया और मिस्र से पुराना व्यापारिक संबंध था। दूसरे शब्दों में, अरब प्रायद्वीप में उत्तरी क्षेत्र के विपरीत दक्षिणी इलाकों को उर्वर भूमि, हिंद महासागर (भारत से व्यापार) को लाल सागर (पूर्वी भूमध्यसागर) से को जोड़ती एक बेहतर अवस्थिति, अनुकूल मौसम और प्रचुर वनस्पतियों का वरदान प्राप्त था। सुगंधी (incense) और ऊंटों के व्यापार पर यमनी सौदागरों और व्यापारियों का कब्जा था। यमनी व्यापारी अपने साथ चमड़ा, मसाले, सिल्क वगैरह भी लाते थे, जो बाइज़ेंटाइनों और सासानिदों, दोनों के लिए उपयोगी था। डियोडोरस साइकुलस ने *बिबलियोथिका हिस्टोरिका* में लिखा है कि अरब (नबातियन) मिर्र (myrrh; गंध रस) और लोबान ज़ैसी विलासतापूर्ण वस्तुओं की आपूर्ति को नियंत्रित करते थे, जो रोमनों और सासानिदों के लिए देव अर्धय तथा औषधीय कार्यों के लिए अत्यंत मूल्यवान चीजें थीं। बाइज़ेंटाइन, जो मुख्य रूप से ईसाई थे, वे चर्च के आयोजनों में लोबान का इस्तेमाल करते थे। हेजाज़ इलाके के बाशिंदे सामान्य तौर पर ऊंट पालक घुमंतू, अर्ध-घुमंतू बद्दू जनजातियों से संबंधित थे। आरंभ में ये बद्दू स्थायी बस्तियों पर हमले करते थे और उनसे संरक्षण शुल्क वसूला करते थे, जिसे *थव्वा* कहा जाता था। समय के साथ नखलिस्तानों में होने वाले पर्यावरणीय बदलावों ने इन्हें कबीलाई सामाजिक संगठनों में आने को बाध्य किया और वे स्थिर जीवन बिताने और कारवाओं वाले व्यापार की ओर उन्मुख होने लगे। इस नई उभरती व्यापार प्रणाली और संपन्नता का एक महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि मक्का एक व्यापारिक केंद्र की तरह विकसित होने लगा। नखलिस्तानों में खजूर ही मुख्य फसल थी, जबकि पर्वतीय क्षेत्रों, ज़ैसे तैफ में अनाज भोजन के मुख्य अंग थे।

इस तरह पांचवीं सदी सी ई के बाद उत्तर की ओर से बैजेंटाइनों और सासानिदों की घुसपैठ के बावजूद इस्लाम पूर्व अरब निवासी अलग-थलग नहीं पड़े, बल्कि विश्व की राजनैतिक धाराओं से नजदीकी से जुड़े रहे। अपने निकट के राज्यों और वहां के लोगों से अरब लगातार संवाद और आदान प्रदान-करते रहे।

15.3 अरब में इस्लाम और मुहम्मदः प्रारम्भिक इस्लामी समाज

पैगंबर होने का दावा करने से पहले मुहम्मद के पूर्व जीवन से संबंधित ऐतिहासिक जानकारी बहुत कम हैं। आमतौर पर वृतांत इस प्रकार उपलब्ध है कि, इस्लाम के पैगंबर मुहम्मद बिन अब्दुल्ला का जन्म मक्का में कुरैश कबीले में 570 सी ई में हुआ था। बचपन में मां-बाप के

गुजर जाने के कारण मुहम्मद की परवरिश उनके चाचा अबू तालिब द्वारा की गई। वे अक्सर प्रार्थना और ध्यान लगाने के लिए मक्का के निकट जबाल अल-नूर में स्थित हीरा की गुफा में जाया करते थे। 610 सी ई में एक शांत रात्रि में हीरा की गुफा में फरिश्ते जिबराइल के माध्यम से पैगंबर पर पहली ईश्वरीय आकाशवाणी (अरबी में *वही*) प्रकट हुई। जिबराइल को देखकर मुहम्मद भयभीत हो गए और शीघ्रता ही वापस घर चले गए। लेकिन कुछ ही समय में वे स्वयं ईश्वर का पैगंबर होने का अहसास करने लगे। तत्पश्चात् मुहम्मद ने अपने नाते-रिश्तेदारों के बीच 13 वर्षों तक मक्का में इस्लाम के बारे में अपने नए संदेशों का प्रचार शुरू कर दिया और कुछ लोग उनके अनुयायी भी बन गए। मुहम्मद के संदेशों का केंद्रीय तत्व *तौहीद* (दैवीय एकेश्वरवाद) और रोजाना पांच वक्त की नमाज था। इस इस्लामिक सिद्धांत का सार तत्व था कि '*अल्लाह के अतिरिक्त कोई अन्य ईश्वर नहीं* है और *मुहम्मद ही उसके पैगंबर* हैं'। मुहम्मद ने मूर्तिपूजा के परित्याग का उपदेश दिया, जिससे मक्कावासी डर गए, क्योंकि उनका केंद्रीय पूजा स्थल काबा उनके अपने कबीलाई देवताओं का देवस्थान ही था।

मक्का में दिए जा रहे मुहम्मद के उपदेशों से अधिकांश कुरैश सशंकित हो गए। उन्होंने इसका विरोध करना और मुसलमानों को प्रताड़ित करना शुरू किया, क्योंकि मुहम्मद के उपदेशों से मक्का के नेताओं की आध्यात्मिक भावनाओं और भौतिक हितों के लिए खतरा पैदा होने लगा। इब्न इशाक (704-770 सी ई) ने कुरैश नेताओं और मुहम्मद के बीच बिगड़ते संबंधों को निम्नलिखित शब्दों में बयान किया है:

> जब कुरैशों ने देखा कि मुहम्मद उनकी बात नहीं मानेंगे और वे धीरे-धीरे उनसे कटते जा रहे हैं और उनके देवताओं का अपमान करते हैं और उनके चाचा तालिब उनके प्रति स्नेह रखते हैं और उनकी रक्षा के लिए वे उठ खड़े होंगे और कभी उनका परित्याग नहीं करेंगे तो उनके कुछ प्रमुख लोग अबू तालिब के पास गए ... और जाकर कहा, ''ओ अबू तालिब, तुम्हारे भतीजे ने हमारे देवताओं को धिक्कारा है, हमारे धर्म का अपमान किया है, हमारी जीवन शैली का मजाक उड़ाया है और हमारे पुरखों में खामियां निकाली हैं। या तो तुम उसे रोको या उसे हमें सौंप दो, क्योंकि तुम भी उसी हाल में हो जिस हाल में उसके विरुद्ध खड़े हम लोग हैं। तुम उसे हमें सौप दो और हम उससे तुम्हें छुटकारा दिलवा देंगे''।

यह धमकी गंभीर और वास्तविक थी। इसके बाद कुरैशों ने मुसलमानों को प्रताड़ित करने के लिए उन्हें पीटने, कड़ी धूप में खड़ा रखने तथा उनका सामाजिक और आर्थिक बहिष्कार करने की शुरुआत कर दी। कुरैशों ने मुहम्मद के अनुयायियों के उस छोटे से समुदाय को चेतावनी दी, '*हम तुम्हारा बहिष्कार करेंगे और तुम्हें भीख मांगने पर मजबूर कर देंगे*'।

नतीजा यह हुआ कि मुहम्मद और उनके इस नव दीक्षित मुस्लिम समुदाय को मक्का वासियों के तीखे विरोध और प्रताड़ना का सामना करना पड़ा। और आखिरकार 13 साल तक इस पीड़ा को झेलने और काफी सोच-विचार करने के बाद मुहम्मद और उनके अनुयायी 622 सी ई में उत्तर की ओर याथरिब (मदीना) चल पड़े। यह प्रव्रजन (*हिजरा*) एक ऐतिहासिक परिघटना है और इस्लाम के इतिहास में इतना महत्वपूर्ण है कि इस्लामी हिजरी कैलेंडर की शुरुआत ही इस घटना से होती है। मक्का में मुहम्मद के कार्यों का सार प्रस्तुत करते हुए इरविंग एम. ज़ैटलिन तर्क देते हैं, 'मक्का में पैगंबर ने प्रवचन किया और सलाह दी, लेकिन इसके आगे उनकी कोई योजना या रणनीति नहीं थी'। यह इस्लाम के इतिहास के एक महत्वपूर्ण तत्व को रेखांकित करता है, क्योंकि मक्का से प्रव्रजित होने के मुहम्मद के फैसले का उद्देश्य 'गहन धार्मिक और गंभीर राजनैतिक दोनों था' क्योंकि मक्का में इस दृढ़निष्ठ एकेश्वरवाद के लिए मुसलमान बहुदेववादी धर्मांधता और असहिष्णुता से दूर भाग रहे थे।

15.3.1 622 सी ई में मदीना के लिए प्रव्रजन

याथरिब (मदीना) पहले से ही एक बहुधर्मी शहर था, वहां अनेक यहूदी जनजातियां, कई प्रकार के गैर-यहूदी और गैर-ईसाई समुदाय बसे हुए थे। उनके बीच मक्का के प्रव्रजित मुसलमानों (*मुहाजिरीन*) के आ जाने से एक नया तबका और आ जुड़ा। मुहम्मद के आगमन का वहां स्वागत हुआ। हालांकि याथरिब (मदीना) एक विभाजित शहर था। आर्थिक और सैन्य रूप से यहूदी जनजातियां वहां प्रभुत्वशाली थीं। 622 सी ई में वहां की 12 यहूदी जनजातियों द्वारा मुहम्मद को पंच के रूप में 'मदीना का संविधान' तैयार करने के लिए बुलाया गया। इब्न इशाक के अनुसार वहां पहुंचने पर 'ईश्वर के संदेशवाहक (मुहम्मद) ने आव्रजक (*मुहाजिरीन*) और *अंसार* (मदीना में रहने वाले मुसलमानों) के बीच एक दस्तावेज तैयार किया, जिसमें उन्होंने यहूदियों को उनके धर्म और आधिपत्य में प्रतिष्ठित करते हुए एक सुलहनामा और प्रतिज्ञापत्र लिखा। उसमें उनके अधिकार और कर्तव्य सुनिश्चत किए गए थे'।

मदीना का संविधान

इब्न इशाक ने इस दस्तावेज के महत्वपूर्ण अवयव इस प्रकार बताए हैं :

1 कोई भी आस्थावान दूसरी आस्था के अनुयायी का विरोध नहीं करेगा। जो भी इससे बगावत करेगा और आस्थावानों के बीच अन्याय, शत्रुता या ईश निंदा फैलाने की कोशिश करेगा, उसके खिलाफ हर हाथ उठेगा, चाहे वह उसका बेटा ही क्यों न हो।

2 जो भी यहूदी हमारा अनुसरण करेगा, उसकी मदद की जाएगी और बराबरी का दर्जा दिया जाएगा और उसे चोट पहुंचाने या उसके दुश्मन की सहायता करने की कोशिश नहीं की जाएगी।

3 जब तक किसी समान शत्रु से युद्ध लड़ा जा रहा है, तब तक यहूदी भी आस्थावानों के साथ युद्ध का खर्च उठाएंगे।

4 यहूदी अपने धर्म का पालन करेंगे और मुसलमान अपने धर्म का। निष्ठा, विश्वासघात के खिलाफ सुरक्षा देगी। यहूदियों के घनिष्ठ मित्र उन्हीं की तरह हैं। मुहम्मद की इजाजत के बिना कोई भी यहूदी किसी सैन्य अभियान पर नहीं जाएगा। लेकिन उसे अपनी क्षति का बदला लेने से रोका नहीं जाएगा।

5 *याथरिब* की घाटी (मदीना) पवित्र होगी और उन सबके लिए अलंघ्य होगी जो इस सुलहनामे में शामिल होंगे। इस समझौते में शामिल सभी पक्ष *याथरिब* पर होने वाले किसी भी हमले के समय एक दूसरे की सहायता करने के लिए वचनबद्ध होंगे।

गेरहार्ड बाउरिंग 'मदीना के संविधान' के आधारभूत परिणामों के बारे में बताते हैं कि 'मदीना के संविधान के रूप में मुहम्मद के मदीनाई समाज के संगठन ने राजनीतिक चिंतन का एक व्यावहारिक प्रारूप दिया, जिसमें एक नई राज्य व्यवस्था कायम करने के बारे में पैगंबर की व्यावहारिक सोच की झलक मिलती है।' मुहम्मद ने *अल-मस्जिद उन-नबी* नामक एक मस्जिद बनवाई, जो उमय्यद राजवंश (661-749) के उदय तक तमाम इस्लामिक राजनीतिक गतिविधियों का केंद्रबिंदु बनी रही। उन्होंने एक ऐसा मुस्लिम समाज (*उम्मा*) तैयार किया, जो अपने कबीलाई संबंधों के कारण नहीं, बल्कि धार्मिक विश्वासों के कारण आपस में जुड़ा हुआ था। मदीना के संविधान ने इस्लाम के साझा धार्मिक विश्वास के आधार पर एक नए तरह के सामूहिक भाईचारे (*असाबिया*) को जन्म दिया।

624 सी ई में मदीना में इस्लाम के निरूपण के दौरान मक्का के कुरैश लगातार मुसलमानों पर हमला करते रहे और *बद्र* तथा *उहुद* में उन्होंने दो ऐतिहासिक लड़ाइयां लड़ीं। बद्र में हालांकि मक्का की फौज मुसलमान सेना से बड़ी थी और उसका नेतृत्व अबू जहल (मृत्यु 624 सी ई), उत्बा और अबू सूफियान जैसे उनके कुशल योद्धा कर रहे थे। मक्का से दमिश्क

जाने वाले काफिलों के लिए बद्र एक नियमित पड़ाव था, क्योंकि वहां कई कुंए थे। बद्र की लड़ाई में मुसलमानों की फतह हुई और यह काफी प्रभावकारी साबित हुई, क्योंकि अरबों ने पहली बार यह महसूस किया कि मुहम्मद और मुसलमान उनके प्रमुख प्रतिद्वंदी हैं और मक्का के कुरैशों की प्रतिष्ठा, श्रेष्ठता और राजनैतिक भूमिका की विरासत के शक्तिशाली दावेदार हैं।

हालांकि उसी वर्ष अबू सूफियान और खालिद बिन वालिद (585-642 सी ई) के नेतृत्व में मक्का के कुरैशों ने उहुद में मुसलमानों को परास्त किया। मक्का वासियों और मुसलमानों के बीच 627 सी ई में आखिरी लड़ाई खन्दक का युद्ध (बैटल आफ ट्रेंचेस) हुई जब मक्का आक्रमणकारियों ने मदीना को 27 दिनों तक घेरे रखा। मुसलमानों ने मक्का के सैनिकों को मदीना में घुसने से रोकने के लिए एक असाधारण तरीका अपनाया। उन्होंने प्रत्येक प्रवेश द्वार पर खाई खोद दी। मदीना की घेरेबंदी अंततः असफल हो गई।

15.3.2 मक्का की फतह

तत्पश्चात् मुहम्मद अपने साथियों को लेकर तीर्थ यात्रा (हज) के लिए निहत्थे मक्का के लिए निकले, लेकिन उन्हें मक्का में प्रवेश से रोक दिया गया। लेकिन बाद में कुरैशों ने अपने एक दूत सुहैल को मुहम्मद से समझौता करने के लिए भेजा। दोनों के बीच एक शांति पत्र पर दस्तखत किए गए, जिसे हुदैबिया की संधि (628 सी ई) के नाम से जाना जाता है। इस संधि के अनुसार दोनों पक्षों में निम्नलिखित मुद्दों पर सहमति हुई:

- कुरैश और मुसलमानों के बीच दस वर्षों के लिए युद्ध विराम रहेगा।
- अपने कुनबे के प्रमुख की इजाजत के बिना यदि कोई भी कुरैश इस्लाम स्वीकार करता है, तो उसे मक्का वापस कर दिया जाएगा। यदि कोई मुसलमान अपने कुरैश धर्म में वापस लौटना चाहता है, तो उसे ऐसा करने की इजाजत होगी और उसे वापस मुसलमानों को नहीं सौंपा जाएगा।
- मुसलमानों को अगले साल (अर्थात् 629 तक) तक तीर्थाटन (हज) के लिए मक्का में प्रवेश की इजाजत नहीं होगी। मुसलमान यहां अपने साथ सिर्फ अपनी तलवार ला सकते हैं।

इस समझौते से मक्कावासी कुरैशों ने मदीना के इस्लामिक राज्य की वैधता को स्वीकार कर लिया, मुसलमानों को सार्वजनिक रूप से अपनी आस्था का पालन करने की इजाजत दे दी और यह संभव बना दिया कि दूसरे कबीले भी मुसलमानों के साथ ऐसे समझौते कर सकें।

महज दो वर्षों के भीतर ही कुरैशों ने हुदैबिया की संधि की शर्तों का उल्लंघन कर दिया। इससे मुसलमान बेहद नाराज हुए और 630 सी ई में उन्होंने एक बड़ी सेना लेकर मक्का पर चढ़ाई कर दी और उसे जीत लिया। मुहम्मद का जीवन अपने चरम उत्कर्ष पर था और मक्का की फतह से उसका चक्र पूरा हो गया। उन्होंने मक्का में काबा के परिसर से सारी मूर्तियां हटा दीं। अरब के सभी कबीलों ने उनका नेतृत्व स्वीकार कर लिया, उन्होंने मक्का वासियों को आम माफी दे दी और वे तुरंत मदीना लौट गए, जहां 632 सी ई में उनका निधन हो गया। इस तरह 622 सी ई में हिजरत के बाद के दस वर्षों का मुहम्मद का जीवन घटनाओं से भरा हुआ रहा। इस अवधि में उन्होंने 'मदीना का नगर राज्य स्थापित किया तथा एक नए समुदाय (*उम्मा*) का संघठन किया, जिसमें वे सभी शामिल थे, जिनकी आस्था एक समान थी और जिसका आधार परंपरा से चला आ रहा रक्त और वंश आधारित कबीलाई संबंध नहीं था'।

यह सही है कि अरब क्षेत्र में एक नए राज्य समाज मदीना का उदय हो चुका था, जो मुख्य रूप से इस्लामिक था, लेकिन वाचिक (oral) काव्य परंपराएं जारी रहीं। *कसीदे* ज़ैसी स्तुति गाथाएं रची जाती रहीं और फलती-फूलती रहीं। अब्दुल्ला इब्न रवाह, काब इब्न मलिक और

हसन बिन साबित (मदीना के निवासी) ज़ैसे अरब रचनाकारों ने मुहम्मद की आस्था और अभियान के पक्ष में बड़े-बड़े कसीदों (प्रशस्ति गाथाओं) की रचना की। जब बनू तमीम के लोगों की मुहम्मद के साथ बहस हुई थी, तो उन्होंने अपने महान् कवि अज ज़ब्रकान बिन बद्र के माध्यम से ही उन्हें चुनौती दी थी। हसन बिन साबित ने तुरंत अपनी रचना के माध्यम से उनका जवाब दिया और बनू तमीम ने अपनी पराजय स्वीकार की।

इस्लाम के उदय संबंधी व्याख्याएं

इस्लाम के उदय और अरब इस्लामिक साम्राज्य के तीव्र फैलाव की व्याख्या को लेकर विद्वानों के बीच घमासान विवाद होता रहा है। इस विवाद की शुरुआत मोंटगोमरी वाट (1909-2006) की किताब *मुहम्मद इन मक्का* (1953) से होती है, जिसमें वे तर्क देते हैं कि छठी शताब्दी सी ई में अरब समाज में बहुत तेजी से बदलाव हुए। कुरैशों के व्यापार और वाणिज्यिक गतिविधियों की ओर बढ़ने तथा स्थिर जीवन शैली अपनाने के कारण, विशेष रूप से मक्का में, धन की जो बाढ़ आई उससे कबीलाई व्यवस्था वाली सामाजिक प्रणाली छिन्न-भिन्न होने लगी। व्यापार के विस्तार, कृषि और नवीन एकत्रित धन ने वास्तव में एक श्रेणीबद्ध और स्तरित समाज का निर्माण शुरू किया, जो गहरे आध्यात्मिक संकट से जूझ रहा था। इसने अरबी समाज में *धन और शक्ति के असमान वितरण,* भारी सामाजिक असमानताओं और सामाजिक विद्वेष को जन्म दिया। इसीलिए मुहम्मद के उपदेशों के केंद्रीय मूल्य सामाजिक समानता, उदारता और भाईचारा थे, क्योंकि अमीरों और गरीबों के बीच की खाई अनवरत बढ़ती जा रही थी।

वाट ने अपने इन निष्कर्षों के लिए *कुरान, हदीस* और मुहम्मद की जीवनियां ज़ैसे अरबी इस्लामी स्रोतों को प्रमाणिक माना। वाट का मानना था कि इस्लाम छठी और आरंभिक सातवीं सदी के घुमंतू खानाबदोश समाज के एक स्थिर जीवन शैली में बदलने की प्रक्रिया को, खासकर हिजाज़ प्रदेश में, सर्वश्रेष्ठ सामाजिक औचित्य प्रदान करता है। सामान्य अर्थ में, बाइज़ेंटाइनों और सासानिदों के बीच चल रहा अनवरत युद्ध फारस की खाड़ी को व्यापारिक गतिविधियों के लिए खतरनाक बनाता जा रहा था। असद के शासन काल में आंतरिक धार्मिक झगड़ों के कारण यमन राज्य का पतन हो गया। इसका स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि मक्का के कुरैशों ने इस पूरे व्यापार पर कब्जा कर लिया। इसने मक्का को एक वित्तीय और फलते-फूलते व्यापार का केंद्र बना दिया। सातवी सदी के आरंभ में, जब कुरैशों का पूरे व्यापार पर लगभग एकाधिकार हो गया था, मक्का की बद्दू जनजातियों के साथ उनका संबंध तनावपूर्ण हो गया, क्योंकि स्थायी जिंदगी बसर करने वालों और घुमंतू बद्दुओं के बीच की असमानता बढ़ती जा रही थी।

1987 में पैट्रिशिया क्रोन (1945-2015) और माइकेल कुक ने अपने अध्ययन का आधार ग्रीको-रोमन तथा इस्लाम के उदय से संबंधित अन्य स्रोतों को बनाया। क्रोन ने कहा कि वाट का यह निष्कर्ष कि वाणिज्यिक और व्यापारिक गतिविधियों से आया धन अरबों की कबीलाई व्यवस्था को कमजोर कर रहा था, अनुचित और अविश्वसनीय लगता है, क्योंकि 'मक्कावासी विलासिता की वस्तुओं की तुलना में आम उपयोग की वस्तुओं की तिजारत करते थे' जो कबीलाई भाईचारे को बेदखल नहीं करता था। क्रोन कहती हैं कि इस्लाम उसी समाज में पैदा हुआ, जिसमें कबीलाई मूल्यों की जड़ें गहरी थीं और वह मक्का में सफल नहीं हुआ, बल्कि मदीना में जाकर हुआ, जहां के लोगों ने उनके उपदेशों को स्वीकार किया। क्रोन इस निष्कर्ष पर भी संदेह करती हैं कि व्यापार से आए भारी धन ने कबीलाई समाज में किसी प्रकार की अव्यवस्था पैदा की और आध्यात्मिक संकट को जन्म दिया।

बोध प्रश्न-2

1) 'मदीना के संविधान' के बारे में आप क्या जानते हैं? मदीना के जीवन पर इसका क्या खास असर पड़ा?

.....

.....

.....

.....

.....

2) मदीना के मुसलमानों के लिए हुदैबिया की संधि क्यों महत्वपूर्ण थी? मदीना का इस्लामिक राज्य अरब के दूसरे नगर-राज्यों से अलग कैसे था?

.....

.....

.....

.....

.....

15.4 इस्लामी खिलाफत और इस्लामी जगत में फूट

632 सी ई में मुहम्मद के निधन के बाद मुसलमानों के बीच जो अभूतपूर्व खालीपन पैदा हुआ और उससे विरासत की जो समस्या खड़ी हुई, उसके कारण मुस्लिम समाज गहरे अवसाद में चला गया। मुहम्मद ने अपना वारिस तय नहीं किया था। कबीलाई पूर्वाग्रह फिर से उभरने लगेः बनू हाशिम कुल ने अली को उत्तराधिकारी माना, कुरैश प्रवासियों ने अबू बकर का समर्थन किया और *अन्सारों* की पसंद साद बिन अबादा थे। आखिरकार उसी वर्ष गतिरोध तब टूटा, जब अबू बकर (632-634 सी ई) को इस्लामी राज्य का प्रथम खलीफा चुन लिया गया और उन्होंने *खिलाफत-उल रसूल* की उपाधि ग्रहण की। मुहम्मद की मृत्यु के बाद अनेक अरब कबीलों ने मदीनी राज्य की सर्वोच्चता को चुनौती दी। उन्होंने राजनैतिक स्वतंत्रता पाने की कोशिश की और कर देना भी बंद कर दिया। अबू बकर ने उन तमाम बगावती कबीलों को जल्दी ही शांत कर दिया। इसके लिए उन्हें कई लड़ाइयां लड़नी पड़ीं, जिन्हें इतिहास में *रिद्दा* युद्धों के नाम से जाना जाता है। समय के साथ इस्लामी खिलाफत के नाम से जिस राजनीतिक ढांचे का विकास हो रहा था, वह धर्म और राज्य के मज़बूत गठजोड़ का प्रतिनिधित्व करता था।

अबू बकर के बाद उमर (634-644 सी ई) आये, जिन्होंने खिलाफत की संरचना में आमूल परिवर्तन किए। मध्य काल के मुस्लिम इतिहासकार उन्हें बहुत सारे ढांचागत नए बदलावों का श्रेय देते हैं, मसलन कर वसूली के लिए *दीवान* की नियुक्ति, अधिकारियों के भत्ते का निर्धारण, *काजी* के पद की स्थापना, *बैत-उल माल* (वित्त विभाग) ज़ैसी संस्था का निर्माण, *हिजरी* कैलेंडर की शुरुआत और सैन्य विभाग की स्थापना। उमर ने खिलाफत की अपनी पूरी अवधि में खालिद, अबू उबैदुल्ला और अमर इब्न अल आस सरीखे अपने अनुभवी सेनापतियों की अद्वितीय सैन्य शक्ति की सहायता से सीरिया तथा मिस्र की सीमाओं पर युद्ध लड़े और उन्होंने इराक, लेवांत, फिलिस्तीन और बाइज़ेंटाइनों तथा सासानिदों के साम्राज्य के सभी बड़े मोर्चों पर विजय प्राप्त की। इन प्रथम दो खलीफाओं, अबू बकर और उमर को आरंभिक दस्तावेजों में केंद्रीय किरदारों की तरह चित्रित किया गया है, क्योंकि इन दोनों ने पूरी इस्लामी बिरादारी (*उम्माओं*) को न सिर्फ राजनैतिक रूप से, बल्कि धार्मिक रूप से एकजुट बनाए रखा। यही कारण है कि उमर का नाम बाद में 'हर कल्पित आदर्श कार्य के लिए एक कसौटी बन गया'।

सन् 636 सी ई में उमर के शासन काल में ही यारमुक के युद्ध में बाइज़ेंटाइनी सेना को निर्णायक रूप से परास्त किया गया और उसी साल कदीसिया की एक घमासान लड़ाई में मुस्लिम अरबों ने ईरान की सासानी सेना को रौंद डाला और उनका भाग्य हमेशा के लिए अस्त हो गया। अगले साल अनातोलिया और येरुशलम मुसलमानों के हाथ आ गए और किसी राजनैतिक मुक्तिदाता की तरह उमर ने येरुशलम की चाबियां खुद ग्रहण कीं। इसके बावजूद यहूदियों समेत सभी मतावलंबियों की धार्मिक आजादी बहाल रखी गई। खलीफा

उमर ने कूफा, बसरा और फुस्तात ज़ैसी जगहों पर अनेक सैन्य शहर भी स्थापित किए। अपने नव विजित क्षेत्रों में उमर ने प्रादेशिक गवर्नरों की नियुक्ति की, जिनका काम अपने-अपने प्रदेशों का प्रशासन चलाना था। इन प्रादेशिक गवर्नरों को अमीर कहा जाता था। उदाहरण के लिए, याज़िद इब्न सूफयान को उमर ने सीरिया का गवर्नर नियुक्त किया था। जब याज़िद की मृत्यु हुई, तो उमर ने यह कार्यभार उसके भाई मुआविया प्रथम को सौंपा, जिसने बाद में उमय्यद खिलाफत की नींव रखी।

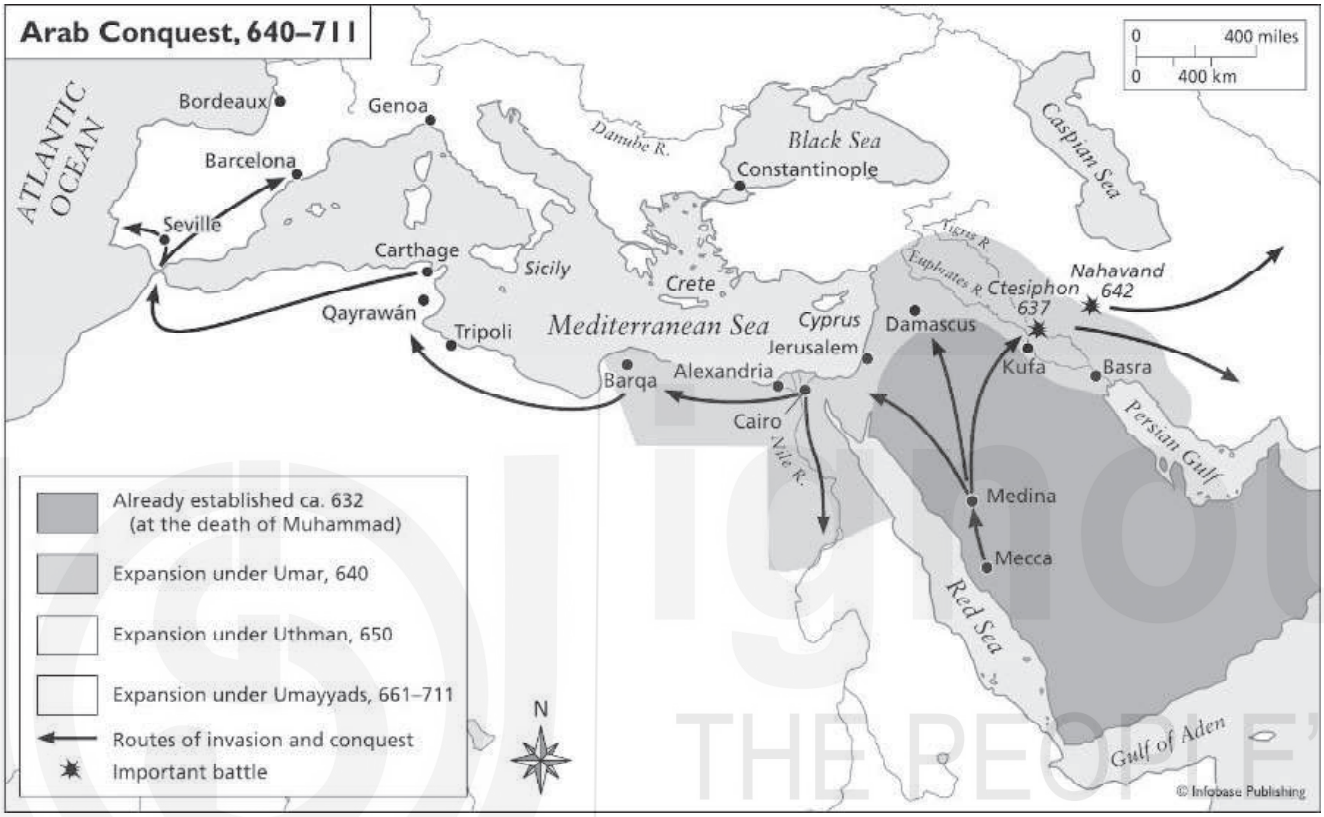

मानचित्र 15.2: 640-711 सी ई के मध्य अरब विजयें

साभारः www.WorldHistory.Biz

स्रोतः https://www.worldhistory.biz/sundries/49416-the-apostasy-wars-632-634.html

644 सी ई से, उमर के पश्चात् छह सदस्यीय परिषद *शूरा* द्वारा उस्मान (644-656 सी ई) के खलीफा (उत्तराधिकारी) चुने जाने के बाद से, इस्लामी सैन्य विजय का दायरा अपने उच्चतम मुकाम (मग़रिब से सिंध तक) पर जा पहुंचा। इसी के साथ व्यापार भी फलने-फूलने लगा, नए सिक्के चलाए गए और इस्लामी धर्मग्रंथों का संहिताकरण संपन्न हुआ। जहां उमर द्वारा अपने साम्राज्य का प्रशासन सख्ती से और अत्यंत केंद्रीकृत ढंग से चलाया गया था। इससे अलग, उस्मान के काल में इस्लामी खिलाफत के अधीन अनेक विशाल क्षेत्रों का विलय होने से, उसके लिए सभी प्रदेशों पर एकीकृत नियंत्रण रख पाना दूर का सपना बन गया। इसलिए प्रादेशिक गवर्नर अपनी-अपनी ताकत बढ़ाने लगे।

संपन्नता और सैन्य शक्ति की प्रगति के बावजूद उस्मान के शासन काल में मिस्र, कूफा और बसरा के सैन्य शहरों में बगावतें हुईं। उन्होंने उस्मान पर कुनबापरस्ती और गबन का आरोप लगाया और कहा कि वह उच्च पदों पर अपने रिश्तेदारों की नियुक्तियों का अनुमोदन कर रहे हैं, और उच्च पदों पर उनका एकाधिकार हो गया है। मिस्र के ये बागी मदीना तक आ पहुंचे, जो इस्लामी खलीफा की राजधानी थी। उनके साथ कूफा और बसरा के वे लोग भी शामिल हो गए, जो उस्मान की कार्य शैली के बारे में समान राय रखते थे। इन्होंने उस्मान का निवास घेर लिया और अंततः उनका कत्ल कर दिया।

खलीफा अली और प्रथम गृह युद्ध (*फितना*)

मिस्र, कूफा और बसरा के ये विद्रोही आगे खिलाफत के लिए क्रमशः अली, जुबैर और तलहा के इर्द-गिर्द एकत्र हुए। अली (656-661 सी ई) शुरू में खलीफा पद के इच्छुक नहीं थे, लेकिन बाद में उस्मान के उत्तराधिकारी के रूप में चौथे खलीफा बनने को तैयार हो गए। वे मदीना के मुसलमानों के बीच भारी बहुमत से चुने गए, बागी गुटों ने भी उन्हें पूरा समर्थन दिया, अनेक महत्वपूर्ण साथियों और गवर्नरों ने भी ना-नुकुर करने के बाद उनके नेतृत्व में अपनी निष्ठा व्यक्त की, सिवाय सीरिया के गवर्नर मुआविया प्रथम के, जो किसी भी तरह की भेंट देने में आना-कानी करता रहा। सातवीं सदी के उत्तरार्ध में जब अली ने बागडोर संभाली, मुस्लिम जगत आंतरिक राजनीतिक झगड़ों और मतभेदों के कारण टुकड़ों में बंटा हुआ था। कोई किसी की सुनने या मानने को तैयार नहीं था। मुसलमानों के बीच बढ़ रहे वैमनस्य पर सख्ती से रोक लगाने के लिए अली ने न केवल उस्मान द्वारा नियुक्त किए गए सभी गवर्नरों को बर्खास्त कर दिया, बल्कि जमाल की लड़ाई (656 सी ई) के बाद उन्होंने अपनी खिलाफत की राजधानी भी मदीना से कूफा स्थानांतरित कर दी, ताकि सैन्य छावनियों और सीमाओं पर प्रभावी ढंग से नियंत्रण रखा जा सके।

जमाल की लड़ाई का एक परिणाम यह हुआ कि तलहा, जुबैर, आयशा और मुआविया प्रथम के नेतृत्व में एक गुट उन लोगों को सजा और प्राणदंड देने की मांग करने लगा, जिन्होंने उस्मान की हत्या की थी। मुआविया प्रथम ने खलीफा के तौर पर अली की सत्ता के प्रति तब तक निष्ठा व्यक्त करने से इनकार कर दिया, जब तक उस्मान के खून का बदला नहीं लिया जाता। इसकी वजह से फिर एक युद्ध हुआ, जिसमें एक तरफ अली (*शिया अली*) के पक्षधर थे और दूसरी तरफ मुआविया प्रथम (*शिया मुआविया*) के समर्थक। इस राजनीतिक उथल-पुथल की परिणति सिफिन की लड़ाई (657 सी ई) में हुई, जिसे इस्लाम के इतिहास में विशेष रूप से प्रथम *फितना* के रूप में याद किया जाता है। जब झड़पें बढ़ती गईं और मुआविया की सेना पराजित होने ही वाली थी कि अचानक दोनों पक्ष मध्यस्थता द्वारा यह मुद्दा सुलझाने को सहमत हो गए कि अगला खलीफा किसे बनना चाहिए।

अली के मुआविया प्रथम के साथ समझौते के लिए राजी होते ही सिफिन की लड़ाई के बाद बद्दुओं का एक गुट बगावत कर बैठा। उन्हें खारिजी (अलग होने वाला) कहा गया, क्योंकि वे अली की सेना से टूट कर अलग हुए थे। उनका नारा था '*ला इमारा*' – कोई सरकार नहीं। अल-शहरेस्तानी (1086-1153 सी ई) के अनुसार अली ने इन अराजक समानतावादियों से कहा, 'सरकार तो होनी चाहिए, अच्छी हो या बुरी।' इस तरह मुसलमानों के बीच मतभेद बढ़ता गया। खारिजियों का उदय राज्य व्यवस्था को लेकर नगरवासियों और रेगिस्तानी अरब बद्दुओं (अराजक समानतावादी) के दृष्टिकोण के फर्क को स्पष्ट करता है। बाद में जनवरी 661 सी ई में अली जब कूफा की मस्जिद में नमाज पढ़ रहे थे, तब खारिजी खेमे के एक शख्स इब्न मुलजम ने उनकी हत्या कर दी। इसके बाद सीरिया के अरब गवर्नर मुआविया प्रथम (661-680 सी ई) ने सत्ता पर दावा किया, जिन्होंने अली के बड़े बेटे हसन से सुलह के बाद उस लंबे गृह युद्ध को समाप्त किया और उन्होंने अपनी राजधानी दमिश्क से बीस वर्षों तक इस्लामी खिलाफत पर शासन किया।

सुन्नी मुसलमान कौन हैं?

सुन्नी मुसलमान या *अहल अल-सुन्ना* इस्लाम का सबसे बड़ा संप्रदाय है। सुन्नी मुसलमान पहले चार खलीफाओं अबू बकर, उमर, उस्मान और अली की खिलाफत को स्वीकार करते हैं, और उन्हें *रशीदुन* (सही मार्ग दर्शन करने वाले कहते हैं। लेकिन शिया मुसलमान सिर्फ अली की खिलाफत को वैध मानते हैं। सुन्नी इस्लामी न्याय शास्त्र के चार स्कूल हैंः हनफी, मालिकी, शफी और हंबली।

सुन्नी इस्लाम में न्याय के लिए कानून का आधार इन चार को माना जाता हैः *कुरान, सुन्ना, इज्मा*

और *कियास*। *कुरान* का आशय इस्लाम के पवित्र धर्मग्रंथ से है। पैगंबर मुहम्मद के जीवन के आदर्श उदाहरणों को *सुन्ना* कहते हैं। *इज्मा* का अर्थ है कानूनी विद्वानों की सहमति। *कियास* का मतलब है सादृश्य के माध्यम से परिणाम निकालना। *कियास* एक तरीका है, जिसमें किसी 'नए मुद्दे पर किसी पुराने मुद्दे (यदि वह समान हो तो) की नजीर से नतीजा निकालते हैं।

बोध प्रश्न-3

1) 632 सी ई में मुहम्मद के निधन के बाद उत्तराधिकार को लेकर मतभेद क्यों शुरू हुए?

.....

.....

.....

.....

.....

2) अली ने अपने खिलाफत की राजधानी मदीना से कूफा क्यों स्थानांतरित की?

.....

.....

.....

.....

.....

15.5 उमय्यद : खारिजी और शिया

कुरैश कबीले के उमय्यद कुल के वंशज मुआविया प्रथम ने अपनी राजधानी दमिश्क (सीरिया) में उमय्यद वंश (661-750 सी ई) की नींव रखी। अपनी मृत्यु के पहले अतीत में उन्होंने उत्तराधिकार के लिए होने वाली लड़ाइयां देखी थीं, इसलिए उन्होंने पहले ही अपना उत्तराधिकारी अपने बेटे यजीद को घोषित कर दिया था। और इस तरह उन्होंने इस्लामिक राज्य को खिलाफत से वंशानुगत उत्तराधिकार वाला राज्य (*मुल्क*) बना दिया। यजीद के खिलाफ शियाओं और खारिजियों में कड़ी प्रतिक्रियायें हुईं। उमय्यद की सीमाओं के भीतर मेदिया, कूफा और उत्तरी अफ्रीका को जिन विद्रोहों ने ग्रस रखा था, उन्हें सातवीं सदी के आखिरी वर्षों में अब्द-अल मलिक (685-705 सी ई) ने दबाया। मलिक एक मशहूर उमय्यद खलीफा था, जिसने खिलाफत को एकीकृत करने वाले अनेक सुधार किए :

अ) उसने पुरानी मुद्रा व्यवस्था को खत्म कर सासानिदों और बाइज़ेंटाइनों के सोने के सिक्कों की जगह अपने मुस्लिम सिक्के चलाए। उमय्यदों ने अपनी टकसालों की स्थापना की। उन्होंने *दीनार, दिरहम* और *फिल्स* नामक नए सिक्के चलाए, जिन पर पुरालेख तो होते थे, लेकिन कोई चित्र नहीं होता था।

ब) उसने अपनी खिलाफत के अधीन सरकार और प्रशासन के लिए सिर्फ अरबी भाषा को मान्यता दी। अरबी भाषा सीमांत क्षेत्रों ज़ैसे खुरासान आदि में भी अभिजात्य लोगों की भाषा बन गई। इस प्रकार प्रशासन में नौकरी पाने के लिए अरबी का अच्छा ज्ञान एक अनिवार्य शर्त बन गई।

अनेक इतिहासकारों ने उमय्यद राजनीति की इन धर्मनिरपेक्ष नीतियों (अरबों को विशेषाधिकार देने की) को रेखांकित किया है, जो गैर-अरब नव दीक्षितों और *मावलियों* (ईरानी धर्मांतरित) के साथ सामाजिक भेदभाव को बढ़ाता था। हालांकि *मावलियों* ने काफी जल्दी उमय्यद

सरकार, सेना, राजस्व प्रशासन और धार्मिक कार्यों में अपनी निर्णायक जगह बना ली। शिया इस्लामिक परंपरा के अनुसार उमय्यदों ने पैगंबर मुहम्मद के धर्म और राजनीतिक तंत्र को त्याग दिया और उसे दूषित किया, क्योंकि मुआविया प्रथम ने इस्लामी खिलाफत को *मुल्क* – वंशवादी राजतंत्र – में तब्दील कर दिया।

ज़ैसा कि हम पहले पढ़ चुके हैं, खारिजियों ने अब्दुल्ला इब्न वहाब की अगुवाई में अली की खिलाफत के विरूद्ध बगावत शुरू की थी। अली ने उन पर भारी हमला किया और 659 सी ई में नहरवान के युद्ध में उन्हें बुरी तरह शिकस्त दी। उमय्यदों के समय खारिजियों का प्रतिरोध और विद्रोह चारों तरफ फैलने लगा। वास्तव में वे शियाओं से कहीं ज्यादा उग्र थे और उनकी तरफ दूसरे कई दूसरे वर्ग जैसे असंतुष्ट *मावली*, बद्दू, गरीब किसान, भूमिपति और व्यापारी आकर्षित होने लगे। कुछ इतिहासकारों का मत है कि खारिजियों के उदय का बड़ा कारण खलीफा उस्मान की अनुचित नीतियां थीं, जिस पर वे भाई-भतीजावाद करने, राजकीय कोष और पदों को अपने ही कुनबे में बांटने का आरोप लगाते हैं। इन समानतावादी क्रांतिकारी अरब कबीलों ने पैगंबर मुहम्मद के समर्थन में लड़ाइयां लड़ी थीं। और अब वे अपने आप को नई खिलाफत में उचित हिस्सेदारी से वंचित महसूस कर रहे थे। इसीलिए उन्होंने उस्मान की नीतियों को नापसंद किया और अली के भी खिलाफ एकजुट हो गए।

15.5.1 खारिजी कौन थे?

अरबी में *खवारज* का मतलब होता है 'अलग हो जाना' या 'बाहर निकल जाना'। खारिजी उस पहले ज्ञात संप्रदाय का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो मुस्लिम समुदाय में तीसरे खलीफा उस्मान के वर्चस्व से बाहर छिटक गए और जिन्होंने खलीफा अली के काल में सर्वप्रथम अपनी प्रत्यक्ष मौजूदगी का एहसास कराया। आधुनिक विद्वान इस बात पर एकमत हैं कि खारिजियों के उदय का तात्कालिक मुख्य कारण सिफिन (656-57 सी ई) के युद्ध में मुआविया प्रथम से झगड़े खत्म करने का राजनीतिक हित साधने के लिए किया गया अली का समझौता ही था। *मुहक्किम* खारिजी यह मानते थे कि अली *कुरान* के ईश्वरीय मार्ग से भटक गए हैं, इसलिए इस्लाम के नेता (*इमाम*) के रूप में उनकी सत्ता सवालों के घेरे में है। इसलिए उन्होंने नारा दिया, 'फैसला सिर्फ ईश्वर ही कर सकता है'। अरबों और गैर-अरबों के बीच समानता और नेता (*इमाम*) के प्रति निष्ठा के मुद्दे को लेकर वे बाकी मुसलमानों से अलग हो गए।

खारिजी उमय्यद खलीफाओं को अनधिकार ग्राही (usurpers) मानते थे, इसलिए उन्होंने 660 सी ई से उनके खिलाफ विद्रोह का बिगुल बजा दिया, खासकर इराक क्षेत्र में। खारिजियों को गैर-अरब मुसलमानों से ताकत मिल रही थी, खासकर ईरानी *मावलियों* से। मार्टिन हाइंड के अनुसार खारिजी कट्टरपंथी या धर्मांध नहीं थे, लेकिन वे समझ रहे थे कि उस्मान और अली उनके सामाजिक-आर्थिक हितों को नुकसान पहुंचा रहे हैं। उनका विचार था कि इस्लाम समाज में मौजूद असमानता को संतुलित करने और अंततः पूरी समानता स्थापित करने का माध्यम है। खारिजियों की कुछ कविताओं में ऐसे विचार मिलते हैं कि लोग रुतबे की वजह से नहीं, बल्कि अपनी निजी सोच के कारण भेदभाव करते हैं।

शिया मुसलमानों से बिल्कुल अलग खारिजी यह मानते थे कि सिर्फ कुरैश कबीले या अरब लोग ही नहीं, बल्कि कोई भी *इमाम* बन सकता है, बशर्ते वह न्यायोचित तरीके से शासन चलाए और ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में समाज को दमन से मुक्ति दिलाए। खारिजी यह विश्वास करते थे कि अबू बकर और उमर ने *कुरान* के निर्देशों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के अनुसार लोगों पर शासन कार्य किया। खारिजियों के अनुसार *इमामत* और *इमाम* तभी तक वैध हैं, जब तक उनका कार्य' 'ईश्वर की इच्छा' की अभिव्यक्ति को क्रियान्वित करता है; यदि *इमाम* अत्याचारी साबित होता है और इस्लाम के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है, तो उसे

हटा दिया जाएगा। उसकी जगह कोई नया हुक्मबरदार बंदा आएगा, जो सच्चा मुस्लिम समाज फिर से स्थापित करेगा। वेलहाउज़ेन टिप्पणी करते हैं कि खारिजियों के विश्वास का मूल सूत्र यह था कि 'सिर्फ सच्चा निष्ठावान मुसलमान ही इस सच्चे संप्रदाय का अंग हो सकता है'।

तबरी (839-923 सी ई) के अनुसार खारिजियों में उमय्यदों के आधिपत्य के दौरान कट्टर सत्ता विरोधी भावना पैदा हो गई थी। *अजराक़ी* खारिजी इराक के अतिवादी थे और नफी बिन अल-अज़राक़ युसुफ के अनुयायी थे। उन्होंने 699 सी ई में इराक में उमय्यदों के खिलाफ बगावत की थी। इराक के तत्कालीन गवर्नर अल-हज्जाज बिन युसुफ (695-714 सी ई) ने 699 सी ई में उन्हें परास्त कर दिया। *अज़राक़ियों* की पराजय के बाद अन्य नरमपंथी खारिजी गुट ज़ैसे *इबादी,* जो अब्द अल्लाह बिन इबाद के अनुयायी थे, एक संगठित समुदाय के रूप में अस्तित्व में बने रहे। *इबादी* परंपरा के मशहूर नेता जाबिर बिन ज़ायद बाद में *इबादी* खारिजियों को लेकर ओमान चले गए। उत्तरी अफ्रीका में खारिजियों ने अपना विरोध जारी रखा।

खारिजियों की शेष मुस्लिम संप्रदाय से तीन बुनियादी मुद्दों पर असहमति थीः

1. **भारी गुनाहः** क्या किसी गुनहगार मुसलमान को आस्थावान माना जा सकता है? खारिजी उमय्यदों की इस धारणा को खारिज करते थे कि गुनाह किसी मुसलमान के भीतर से उसकी आस्था नहीं खत्म करता। लेकिन खारिजी मानते थे कि कोई मुसलमान यदि कोई महापाप करता है, तो उसे धर्मच्युत (*मुर्तद*) समझा जाना चाहिए।
2. ***मुलूक* या वंशानुगत विरासत की अस्वीकृतीः** वे वंशगत आधार पर खिलाफत को नामंजूर करते थे और चुनाव के आधार पर *इमामत* को मान्यता देते थे।
3. **वैधानिकताः** किसकी सत्ता वैध है? खारिजियों ने उस राजनैतिक सत्ता को वैध माना, जो इस्लाम के धार्मिक उसूलों पर आधारित हो। इसके अलावा, उन्होंने मुसलमानों के इस अधिकार पर बल दिया कि वे धार्मिक सिद्धांतों का उल्लंघन करने वाले अपने नेता (*इमाम*) को *इमामत* से हटा सकते हैं।

नयीफ मारुफ ने *अल-ख्वारिज* में 97 खारिजी कवियों की रचनाएं संकलित कीं, जिनमें दस महिलाएं भी हैं। यह दो तथ्यों को रेखांकित करता हैः (अ) खारिजियों ने महिलाओं को उचित दर्जा दिया, (ब) आरंभिक इस्लाम के बौद्धिक तथा सांस्कृतिक इतिहास में खारिजी महिलाओं ने भी योगदान किया था।

15.5.2 शिया इस्लामी संप्रदायों का उदय

अरबी में *तायफा* या *फिरका* का मतलब होता है 'पंथ या संप्रदाय' जिसका आशय है 'मुख्य धारा के किसी बड़े समुदाय से निकला कोई छोटा समूह' या संक्षेप में 'संपूर्ण में से टूटकर निकला एक अंश'। फरहाद दफ्तरी कहते हैं कि 'सभी शिया मुसलमानों को शेष मुस्लिम समाज से अलग करने वाला मुख्य तत्व शियाओं का यह बुनियादी विश्वास है कि पैगंबर ने खुद अली को अपना वारिस मनोनीत किया था। यह मनोनयन (*नास*) ईश्वरीय निर्णय था, जो पैगंबर के माध्यम से अपनी मृत्यु के कुछ ही समय पहले ग़दीर खम्म में पैगंबर द्वारा प्रकट किया गया था'।

अरबी में शिया का अर्थ होता है 'पक्षधर' या 'समर्थक'। अपनी किताब *अल-मिलाल* में अल-शहरेस्तानी (1086-1153 सी ई) ने शिया संप्रदाय को इस तरह स्पष्ट किया है, 'शिया वे लोग हैं, जो विशेष रूप से अली के अनुयायी हैं और उनकी *इमामत* और खिलाफत को पूरी तरह से पैगंबर मुहम्मद की शिक्षाओं और विधान के अनुरूप मानते हैं'। इसलिए शिया और सुन्नी मुसलमानों को अलग करने वाला मुख्य मुद्दा मुहम्मद के उत्तराधिकार का है। शिया मानते

हैं कि अली, मुहम्मद के एकमात्र वैध वारिस थे। वे आरंभ के तीन खलीफाओं – अबू बकर, उमर और उस्मान – को अवैध उत्तराधिकारी समझते हैं। शिया और सुन्नियों के बीच दूसरे मतभेदों में प्रार्थना के तरीके, अस्थायी विवाह (*मुता*) और धार्मिक कर्मकांड (*तक़िया*) आदि शामिल हैं।

शिया इस्लाम की मुख्य रूप से तीन शाखाएं हैं: इस्माइली, *इमामी* ट्वेल्वर्स (Twelvers) और ज़ैदी।

इस्माइली या सेवनर्स (Seveners)

छठे शिया इमाम जाफर अल सादिक (700-765 सी ई) के दो बेटे थे – इस्माइल और मूसा। जिन शियाओं ने इमाम इस्माइल इब्न जाफर को अपना सातवां इमाम और इमाम जाफर अल-सादिक का सही आध्यात्मिक वारिस कबूल किया, वे इस्माइली शिया कहलाए। लेकिन *इसाना अशारा* शियाओं (ट्वेल्वर्स) ने इमाम मूसा अल-काज़िम (745-799 सी ई) को असली और न्यायोचित सातवां *इमाम* माना। क्रांतिकारी इस्माइली शिया, मुहम्मद इस्माइल इब्न की *मेहदी* के रूप में वापसी की उम्मीद करते थे। वे उन्हें फैसले की घड़ी के अग्रदूत के रूप में पेश करते थे। उनके उत्तराधिकारियों ने दसवीं शताब्दी में मिस्र में फातिमी साम्राज्य की स्थापना की जिसके साथ इस्माइली संप्रदाय का धार्मिक दर्शन पूरी तरह से विकसित हुआ। फातिमी काल की शुरुआत के पहले इस्माइलियों का उत्पीड़न होता था, इसलिए जब जान का खतरा होता था, तो वे *तक़ीया* (अपने धर्म और अपनी आस्था को छिपाकर रखना) का सहारा लेते थे। मुहम्मद अल-बाक़िर ने *तक़ीया* का एक पृष्ठांकित सुनियोजित प्रारूप जारी किया था।

इस्माइली शिया मानते हैं कि सिर्फ *इमाम* ही *कुरान* के गुह्य अर्थों के सही व्याख्याकार (*बातिन*) हो सकते हैं, क्योंकि उन्होंने अली से उसका ज्ञान (*इल्म*) उत्तराधिकार में पाया है। इस्माइलियों ने *जिहाद* और *इमामों* के मकबरों के दर्शन पर ज्यादा जोर दिया। इस्माइलियों में निजारी और करमातियान दो पंथ हैं।

1 **बाह्याचारियों (exoteric) और अंतरज्ञानवादियों (esoteric) के बीच फर्क:** इस्माइली शियाओं के लिए इस्लामी धर्मग्रंथों और पवित्र निर्देशों को समझने के दो बुनियादी पहलू थे – बाह्याचार (*जाहिरे*) और आंतरिक ज्ञान (*बातिन*)। उनका मानना था कि मुहम्मद द्वारा अभिव्यक्त धार्मिक कानूनों और क्रियाविधियों जैसे बाह्याचारों में समय के साथ बदलाव आए। लेकिन आंतरिक ज्ञान (*बातिन*), जो पवित्र सत्य है (*हक़ायक़*) वह आंतरिक है और सभी शामी (सेमिटिक) धर्मों में समान है।

2 **चक्रीय इस्माइली रहस्य ज्ञान (gnosis; *इरफान*):** इस्लाइली शियाओं की एक अलग विश्व दृष्टि थी। उनके अनुसार समय या काल, चक्रीय है। इस्माइली विश्वास प्रणाली का एक विशिष्ट अवयव यह था कि 'ईश्वरीय आकाशवाणी का चक्रीय इतिहास या पैगंबर का युग और ब्रह्मांडीय सिद्धांत, मिथकों की भाषा में व्यक्त होते हैं।' इस्माइलियों का विश्वास था कि मानव का धार्मिक इतिहास अलग-अलग अवधियों वाले सात पैगंबर कालों के माध्यम से विकसित हुआ है, जिन्हें *द्वार* कहा जाता है। प्रत्येक *द्वार* का उद्घाटन एक अलग वक्ता (*नातिक़*) द्वारा किया गया, जिसके पास ईश्वरीय आध्यात्मिक संदेश थे, जिसके बाहरी रूपों में धार्मिक आचार (***शरिया***) मौजूद थे। पूर्व के छह *द्वारों* (युगों) के *नातिक* आदम, नूह, अब्राहम, मोसेस, जीसस और मुहम्मद थे।

3 **दावा:** इस्माइलियों ने *दावा* पर जोर दिया और प्रमुख इस्माइली मिशनरियों (*दायों*) ने अनेक ईश्वरपरक और ब्रह्मज्ञान से संबंधित ग्रंथ प्रस्तुत किए। इनमें अल-सिजिस्तानी और इदरीस इमाद अल-दीन सबसे मशहूर ब्रह्मज्ञानी थे। इसके अलावा, इस्माइली मुसलमानों ने यूनानी दर्शन के आधार पर इस्लाम की व्याख्या का पहला व्यवस्थित प्रयास किया।

ट्वेलवर्स या *इथना अशारी*

ट्वेलवर्स शिया को जो बात दूसरे शियाओं से अलग करती है, वह है उनका यह विश्वास

कि बारह ईश्वरीय *इमाम* पूर्ण रूप से दोषरहित हैं। उनकी विचारधारा के अनुसार आखिरी *इमाम* मुहम्मद अल-महदी छुप गए हैं, क्योंकि उनके जीवन को खतरा है (विलोपन या *गायब*) और वे उम्मीद करते हैं कि *इमाम, महदी* के रूप में वापस आएंगे और मानव जाति को दज्जाल के शैतान (क्राइस्ट विरोधी) से मुक्ति दिलाएंगे। ट्वेलवर्स इमामी शियाओं के विचारों के केंद्र में उनका इमामत का सिद्धांत है। उनका मानना है कि पैगंबर मुहम्मद के बाद मुसलमानों को स्थायी रूप से *इमामों* (क्योंकि वे निष्कलंक और पूर्ण रूप से दोषरहित होते हैं) की जरूरत है। ये ईश्वर से निर्देश पाने वाले *इमाम* ही लोगों को उनके धार्मिक मामलों में सही दिशा दिखा सकते हैं और अधिकृत शिक्षक हो सकते हैं।

ईरान और ट्रांसऑक्सियाना के विभिन्न भागों में ट्वेलवर्स शियाओं के अनेक पंथ अस्तित्व में आए। दसवीं शताब्दी में बुयीद शासक (934-1062 सी ई) प्रभुत्वशाली हो गए और *इमामों* के उपदेश संग्रहित किए गए, *हदीस* का संकलन तैयार हुआ तथा इस्लामी न्यायशास्त्र के जाफरी स्कूल का निरूपण हुआ। बुयीद आरंभ में ज़ैदीवाद के समर्थक थे, लेकिन बाद में *इमामी* ट्वेलवर्स शिया मत तथा इस्लामी धर्मशास्त्र की *मुआतज़िला* शाखा की ओर झुक गए। ईरान में स्थित शहर क़ोम्म इमामी शिया शिक्षण के शुरुआती केंद्रों में से एक रहा है। क़ोम्म में शिया धर्मज्ञानी, *मुआतज़िला* इस्लामी धर्मज्ञान की जोरदार तरीके से भर्त्सना किया करते थे, जो 'स्वतंत्र विवेचन' के प्रयोग पर आधारित था। उन्हें *अखबारी* कहा जाता था। बल्कि उनके वरिष्ठ शिक्षक इब्न बाबावैह (923-991 सी ई) धर्मज्ञान और *फ़िक़्ह* (इस्लामी न्यायशास्त्र) में कम से कम तर्क (*अक्ल*) के साथ *हदीस* के प्रयोग की विशिष्ट वकालत करते थे। हालांकि जब बुयीदों के बाद सुन्नी सेलजुक तुर्क आए, तो *इमामी* शियावाद को काफी बड़ा धक्का लगा।

इमामी ट्वेलवर्स शिया न्यायशास्त्र में *हदीस* के चार प्रामाणिक ग्रंथ हैं। नीचे उन ग्रंथों और उनके संकलनकर्ताओं के नाम दिए गए हैं।

लेखक	*हदीस* की किताब
इब्न बाबावैह	*मन ला यहदुरुहू अल-फक़ीह*
इब्न याकूब अल कुलयनी	*किताब अल-काफी*
मुहम्मद तूसी	*तहज़ीब अल-अहकाम*
मुहम्मद तूसी	*अल-इस्तिबसार*

सफावी एक सूफी संप्रदाय था, जिसका उदय 15वीं शताब्दी में अरदबील (अज़रबैजान) में हुआ था। शाह इस्माइल के नेतृत्व में सफावियों ने 1501 सी ई में ईरान में अपना साम्राज्य कायम किया। इस संप्रदाय ने जब्ल आमिल और सीरिया से शिया धर्माचार्यों को आमंत्रित कर ईरान को इमामी शियावाद में धर्मांतरित करना शुरू किया। शाह अब्बास (1571-1629 सी ई) के समय इमामी शिया विचारधारा अपने उत्कर्ष पर जा पहुंची, जिसके शासन काल के दौरान ईरान में नुक्तवी और हुरुफी सूफी पंथों पर प्रतिबंध लगा दिया गया और किज़िलबाश *गुलुव्व* की कीमत पर इमामी शियावाद का प्रभुत्व देखने को मिला। अपने पिता से अलग शाह तहमस्प *मसीहा* या अवतार की पदवी ग्रहण करने से बचता रहा। असल में वह अपने आप को '*जिल* यानी 'ईश्वर की परछाईं' कहता था। तहमस्प के शासनकाल में शाह इस्माइल को मसीह के रूप में नहीं, बल्कि ''मसीहा के अग्रदूत के रूप में चित्रित किया जाता था, जिसने 'सही व्यवस्था', अर्थात शियावाद कायम कर, प्रच्छन्न *इमाम* के आगमन का मार्ग प्रशस्त किया''। अब्बास प्रथम ने सफावी साम्राज्य की राजधानी कज़वीन से स्थानांतरित कर इस्फहान में स्थापित की, जो इमामी शियावाद का गढ़ था।

इमामी शिया के विधि सिद्धांतों में इस्लामी *फ़िक़्ह* (न्याय शास्त्र) की दो शाखाएं हैं : *उसूली*

और *अखबारी*। *अखबारी फ़िक़्ह* शाखा के मुख्य सिद्धांतकार अमीन अल-अस्तराबादी थे। जबकि *उसूली* शाखा वाले इस्लामी कानून के चार आधार *कुरान, हदीस, इज्मा* (जनमत) और *अक्ल* (निगम्य तर्क) को ही विधिसम्मत मानते थे।

इमाम कौन हैं?

इमाम का अर्थ है नेता या वह जो प्रार्थना सभा का नेतृत्व करता है। इस्लामी साहित्य में अक्सर *इमामत* और *खिलाफत* को एक दूसरे की जगह इस्तेमाल किया जाता रहा है। शिया मानते हैं कि *इमाम* पैगंबर मुहम्मद के वास्तविक आध्यात्मिक उत्तराधिकारी होते हैं। वे यह भी मानते हैं कि पूर्व के बारहों *इमाम मासूम* (दोषरहित) हैं। *इमाम* के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं:

1. *कुरान* के गूढ़ रहस्यों तथा पवित्र कानूनों की व्याख्या करना, और जुम्मे की नमाज में जमात का नेतृत्व करना।
2. कानूनी दंड (*अहकाम*) द्वारा न्याय लागू करना, और
3. *ज़कात* और *खुम्स* वसूल करना, *जिहाद* का नेतृत्व करना और युद्ध में प्राप्त लूट (*किस्मत-ए फे*) का बंटवारा करना।

इमाम जाफर (699-765 सी ई) ने *इमामत* के दो बुनियादी सिद्धांतों की व्याख्या की है: *नास* और *इल्म*। *नास* (मनोनयन) का मतलब है पैगंबर के परिवार के उस व्यक्ति को ईश्वर द्वारा सौंपी गई *इमामत* (आध्यात्मिक नेतृत्व) का दायित्व। *इमामत* का चुनाव और दूसरे को उसका स्थानांतरण सीधे मनोनयन (*नास*) द्वारा होता है। *इमाम* जाफर के मुताबिक यह अली और फातिमा के वंशजों के लिए आरक्षित है। *इल्म* (ईश्वरीय ज्ञान) *इमामत* की दूसरी महत्वपूर्ण विशिष्टता है।

ज़ैदी

ज़ैद इब्न अली (उनके पांचवें इमाम) के नाम पर बने ज़ैद संप्रदाय के बारे में यह समझा जाता है कि उन्होंने *इमामत* की संस्था का विकास *इमामी* शाखा से अलग बिल्कुल स्वतंत्र रूप में की। उन्होंने पैगंबर के सिर्फ पांच उत्तराधिकारियों को वैध *इमाम* स्वीकार किया। वर्तमान में ज्यादातर *ज़ैदी* शिया यमन में रहते हैं। बुयीदों (934-1062 सी ई) ने काफी समय तक ज़ैदी शिया इस्लाम का ही अनुसरण किया और *मुताज़िला* मत को प्रोत्साहित किया। ज़ैदियों के अनुसार अहल अल-बैत का कोई भी सदस्य *इमाम* हो सकता है, क्योंकि *नास* अब प्रासंगिक नहीं है। यानी *इमामत* वंशगत नहीं है। *इथाना अशारियों* से असहमत, ज़ैदी शिया यह नहीं स्वीकार करते कि *इमाम* सदा दोषरहित रहेंगे।

आरंभिक शिया सांप्रदायिक कैसे हुए?

1. इस्लाम के शुरुआती दौर में अनेक परस्पर विरोधी धाराएं नजर आती हैं। उनमें से ज्यादातर सुन्नी समायोजन में समाहित हो गईं। शियावाद इस नियति से किस तरह बचा रहा और कैसे उनके और अपने बीच के फर्क को और गहरा बना सका? इस प्रक्रिया के विभिन्न तत्वों में दो प्रमुख तत्व हैं, *गुलत* की आध्यात्मिक स्वतंत्रता और जाफर अल-सादिक की *इमामत* के समय सांप्रदायिक (कट्टर) प्रवृत्तियों की सामरिक रूप से बेहतर स्थिति। पारंपरिक सुन्नी दृष्टिकोण यह है कि अली आरंभ के चार महान् खलीफाओं में से एक थे और सारा समुदाय उन्हें वैध स्वीकार करता है। और उनके प्रति जो निष्ठा पूरे समुदाय में रही, उस निष्ठा को शियाओं ने अतिरेकपूर्ण बना दिया। इस मान्यता के आधार पर शियाओं की शेष इस्लाम के प्रति नाराजगी या मतभेद को समझ पाना मुश्किल है।
2. जैसा कि 'रूढ़िवादी ट्वेलवर्स' और सुन्नी भी मानते हैं, शिया एक के बाद एक हुए बारह *इमामों* वाला कोई एक समान संप्रदाय नहीं था, जिसमें से विभिन्न शिया समूह किसी न किसी की *इमामत* या उसके वैकल्पिक दावेदार के पक्ष में अलग होते गए। शुरुआती शियावाद को बाद की *इमामत* के नजरिए से नहीं देखा जा सकता।

मार्शल हॉगसन, 1955, 'हाउ डिड द शिया बिकम सेक्टेरियन?' *जर्नल ऑफ अमेरिकन ओरियन्टल सोसाइटी*, पृ. 1-13.

बोध प्रश्न-4

1) खारिजी कौन थे? वे खलीफा की सेना से अलग क्यों हुए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) दूसरे मुसलमानों से खारिजियों के बड़े मतभेद किन मुद्दों को लेकर थे?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) 'शिया' शब्द का क्या अर्थ है? शिया इस्लाम की मुख्य शाखाएं कौन सी हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

15.6 अब्बासी खिलाफतः *मुआतज़िला* और *अशारी*

अब्बासी खिलाफत (750-1258 सी ई) की स्थापना अब्बास अस-सफ्फाह ने 750 सी ई में की थी। अब्बासियों ने अपनी राजनैतिक सत्ता उमय्यदों को पराजित कर हासिल की। इसे 'अब्बासिद क्रांति' भी कहा जाता है। अब्बासियों ने बड़े असंतुष्ट शिया समूहों और गैर-अरबी धर्मांतरितों से यह वादा किया था कि वे उमय्यदों के विपरीत एक न्यायपूर्ण वैश्विक मुस्लिम समाज की स्थापना करेंगे। अब्बासी राजनैतिक और सांस्कृतिक जीवन को दमिश्क से अपने खिलाफत की राजधानी बगदाद ले जाने में सफल रहे। बगदाद और सामरा में अब्बासिदों के दरबारों में अनुवादकों, नजूमियों, विद्वानों, उलेमाओं, वैज्ञानिकों, कलाकारों तथा कवियों को संरक्षण दिया जाता था। अल-मामून (813-833 सी ई) विज्ञान और दर्शन शास्त्र के एक बड़े संरक्षक थे। उन्होंने *बैत-उल हिकमा* (ज्ञान सदन) नामक एक राजकीय संस्था की स्थापना की थी। साद अल-अंदलूसी के मुताबिक खलीफा मामून ने बाइज़ेंटाइन सम्राट को अनुरोध किया था कि वे उसे 'प्लेटो, अरस्तू, हिप्पोक्रेटिस, गेलेन, यूक्लिड, टॉलमी और अन्य विद्वानों की कृतियां भेजें'। उनकी विज्ञान और दर्शन की पुस्तकें पहले सीरियाई और अंततः अरबी में अनूदित हुईं। लैटिन, संस्कृत और फारसी शोध ग्रंथों का भी अरबी में अनुवाद हुआ।

चित्र 15.1: अल-मामून का *बैत-उल हिकमा*
साभार: मुस्लिम हैरिटेज
स्रोत: https://muslimheritage.com/house-of-wisdom/

यूनान की दार्शनिक पुस्तकों के अनुवाद होने और *बैत-उल हिकमा* में सुकरात, अरस्तू तथा प्लेटो ज़ैसे चिंतकों के विचार उपलब्ध होने से इस्लाम में धर्म शास्त्र की एक ज्ञान संगत शाखा का विकास हुआ, जिसे *मुआतज़िला* के नाम से जाना जाता है। बगदाद और बसरा में *मुआतज़िला* शाखा के प्रणेता वासिल इब्न अता, अमर इब्न उबैद और इब्न अल-मुतामिर ज़ैसे विद्वानों ने *मुआतज़िला* धर्मदर्शन का प्रतिपादन किया। वे इस बात में विश्वास करते थे कि इस भौतिक संसार, ईश्वर की प्रकृति और उसकी इस रचना को सिर्फ तर्क (*कलम*) और विवेक के सहारे ही समझा जा सकता है। दूसरे शब्दों में, उन्होंने इस्लामी धर्मग्रंथ *कुरान* की विवेकसम्मत विवेचना की जोरदार वकालत की, जिसमें तर्क को प्राकट्य ज्ञान से श्रेष्ठ माना गया।

डैनियल ब्राउन के मुताबिक आठवीं-नौवीं शताब्दी की अब्बासी खिलाफत में इस्लामी धर्मशास्त्रियों के तीन समूह थे – *अहल अल-कलम, अहल अल-रे और अहल अल-हदीस*। पहले प्रसिद्ध समूह अहल *अल-कलम* या *मुआतज़िला* की शुरुआत वासिल बिन अता द्वारा की गई, जो हसन अल-बसरी के शिष्य थे। अब्बासी खिलाफत के समय इस्लामी धर्मज्ञान की दो शाखाएं अस्तित्व में आईं – *मुआतज़िला* और *अशारी*। इस्लाम की यह पहली सुव्यवस्थित धर्म ज्ञान शाखा (कलम) नौवीं शताब्दी में अपनी बुलंदियों पर तब पहुंची, जब अल-मामून (813-833 सी ई) ने अपने खिलाफत के राजकीय धर्म दर्शन के रूप में *मुआतज़िला* की व्याख्याओं को स्वीकृति दी।

खारिजियों पर चर्चा में हमने पढ़ा है कि 'गंभीर गुनाह' के मामले में कैसे उनका मत दूसरों से अलग था। खारिजियों ने स्पष्ट रूप से कहा कि 'गंभीर गुनाह' करने वाला इस्लाम में विश्वास ही नहीं करता। उनके कट्टर विरोधी ***मुरीजियों*** का मत था कि 'गंभीर पाप' करने वाला नास्तिक नहीं हो जाता। प्रचलित धारणा के मुताबिक *मुताज़िला* के संस्थापक वासिल इब्न अता (मृत्यु 748 सी ई) और अमर इब्न उबैद (मृत्यु 761 सी ई) थे। उन्हें *मुआतज़िला* इसलिए कहा गया क्योंकि उन्होंने गंभीर अपराध करने वाले की स्थिति के बारे में हसन अल-बसरी के विचार नामंजूर करने के बाद खुद को उनके अध्ययन केंद्र से अलग (*इताज़लू, itazalu*) कर लिया। हसन अल-बसरी का मत था कि गंभीर गुनाह करने वाला *मुनफिक़* (ढोंगी) होता है। लेकिन *मुआतज़िला* कहते थे कि ऐसा गुनाह करने वाला आस्तिक या नास्तिक कुछ भी नहीं होता।

मुआतज़िला धर्मदर्शन के पांच उसूल

अबू अल-हुदैल (752-841 सी ई) के मुताबिक *मुआतज़िला* धर्मदर्शन को संक्षेप में निम्न पांच सिद्धांतों के रूप में व्यक्त किया जा सकता है :

ईश्वर की एकता (*तौहीद*) और दृष्टिः *मुआतज़िला* यह विश्वास करते थे कि ईश्वर के प्रतीक को ईश्वर का तत्व नहीं समझा जाना चाहिए। वे मानते थे कि ईश्वर का साक्षात्कार संभव नहीं है, क्योंकि वह स्थान और दिशा से मुक्त है। उनके लिए *कुरान* अल्लाह (ईश्वर) का वचन है। वे संतों की *करामातों* (चमत्कारों) को अस्वीकार करते थे। वे मान्य ईश्वरीय लक्षणों या उनकी पूर्व नियतता पर संदेह करते थे। वे ईश्वर की संपूर्ण एकता में विश्वास करते थे। वे *कुरान* का पाठ अपनी पूर्व निर्धारित धारणाओं और अरस्तूवादी तर्कों के आधार पर करते थे। *मुताजलियों* की नजर में *फलसफी* (दार्शनिक) पैगंबरों से श्रेष्ठ होते हैं, क्योंकि वे सत्य को जानते हैं। उन्होंने अरस्तू के दर्शन और *कुरान* को आपस में मिलाने की कोशिश की।

न्याय और परम स्वतंत्र इच्छाः उनका तर्क था कि ईश्वर का सर्वशक्तिमान न्याय यह अनिवार्य बनाता है कि मनुष्य अपने कर्मों का जनक स्वयं बने। जब मनुष्य कुछ करते समय अपनी इस परम स्वतंत्र इच्छा का सुख पाता है, तभी उसे उसके उस कर्म के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। यदि मनुष्य अपने कर्मों का निर्धारण स्वयं नहीं करता और वह ईश्वर द्वारा पहले से तय होता है, तो उसे उस कर्म के लिए कैसे जिम्मेदार समझा जाएगा, जो उसने ईश्वर की इच्छा से स्वतंत्र होकर, अपनी परम इच्छा से नहीं किया। अल-शहरेस्तानी इसे इस प्रकार व्यक्त करता है, '*मुताज़िला* इस विचार पर एकमत रहते हैं कि मनुष्य स्वयं निर्णय करता है और अपने कर्म करता है, अच्छे और बुरे दोनों; और उसे अपने उन कर्मों का दंड या पुरस्कार अगली दुनिया में मिल जाता है'।

वादा (*अल-वा'द*) और धमकी (*अल-वा'इद*): *मुआतज़िला* पंथ का विश्वास था कि ईश्वर को अपना परम न्याय (*अद्ल*) लागू करना है। क्योंकि *कुरान* का कहना है, '*निश्चय ही ईश्वर अपना वादा नहीं तोड़ता*'। गुनाह करने वालों, दूसरों पर अत्याचार करने वालों और झूठ बोलने वालों को बिना देरी सजा जरूर मिलेगी। लेकिन यदि गुनहगार मृत्यु से पहले अपने किए पर पश्चाताप करता है, तो शायद उसे माफ कर दिया जाएगा। इस तरह अच्छे और बुरे कर्म, उनके परिणाम और क्षमाशीलता के बारे में *मुआतज़िलों* की आस्था, उनके तर्कों में निहित थी।

गंभीर गुनाह करने वाले की मध्य स्थितिः *मुआतज़िलों* का मानना था कि गंभीर अपराध करने वाले को न आस्था वाला कहा जा सकता है और न अनास्था वाला। वे कहते थे कि यदि कोई मुसलमान कोई गंभीर गुनाह करे और बिना उस पर पश्चाताप किए उसकी मृत्यु हो जाए, तो उसे न ईश्वर में विश्वास रखने वाला समझा जाएगा और न ही अविश्वास करने वाला। वह 'बीच स्थिति में' होगा और ईश्वर उसका अलग से न्याय करेगा।

नेकी की जीत और बदी की हारः पांचवें सूत्र की अपनी व्याख्या में *मुआतज़िलों* ने '*अल-अम्र वन-नही* (*al-amrwan-nahy*) की स्थिति को स्वीकारा। उन्होंने कहा कि यदि अनुचित व्यवहार आम लोगों तक फैल जाए या दूसरे शब्दों में बादशाह का राज्य अत्याचारी और अन्यायी हो जाए, तो मुसलमानों के लिए यह अनिवार्य है कि वह इस स्थिति, राज्य या बादशाह के खिलाफ विद्रोह में उठ खड़ा हो। इस तरह *मुताज़िलों* ने अच्छाई लाने और बुराई रोकने के लिए ताकत के इस्तेमाल को मंजूरी दी। ऐसी समझ उन्हें अल-मामून के समय में *मिन्हा* (धर्म न्यायाधिकरण) तक ले आई।

अशारिया

अब्बासी न्यायाधिकरण कठोर और अलोकप्रिय था, इसलिए अब्बासी शासन के खिलाफ बगदाद की गलियों में दंगे भड़क उठे। अंततः खलीफा अल-मुतवक्किल (847-861 सी ई) के काल में 848 सी ई में *मिहना* खत्म हुआ और धार्मिक विद्वानों (*उलेमाओं*) ने इस्लाम की व्याख्या का अधिकार उनसे छीन लिया। दसवीं शताब्दी तक आते-आते खलीफा इस्लामिक न्याय विधान और कानूनी मामलों में ना के बराबर दखल रखने लगे। अशारी धार्मिक मामलों में संतुलित रवैया रखते थे; वे न *मुआतज़िलों* की तरह बहुत ज्यादा तार्किक थे और न *ज़ाहिरियों* की तरह अत्यधिक रूढ़िवादी। अल-गजाली और फख्र अल-दीन अल-राज़ी प्रमुख अशारी चिंतक थे। सेलजुक सुल्तान अशारी विचारधारा का अनुसरण करते थे।

अल-अशारी (मृत्यु 935 सी ई) बसरा के रहने वाले थे। वे अबू अली अल-जुब्बाई (मृत्यु 915 सी ई) के शिष्य थे। अल-अशारी ने पूरे *मुआतज़िला* सिद्धांत को चुनौती दी, हालांकि व्यवहार में द्वंद्वात्मक पद्धति का इस्तेमाल किया। अल-अशारी ने कहा, 'ईश्वर में कुछ विशेष गुण हैं जो उनके भीतर अनन्त काल से मौजूद हैं और उनके अपने सार तत्व के अतिरिक्त हैं'।

1) ***मुखालफा* का सिद्धांतः** ईश्वर की प्रकृति और लक्षण अपने सृजन से भिन्न है, इसलिए मानवीय लक्षण उस पर लागू नहीं होते।

2) **स्वतंत्र इच्छाः** अशारियों का मत था कि मानवीय इच्छाएं और शक्तियां बाहर से प्राप्त गुण हैं। मानव की असली शक्ति वह है, जो ईश्वर उसे देता है और यह भी उस सृजनकर्ता से उसी तरह आती है, जैसे दूसरी अन्य चीजें आती हैं।

3) **प्राकट्य (*Revelation*) और तर्कः** तर्क और प्राकट्य के बीच विवाद की स्थिति में अशारियों ने प्राकट्य को तर्क से श्रेष्ठ और विश्वसनीय माना, क्योंकि प्राकट्य ही सत्य और यथार्थ का बुनियादी स्रोत है। उनके अनुसार अच्छे बुरे की पहचान का एकमात्र पैमाना प्राकट्य ही है। अशारी ऐसा विश्वास करते थे कि अच्छे कर्मों के बिना पर ईश्वरीय दृष्टि प्राप्त करना संभव है।

अशारी धर्मज्ञान का सार तत्व एक विद्वान ने इस तरह स्पष्ट किया है कि 'कर्म अपने आप में अच्छे या बुरे नहीं होते, ईश्वरीय विधान उन्हें अच्छा या बुरा बनाता है'।

बोध प्रश्न-5

1) *बैत-उल हिकमा* क्या था? इसने इस्लामी धर्मदर्शन को किस तरह प्रभावित किया?

.....

.....

.....

.....

.....

2) *मुआतज़िला* और *अशारियों* में तीन बुनियादी फर्क क्या थे?

.....

.....

.....

.....

.....

15.7 इस्लामी सूफी संप्रदाय

सूफी शब्द *सूफ* (ऊन) से निकला है। सूफी मुसलमानों के एक विशेष समूह को कहते थे, जो अपनी गहरी रहस्यवादी आस्थाओं के चलते या साधना के लिए ऊन के तकलीफदेह लबादे पहनते थे। सूफीवाद का केंद्रीय तत्व यह था कि इसमें सूफी साधक परम सत्य, जो ईश्वर है, उसके सीधे संपर्क में आने का प्रयास करते थे। इस्लाम में आरंभ से ही रहस्य का तत्व समाहित रहा है। इसने सातवीं और नौवीं शताब्दी के बीच आकार लेना शुरू किया, जब बसरा, बगदाद, सीरिया और ईरान के कुछ मुसलमान रहस्यवादी साधक उभरकर सामने

आए। बारहवीं शताब्दी तक आते-आते सूफीवाद के विकास का दूसरा चरण सामने आया, जब ऐसे साधक समूहों के *सिलसिले* अथवा *तरीका* अस्तित्व में आने लगे। प्रत्येक *सिलसिला* अपनी विशेष आचरण संहिता और नियमावली का पालन करता था और उनकी आध्यात्मिक जड़ें पैगंबर मुहम्मद, जीवन के प्रति उनके धर्म दर्शन और विशिष्ट धर्मनिष्ठा तथा आध्यात्मिक परम्पराओं से जुड़ती थीं। मंगोलों की विजय के समय, विशेष रूप से 1258 सी ई में बगदाद के पतन के बाद से सोलहवीं शताब्दी तक सूफी संत और उनके आध्यात्मिक *तरीकों* का अनौपचारिक संजाल 'अध्यात्म और ज्ञान का केंद्र बना रहा, जिसने इस्लाम के बहुरंगी सांस्कृतिक और जनजातीय समाज के ताने-बाने को एकजुट बनाए रखा'।

15.7.1 सूफी आंदोलन का उदय

सूफी आंदोलन के उदय के बारे में इतिहासकारों के अलग-अलग मत हैं। हालांकि 'प्रसरण-संन्यास सिद्धांत' (expansion-asceticism theory) इनमें से सबसे ज्यादा मान्य है। इस मान्यता के अनुसार ज़ैसे-ज़ैसे इस्लामी साम्राज्य का विस्तार हुआ, मुसलमानों का झुकाव दुनियावी चीजों में ज्यादा होने लगा और वे अधिक आत्मकेंद्रित होने लगे। आठवीं सदी के बाद से सूफी, इस्लाम की निर्मलता को वापस स्थापित करने के प्रयास में जुटने लगे। इस्लामी ऐतिहासिक स्रोतों के अनुसार जब तक पैगंबर मुहम्मद जीवित थे, तब तक इस्लाम के संदेश शुद्ध और मौलिक थे। लेकिन जब मदीना में इस्लामी राज्य की जड़ें जमने लगीं, इस्लाम भी निश्चित रूप से दूर-दूर तक फैलने लगा। कुछ समय बाद मुसलमान धीरे-धीरे राज्य और प्रशासन की सांसारिक गतिविधियों में उलझने लगे, जिसने इस्लाम की मौलिकता और पवित्रता को खत्म करना शुरू कर दिया, क्योंकि इस्लामी समाज शियाओं और सुन्नियों की सांप्रदायिक कलह में फंस गया था। इसलिए, ज़ैसा कि ह्यूस का विचार है, 'शुरुआती मुस्लिम सूफीवाद (asceticism) ने मुस्लिम समाज के तेज फैलाव को एक ''प्रामाणिक'' प्रति उत्तर पेश किया। सूफीवाद, नए साम्राज्य के भौतिकवाद के विपरीत एक अलग दुनिया के पारलौकिक जवाब की तरह विकसित हुआ और रूपायित होने लगा'।

हसन अल-बसरी (642-728 सी ई) आठवीं शताब्दी के एक क्रांतिकारी धर्म उपदेशक और विद्वान थे। वे लोगों को गुनाह से परहेज करने और पवित्र जीवन बिताने के लिए काफी उत्तेजक भाषण दिया करते थे। वे अपने शिष्यों से भौतिक वस्तुओं (*ज़ुहद*) के प्रति लगाव छोड़ने को कहते थे। हसन अल-बसरी के अनुयायियों की संख्या काफी थी, जिन्होंने उनके आध्यात्मिक विचारों को अपनाया और अपने आप को सांसारिक सुखों से दूर किया। 750 सी ई में उमय्यदों के पतन के बाद बगदाद में सूफी विद्वानों का एक गुट उभरा, जिसे अब बगदाद स्कूल कहते हैं। बशीर इब्न उल हरीथ, सरी सक़्ती और जुनैद, बगदाद के सूफी पंथ के तीन नगीने थे।

जुनैद को उसके चाचा सरी सक़्ती ने शिक्षा दी थी। बिस्तामी और अल-हल्लाज ('प्रमत्त' ('intoxicated') सूफी धारा के प्रतिनिधि) के उलट जुनैद ने बगदादी सूफीवाद की 'सौम्य' परंपरा का अनुसरण किया। जुनैद ने ईश्वर से मिलन का अनुभव प्राप्त करने के लिए अपने स्वार्थों और प्राकृतिक इच्छाओं को त्यागने तथा अपने अस्तित्व को मिटा (*फ़ना*) देने की वकालत की। उन्होंने पूरे समुदाय के प्रति क्षमाशील और उदार रहने तथा *शरिया* के मामलों में पैगंबर मुहम्मद का अनुकरण करने पर जोर दिया। अल-हल्लाज से अलग, जुनैद ने *शरिया* के निर्देशों की कभी अवहेलना नहीं की।

15.7.2 सूफी *तरीक़ा* का प्रसार

बारहवीं सदी से *तरीक़ा* कहे जाने वाले संगठित सूफी संप्रदायों में आध्यात्मिक जीवन का धीरे-धीरे परिष्करण होने लगा। रोजमर्रा के झंझटों से दूर अपेक्षाकृत छोटी जगहों पर स्थित

(*ज़ावया*) ये केंद्र बड़े भवनों वाले आराधना स्थलों में बदलने लगे। *तरीक़े* के भीतर सूफी समुदायों में जीवन व्यवस्थित था और वह एक वर्गीकृत/स्तरीकृत पदानुक्रमित सूफी नेतृत्व द्वारा निर्धारित नियमों से संचालित होता था।

कादरिया, सुहरावर्दिया, चिश्तिया, कुबराविया, नक्शबंदिया और सफाविया शुरुआती बड़े सूफी *सिलसिले* (*तरीक़े*) थे, जो तेरहवीं और पंद्रहवीं सदी के बीच अस्तित्व में आए। कादरिया *सिलसिला* बगदाद में, नक़्शबंदिया मध्य एशिया में, शाजिलिया उत्तरी अफ्रीका में और सफाविया अनातोलिया में वजूद में आए। वे बाद में बहुत बड़े भू-क्षेत्र में फैल गए और फलने-फूलने लगे। सोलहवीं सदी में ऑटोमन नक़्शबंदी *सिलसिले* के प्रबल समर्थक थे। और ईरान में सफाविद, सफावी सूफी *पीर* और बादशाह दोनों होते थे। मुगल हालांकि ज्यादातर तटस्थ ही रहे, लेकिन वे नक़्शबंदी *सिलसिले* के अनुयायी भी थे। सत्रहवीं शताब्दी में मुगलों और ऑटोमनों के राजनैतिक आभिजात्य वर्ग में नक़्शबंदी *तरीक़ा* का काफी प्रभाव था। इसलिए चिश्तिया और कादरिया *सिलसिलों* से उनकी झड़पें हुईं। इसे 'नक्शबंदी प्रतिक्रिया' कहा जाता है। अंत में सफाविदों को राजनैतिक शक्ति हासिल हो गई, जिन्होंने हुरुफी तथा नुक्तवी *सिलसिलों* को प्रतिबंधित कर इसे निष्प्रभावी बना दिया।

बोध प्रश्न 6

1) सूफी और सूफीवाद का अर्थ बताइये। सूफी आंदोलन के विकास में प्रसरण-सूफीवाद (expansion-asceticism) का सिद्धांत क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) सूफी आंदोलन के उदय और सूफी *तरीक़ा* (सिलसिले) पर टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

15.8 सारांश

इस्लाम का उदय मक्का में सातवीं शताब्दी के अरबिया में हुआ। उसने एक नई सामाजिक व्यवस्था पैदा की, जो कबीलाई संबंधों की जगह समान धार्मिक विश्वास से एकजुट हुआ था। अरबों ने अपनी सत्ता और धर्म का प्रसार बहुत तेजी से तीन महाद्वीपों में कर लिया। हालांकि उम्मा (मुस्लिम समुदाय) के बीच मतभेद पैदा हुए और फूट पड़ गई और समय के साथ उनके खारिजी, शिया, सुन्नी, रहस्यवादी पंथ ज़ैसे कई संप्रदाय और शाखाएं पैदा हो गईं। इस तरह इस्लाम अनेक संप्रदायों, धर्मशास्त्र की शाखाओं, न्यायशास्त्रों (*फ़िक़्ह*) और दर्शन का एक जटिल सम्मिश्रण बन गया। अरबों के बीच पहला मतभेद मुहम्मद के निधन के बाद उत्तराधिकार को लेकर पैदा हुआ। खारिजियों ने एक क्रांतिकारी आंदोलन की तरह उमय्यदों

का प्रतिरोध किया, नव दीक्षित मुसलमानों ज़ैसे *मावलियों* (मुख्य रूप से ईरानी) ने उमय्यदों द्वारा किए जाने वाले भेदभाव के कारण शियाओं का समर्थन किया। इसके बाद शियाओं की भी अनेक उप-शाखाएं फूट पड़ीं। जहां तक इस्लाम के रहस्यवादी पहलू का सवाल है, सूफीवाद एक आंदोलन की तरह आठवीं शताब्दी में सामने आया, तेरहवीं शताब्दी तक परिपक्व हो गया और सोलहवीं शताब्दी तक पूरे इस्लामी जगत में फैल गया। सूफी अपने सूफी भाईचारे या *सिलसिले* (*तरीका*) के रूप में अलग-अलग संप्रदायों में संगठित हुए, ज़ैसे कादरिया, नक्शबंदिया, चिश्तिया और सफाविया।

15.9 शब्दावली

मुरीजी : एक इस्लामी पंथ, जो न्याय के स्थगन (*इजरा*) में विश्वास करता है। वे यह मानते हैं कि सिर्फ ईश्वर ही यह फैसला कर सकता है कि किसी मुसलमान की आस्था नष्ट हुई है या नहीं। और किसी मुसलमान ने गुनाह किया है या नहीं।

नखलिस्तान : विशाल रेगिस्तान के बीच स्थित उपजाऊ क्षेत्र, जहां पानी उपलब्ध रहता है।

कसीदा : अरबी और ईरानी काव्य की एक विधा जो राजा, कुलीन अथवा किसी व्यक्ति विशेष की प्रशंसा में रची जाती थी।

तरीका : इसका आशय रहस्यवादी सूफी सिलसिले से है। *तरीकत* का अर्थ है रहस्यवादी मार्ग।

कबीला : जनजाति के लिए प्रयुक्त अरबी और ईरानी शब्द। कबीले कुलगोत्र से बनते हैं। कबीलाई एकता रक्त संबंधों के आधार पर पैदा होती है।

सम्प्रदाय : मेक्स वेबर के अनुसार, 'सम्प्रदाय, समान धार्मिक विचार रखने वाले व्यक्तियों का एक स्वैच्छिक संघ है'।

शरिया : *कुरान* पर आधारित इस्लामी कानून

15.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) उप-भाग 15.2.1 देखें

2) भाग 15.2 देखें

बोध प्रश्न-2

1) उप-भाग 15.3.1 देखें। बॉक्स में दी गई सामग्री भी देखें

2) उप-भाग 15.3.2 देखें। इसने मदीना के इस्लामिक राज्य को शांति तथा वैधता प्रदान की। अरेबिया में मदीना मुसलमानों के अधीन राजनीति का केन्द्र बिन्दु बन गया।

बोध प्रश्न-3

1) भाग 15.4 देखें। पैगम्बर मुहम्मद किसी को भी अपना उत्तराधिकारी चुने बिना सद्गति को प्राप्त हुए।

2) भाग 15.4 देखें

बोध प्रश्न-4

1) उप-भाग 15.5.1 देखें

2) भाग 15.5 और उप-भाग 15.5.1 देखें

3) उप-भाग 15.5.2 देखें

बोध प्रश्न-5

1) भाग 15.6 देखें

2) भाग 15.6 देखें

बोध प्रश्न 6

1 उप-भाग 15.7.1 देखें

2 उप-भाग 15.7.2 देखें

15.11 संदर्भ ग्रंथ

अहमद, लैला, (1992) *वीमेन एंड जेंडर इन इस्लामः हिस्टॉरिकल रूट्स ऑफ ए मॉडर्न डिबेट* (येलः येल यूनिवर्सिटी प्रेस).

बॉवरिंग एवं क्रोन, पैट्रीशिया, (संपा) (2012) *द प्रिंस्टन एन्साइक्लोपीडिया ऑफ इस्लामिक पॉलिटिकल थॉट* (प्रिंस्टनः प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस).

क्रोन, पैट्रिशिया, (2014) *मक्कन ट्रेड एंड द राइज़ ऑफ इस्लाम* (एडीनबर्गः जॉजियास प्रेस).

दफ्तरी, फरहाद, (2011) *'द वेराइटीज़ ऑफ इस्लाम', द निव केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इस्लाम, राबर्ट* इरविन (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस), भाग IV, पृ. 105-141.

दफ्तरी, फरहाद, (2007) *द इस्माइलीज़* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

डोनर, फ्रेड एम., (2010) *मुहमद एंड द बिलीवर्सः एट द ओरीजिन्स ऑफ इस्लाम* (हार्वडः हार्वड यूनिवर्सिटी प्रेस).

इस्पोसिटो, जान एल. (1999) *द आक्सफोर्ड हिस्ट्र ऑफ इस्लाम.* (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

ह्यूज, आरोन डब्ल्यू. (2013) *मुस्लिम आइडेन्टटीज़ः एन इन्ट्रोडक्शन टू इस्लाम* (न्यूयार्क एवं चिचोन्टरः कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस).

रॉबिन्सन, फ्रांसिस, (संपा.) (1996) *कैम्ब्रिज इलस्ट्रेटेड हिस्ट्री-ऑफ इस्लामिक वर्ल्ड* (कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

स्लगेट, एवं क्यूरी, एन्ड्रयू, (2014) एटलस ऑफ इस्लामिक हिस्ट्री (लंदन एवं न्यूयार्कः रूटलेज).

टकर, ज्यूडिथ, (1993) *ज़ैंडर एंड इस्लामिक हिस्ट्री* (इंडियाना यूनिवर्सिटीः अमेरकिन हिस्टॉरिकल एसोसिएशन).

वाट, मॉन्टगोमरी, (1953) *मुहम्मद एट मक्का* (ऑक्सफोर्डः क्लेरेन्डन प्रेस).

ज़ाइटलिन, इरविंग, (2007) *द हिस्टॉरिकल मुहम्मद* (जॉन-विली).

अन्य संदर्भ

https://www.scribd.com/document/134329976/How-Did-Th4-Early-Shia-Become-Sectarian

http://libgen.io/search.php?req=Atlas+of+Islamic+History&lg_topic=libgen&open=0&view=simple&res=25&phrase=1&column=def

15.12 शैक्षणिक वीडियो

व्हाट इज़ सूफीइज़्म?
https://www.youtube.com/watch?v=u0WcsqSDU7U

इस्लामः फैक्ट्स एंड फिक्शन
https://www.youtube.com/watch?v=_LIlH4jBKyQ

अरब वर्ल्डः हैरीटेज एंड सिविलाइजेशन
https://www.youtube.com/watch?v=gg-oyrOFosY

इकाई 16 एशिया का व्यापारिक संसार और अरब*

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 इस्लाम के उदय के बाद अरब व्यापार और वाणिज्यिक विस्तार

16.3 आंतरिक व्यापार और शहरी केंद्रों का उदय
- 16.3.1 व्यापार, धर्म और शहरी विकास के मध्य संबंध
- 16.3.2 उत्पादन केंद्रों के रूप में शहरों का विकास

16.4 भारत के साथ अरब व्यापार

16.5 चीन और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरब व्यापार
- 16.5.1 चीन के साथ अरब व्यापार
- 16.5.2 दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरब व्यापार

16.6 सारांश

16.7 शब्दावली

16.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

16.9 संदर्भ ग्रंथ

16.10 शैक्षणिक वीडियो

16.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- अरब व्यापार के विकास और शहरी केंद्रों के उदय में इस्लाम की भूमिका को समझ सकेंगे,
- अरबों की शहरी अर्थव्यवस्था में खानाबदोशों के योगदान की सराहना कर सकेंगे,
- अध्ययन अवधि के दौरान विश्व व्यापार में परिवर्तन का विश्लेषण कर पायेंगे,
- दुनिया के अन्य क्षेत्रों जैसे चीन, भारत और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरबों के व्यापारिक संबंधों की जांच कर सकेंगे,
- इन व्यापारिक संबंधों की प्रकृति और उनसे संबंधित अन्य कारकों पर चर्चा कर पायेंगे, और
- इस तथ्य को समझ सकेंगे कि अरब दुनिया में पूर्व और पश्चिम दोनों के तत्व शामिल थे।

16.1 प्रस्तावना

हर सभ्यता में शहर व्यापारिक गतिविधियों का केन्द्र होते हैं। अधिकांश सभ्यताएं शहरी

* डॉ. समर मोइज़ रिज़वी, डिपार्टमेंट ऑफ हिस्ट्री एंड कल्चर, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

केन्द्रों के विकास से गहराई से जुडी हुई हैं; और व्यापार शहरों के विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारकों में से एक है। शायद, यही कारण है कि शहर आमतौर पर मुख्य व्यापार मार्गों पर स्थित होते हैं। हम कह सकते हैं कि व्यापार, शहरी केंद्रों के विकास में एक प्रमुख प्रेरक शक्ति है। जब यूरोपीय देशों में सामंती अर्थव्यवस्था प्रबल हुई, विशेष रूप से रोमन साम्राज्य के पतन के बाद, उस युग ने एशियाई दुनिया में व्यापारिक गतिविधियों के विकास को चिन्हित किया। इस्लाम के उदय से समुद्री व्यापार में बड़े पैमाने पर वृद्वि हुई, और अरब[1] व्यापारियों ने एशियाई और यूरोपीय बाजारों के बीच खुद को बिचौलियों के रूप में स्थापित किया। अरब दुनिया की आर्थिक नींव कृषि, शहरीकरण और लंबी दूरी के व्यापार पर टिकी हुई थी (चौधरी, 1996: 124)। इस्लाम के उदय और इस्लामिक साम्राज्य के विस्तार के बाद, अरब व्यापार को पूरे साम्राज्य में एकीकृत और विनियमित किया गया। यूरोपीय समुद्री यात्राओं के प्रारंभ या ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की नींव और पुर्तगाली, फ्रांसीसी और डच व्यापारिक मिशनों के पहले से ही एशियाई व्यापार पर अरब व्यापारियों का एकाधिकार था। यहां हम अरबों की व्यापारिक गतिविधियों के बारे में विस्तार से चर्चा करेंगे।

16.2 इस्लाम के उदय के बाद अरब व्यापार और वाणिज्यिक विस्तार

अरब दुनिया की भौगोलिक स्थिति ने अरब व्यापारियों को एशिया के स्थल व्यापार के साथ-साथ समुद्री व्यापार पर हावी होने में मदद की। हिजाज़ जैसे प्रधान बंदरगाह वाले शहर (**मानचित्र 16.1** देखें), एक बंजर भूमि, जो लाल सागर में अरब प्रायद्वीप के मध्य तट पर स्थित थी, ने शायद ही कभी दक्षिण-पश्चिमी मानसूनी हवाएं प्राप्त कीं। इससे व्यापार का मार्ग प्रशस्त हुआ जो इस क्षेत्र की एक सामाजिक और आर्थिक आवश्यकता बन गया। अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया की खोज से पहले, एशियाई व्यापार अन्य दो महाद्वीपों अर्थात अफ्रीका और यूरोप तक ही सीमित था। अरब प्रायद्वीप तीनों महाद्वीपों एशिया, अफ्रीका और यूरोप का मिलन बिन्दु था। यह यूरोप और अफ्रीका दोनों की सीमा को छूता है। ईरान का क्षेत्र भारतीय और चीनी व्यापारियों के लिए अन्य महाद्वीपों के साथ संपर्क का मुख्य स्थल मार्ग माना जाता था। अरब देशों का तटीय क्षेत्र लगभग सभी मुख्य समुद्री व्यापार मार्गों के तटों को छूता है, चाहे वह भूमध्यसागर, हिंद महासागर, लाल सागर हों या उस संदर्भ में फ़ारस की खाड़ी। ***जज़ीरत-उल अरब*** की भौगोलिक श्रेष्ठता ने विश्व व्यापार में अरब व्यापारियों के वर्चस्व कों स्थापित करने में मदद की।

सातवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इस्लाम के जन्म से पहले, मध्य पूर्व, जिसमें पश्चिम एशिया और उत्तर पूर्वी अफ़्रीका के कुछ हिस्से शामिल थे, दो शक्ति केंद्रों में विभाजित था – बाइज़ेन्टाइन और सासानियन। हालांकि, वर्ष 629 सी ई ने इस क्षेत्र में एक अन्य शक्ति की उपस्थिति को चिह्नित किया, और वह थे मुहम्मद के नेतृत्व में अरब मुस्लिम। मुहम्मद ने अपना पहला अभियान 629 सी ई में बाइज़ेन्टाइन सीरिया में भेजा था। उनके अभियान ने सासानियन और बाइज़ेन्टाइन दोनों शक्तियों को सचेत किया। 642 सी ई तक मुहम्मद की मृत्यु के दस वर्षों के भीतर, मुस्लिम अरबों ने ईराक सहित ईरान क्षेत्र के एक बड़े हिस्से पर नियंत्रण प्राप्त कर लिया, साथ ही साथ बाइज़ेन्टाइन सीरिया पर भी। सातवीं शताब्दी के छठे दशक के अंत तक आते-आते ईरानी और बाइज़ेन्टाइन साम्राज्य दोनों मुस्लिम अरबों द्वारा धाराशाही कर दिये गए। व्यापार शायद इस्लामी सभ्यता के आर्थिक जीवन का सबसे महत्वपूर्ण पहलू था। बाइज़ेन्टाइन मिस्र, सीरिया, ईरानी इराक और ईरान पर अरब मुस्लिमों के नियंत्रण ने अरब

1 प्रारंभ में, अरब शब्द, अरब प्रायद्वीप में रहने वाले लोगों का द्योतक था। इसमें खानाबदोश बद्दू (Bedouins; जिनके बारे में आपने **इकाई 11, बीएचआईसी-102** में पढ़ा है) और शहर-निवासी, जो पूरे प्रायद्वीप में व्यापार में संलग्न थे, शामिल थे। इसलिए इतिहास में हाल के दिनों तक किसी को अरब के रूप में संबोधित करना साधारण खानाबदोश लोगों का द्योतक था।

व्यापारियों को अपनी व्यापारिक गतिविधियों का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया क्योंकि लगभग सभी महत्वपूर्ण तटीय क्षेत्र या समुद्री मार्ग इस्लामी साम्राज्य के प्रत्यक्ष नियंत्रण में आ गए थे। अब, यह देखते हुए कि सीरिया और मिस्र के अरब तटीय क्षेत्रों ने भूमध्यसागर की सीमाओं को छू लिया, ईडन की खाड़ी ने यमन से पूर्वी अफ़्रीकी सोमालिया तक का रास्ता खोल दिया; और अरब सागर पर नियंत्रण ने अरब व्यापारियों के लिए हिंद महासागर व्यापार पर अपना एकाधिकार स्थापित करना संभव बना दिया। फ़ारस की खाड़ी ने अरब व्यापारियों को इराकी और ईरानी विलासिता की वस्तुओं की बौछार चीनी और भारतीय बाजारों में करने में मदद की। अब सभी समुद्री मार्गों के साथ-साथ एशिया से यूरोप तक के स्थल मार्ग सीधे इस्लामिक साम्राज्य द्वारा नियंत्रित थे जिसने अरब व्यापारियों को अपनी व्यापारिक गतिविधियों का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया।

मानचित्र 16.1: 600 सी ई में अरब तथा ईरानी सासानिद साम्राज्य

साभार: थॉमस लेसमैन

स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Persia_600ad.jpg

इस्लामी सभ्यता की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक शहरी केंद्रों का उद्भव और विकास है। शानदार वस्तुओं, मसालों के साथ-साथ शहरी निवासियों द्वारा कपड़े की मांग ने लंबी दूरी या समुद्र पार के व्यापार को प्रोत्साहित किया। इस्लामी राजधानी शहरों के शहरी निवासियों द्वारा विलासिता की वस्तुओं की खपत ने अरब व्यापारियों को अपनी व्यापारिक गतिविधियों का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया। अब अरब व्यापार केवल मध्य पूर्व देशों तक ही सीमित नही था, बल्कि मसालों के स्वर्ग – इंडोनेशिया और मलेशिया – तक पहुंच गया। इस्लामी शासक इस्लामी-शहरी सभ्यता के आर्थिक जीवन में व्यापार के महत्व को जानते थे। शक्तिशाली इस्लामी शासकों ने अपने व्यापारियों को लुटेरों से सुरक्षा देने में सफलता प्राप्त की। इस्लामी शासकों के तहत समुद्री मार्गों के साथ-साथ स्थल मार्गों को भी अच्छी तरह से संरक्षित किया गया था। इस्लामी शासकों को इन मार्गों को किसी भी तरह की हिंसा और समुद्री डाकू और लूटेरों के हमलों से बचाने के लिए पुराने समुद्री और स्थल मार्गों को अधिक क्षमता के साथ पुनर्जीवित करने का श्रेय दिया जाना चाहिए। इस्लामी क्षेत्र में सौदागरों और व्यापारियों को पूर्व-इस्लामी युग की तुलना में कहीं अधिक स्वतंत्रता और स्वायत्तता दी गई थी। इस्लामिक धर्मशास्त्र (theology) भी व्यापारियों पर 'नैतिकता' और

'ईमानदारी' की एक निश्चित भावना थोपती थी, जिसके बारे में इस्लाम से पहले के व्यापारी अधिक गंभीर नहीं थे। इस्लाम के आगमन ने व्यापार में बेईमानी को एक गैर-इस्लामिक दस्तूर बना दिया। *कुरान* और *हदीस* की कई आयतों में व्यापारियों को ईमानदारी के साथ अपना व्यवसाय करने का निर्देश दिया गया। मुहम्मद ने ऐसे व्यापारियों पर नज़र रखने के लिए अधिकारियों को भी नियुक्त किया जो अपने व्यवसाय में शातिर तरीकों का इस्तेमाल करते थे। एक अवसर पर उन्होंने व्यापारियों को चेतावनी दी, 'हे व्यापारियों, आप अपने व्यापार के लेन-देन में झूठ बोलने से सावधान रहें'। पिछले समय की तुलना में कानून को अच्छी तरह से संहिताबद्ध किया गया था, जिसने अंततः अरबों को न केवल इस्लामी दुनिया की राजनीतिक सीमाओं के भीतर, बल्कि सुदूर पूर्व देशों और भारत जैसे अन्य क्षेत्रों में भी अपने व्यापार का विस्तार करने में मदद की। उमय्यद और अब्बासिद खलीफ़ाओं द्वारा प्रदान की गई सांस्कृतिक समरूपता, जो धार्मिक और साथ ही भाषाई दोनों थी, ने इस्लामिक क्षेत्र के आंतरिक व्यापार के लिए विभिन्न प्रतिबंधों और बाधाओं को तोड़ने में मदद की।

> मुस्लिम दुनिया के विस्तृत बाजार में आर्थिक उत्पादन और खपत का विकास तीन समानांतर विकासों द्वारा संभव हुआ। सबसे पहले, विजित लोगों के इस्लामीकरण ने आंशिक रूप से समरूप धर्म, नैतिक और न्यायिक प्रणाली का निर्माण किया। दूसरे, सेना और प्रशासन के अरबीकरण ने स्थानीय प्रवेशकों की भर्ती करके या स्टैप्स के लड़ाके लोगों को शामिल कर जातीय और राष्ट्रीय बाधाओं को तोड़ने में मदद की। अंत में, अरबी भाषा को संचार, शिक्षा, साहित्यिक अभिव्यक्ति और सरकार की सार्वभौमिक भाषा के रूप में अपनाने के माध्यम से सेमिटाइजेशन की प्रक्रिया पूरी की गई।
>
> **(चौधरी, 1996:127)**

इस्लामी शासकों द्वारा प्रदान की जाने वाली राजनीतिक स्थिरता ने राजधानी शहरों के निवासियों के आर्थिक जीवन को स्थिरता प्रदान की और उनकी क्रय शक्ति में वृद्धि की, और इस प्रकार विशेष रूप से भारत और सुदूर पूर्व में इंडोनेशिया, मलेशिया और चीन के बाजारों से गैर-अरबी महत्वपूर्ण सामग्रियों या वस्तुओं की मांग को प्रोत्साहित किया।

इस्लामी दुनिया के व्यापारिक नेटवर्क ने भौगोलिक अध्ययन के उद्भव को प्रोत्साहित किया, उदाहरण के लिए ऐसा प्रमुख अध्ययन, अरब अल-इदरीसी (1100-66) द्वारा किया गया। अरब दुनिया के फलते-फूलते व्यापार ने अरबो के गैर-अरबी देशों में प्रवास को प्रोत्साहित किया। इसलिए, यह युग सांस्कृतिक प्रसार द्वारा चिह्नित है। अन्य स्थानों पर पलायन करने वाले अरबों ने नई भाषाएं सीखीं; विभिन्न संस्कृतियों के साथ सामना हुआ; विभिन्न स्थानों का ज्ञान प्राप्त किया – उनकी प्रौद्योगिकियों, साहित्य और विज्ञान का। उन्होंने खुद को नए विचारों से सुसज्जित किया, जिसके परिणामस्वरूप अंततः जहाजों और परिवहन के अन्य संसाधनों की तकनीकी प्रगति हुई। अरब व्यापारी जो अपनी राजनीतिक या सांस्कृतिक सीमाओं से परे विभिन्न स्थानों की यात्रा करते थे, नए विचारों और ज्ञान के साथ घर वापस आए। अरब शहर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का केन्द्र बन गए। विभिन्न स्थानों से व्यापारी इन शहरों में इकट्ठा होने लगे और अंततः इन शहरों की प्रतिष्ठा एक वाणिज्यिक केन्द्र से विश्व ज्ञान के केन्द्र में बदल गई। इन शहरों की यात्रा करने वाला हर व्यापारी सिर्फ अपनी वाणिज्यिक वस्तुओं के साथ ही नहीं बल्कि नई ज्ञान प्रणालियों के साथ भी आया और इन स्थानों को मात्र वित्तीय राजधानियों से नए सांस्कृतिक केन्द्रों में बदल दिया।

मक्का और मदीना के प्रतिरूपी शहरों की तीर्थयात्रा ने लोगों को लाल सागर में अभिसरण करने को प्रेरित किया, जिससे व्यापार इस क्षेत्र की आर्थिक और सामाजिक आवश्यकता बन गया। इन सभी आर्थिक, भौगोलिक और सामाजिक कारकों ने लाल सागर को ऐतिहासिक महत्व प्रदान किया। यही नही, लाल सागर और फारस की खाड़ी बृहद हिंद महासागरीय और भूमध्यसागरीय व्यापार नेटवर्क का हिस्सा थी। इस प्रकार, अरब नौका संचालन में सिद्धहस्त हो गए। इसके अतिरिक्त, जैसा कि आपने पिछली इकाइयों (**12,13,14,** और **15**)

चित्र 16.1: अल-इदरीसी का विश्व मानचित्र
साभार: लीनाड-जेड कॉमन्सविकी
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Al-Idrisi%27s_world_map.JPG

में देखा होगा ऐतिहासिक रूप से अरब दुनिया में पूर्व और पश्चिम दोनों के तत्व थे। अरब व्यापार पर पुर्तगाली आर्थिक हमले 1415 में मोरक्को के कारवां शहर सेंटा की विजय के साथ शुरू हुए। अरबों ने निर्णायक रूप से 1700 से समुद्री व्यापार पर नियंत्रण खो दिया। आप हमारे पाठ्यक्रम **बीएचआईसी-108** में पुर्तगाली, अंग्रेजी और डच साम्राज्यों के प्रभाव और गतिविधियों के बारे में जानेंगे।

16.3 आंतरिक व्यापार और शहरी केंद्रों का उदय

अरब दुनिया में सातवीं और दसवीं शताब्दी के मध्य सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक क्षेत्र में शहरी केंद्रों का उदय था। के. एन. चौधरी का मानना है कि 'इस्लाम की पहली शताब्दी में उमय्यद और अब्बासिदों द्वारा मुस्लिम विश्व प्रणाली की आर्थिक नींव तीन कारकों पर टिकी हुई थीः स्थाई कृषि, शहरीकरण और लंबी दूरी का व्यापार'। तीनों कारक आपस में जुड़े हुए थे। निरंतर कृषि विकास ने शहरी निवासियों की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा किया, जबकि शहरी केंद्रों में व्यावसायिक गतिविधियों और इसकी आबादी द्वारा विलासिता की वस्तुओं की मांग ने लंबी दूरी के व्यापार को प्रोत्साहित किया। कृषि ने न केवल अरबों के लिए निर्वाह अर्थव्यवस्था की भूमिका निभाई, बल्कि इसका व्यावसायिक महत्व भी था। सतत् कृषि विकास ने हस्तशिल्प उद्योगों के सुचारु विकास को प्रोत्साहन दिया जिसके परिणामस्वरूप अंततः अरब दुनिया की व्यापारिक गतिविधियाँ फली-फुलीं।

अरब व्यापारियों ने एशियाई और यूरोपीय व्यापार के मध्य बिचौलियों की महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और क्षेत्र के शहरों ने एशियाई वस्तुओं के भंडार-गृह के रूप में कार्य किया। इन वस्तुओं का अरब व्यापारियों द्वारा यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों मे निर्यात किया जाता था। शहरी

केंद्रों का विकास या शहरों का उदय सीधे व्यापारिक और वाणिज्यिक गतिविधियों के विकास से जुडा हुआ था। जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं और विलासिता की वस्तुओं के व्यापार ने सभी भौगोलिक और आर्थिक बाधाओं के बावजूद शहरों की उन्नति में योगदान दिया। इस संदर्भ में हम अरब प्रायद्वीप के साथ-साथ ईरान, इराक और सीरिया के शहरों का व्यावसायिक केंद्रों के रूप में उद्‌भव देख सकते हैं। 660 सी ई के बाद दमिश्क के नवीन स्थापित इस्लामिक साम्राज्य की राजधानी बनने से अरब दुनिया की व्यापारिक गतिविधियां सीरिया और इराक में स्थानांतरित हुई। इस बदलते परिवेश ने दोनों देशों में कस्बों और शहरों के विकास को प्रोत्साहित किया। बसरा का उदय इस बदलते परिवेश का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। बसरा, जो इस्लामी दुनिया के प्रमुख शहरों में से एक था, एक महत्वपूर्ण बंदरगाह के रूप में कार्य करता था। यह ईरान और इराक के बीच सामरिक रूप से महत्वपूर्ण व्यापार मार्ग पर भी स्थित था। यह उन प्रारंभिक इस्लामिक शहरों में से एक था जो अरब प्रायद्वीप के बाहर स्थित था। 660 में राजधानी के दमिश्क में स्थानांतरित होने के साथ, बसरा को इस परिवर्तन से लाभ हुआ। खिलाफ़त के विस्तार के साथ, व्यापार को पूरे क्षेत्र में एक गतिशीलता मिली। अरब, ईसाई और फ्रैंकिश यूरोपीय दुनिया के बीच आदान-प्रदान का उनके सामाजिक और तकनीकी जीवन पर प्रभाव पड़ा।

आठवीं शताब्दी के मध्य में इराक़ के सबसे महत्वपूर्ण शहर बग़दाद की नींव के साथ, जो अब्बासिदों की राजधानी बन गई, फारस की खाड़ी में व्यापारिक गतिविधियाँ पुनर्जीवित हुईं। अपनी स्थापना से, दसवीं शताब्दी तक, बग़दाद ने इस्लामी दुनिया के मुख्य वाणिज्यिक केन्द्र के रूप में अपनी स्थिति बनाए रखी। इन तीन शताब्दियों में खुद को एक वाणिज्यिक महानगर के रूप में विकसित करते हुये, बग़दाद का अरब व्यापार पर एकाधिकार था। इस क्षेत्र का एक अन्य महत्वपूर्ण वाणिज्यिक शहर समारा था। समारा की स्थापना 836 सी ई में हुई थी और इसने अब्बासिद **खलीफाओं** की नई राजधानी के रूप में कार्य किया। यह एक तटीय शहर था जो दजला नदी के तट पर स्थित था। लेकिन दसवीं शताब्दीं के मध्य तक, बग़दाद ने अरब व्यापार पर अपना एकाधिकार खोना शुरू कर दिया, और बाद में इस्लामी दुनिया की व्यावसायिक गतिविधियां इराक से मिश्र की ओर स्थानांतरित हो गईं। इस समय काहिरा बगदाद के स्थान पर इस्लामिक दुनिया के वाणिज्य और व्यापार के एक प्रमुख केन्द्र के रूप में उभरा। फारस की खाड़ी के स्थान पर वाणिज्यिक और व्यापारिक महत्व लाल सागर और भूमध्यसागर की ओर प्रतिस्थापित हो गया। इस आर्थिक विकास ने मिस्र के करीमी व्यापारियों के उदय को चिह्नित किया। करीमियों ने अपनी व्यापारिक गतिविधियों को मिस्र से लेकर सीरिया, ईरान और इराक तक बढ़ाया। बन्दरगाह शहरों जैसे बसरा, जेद्दा और उबुल्ला से माल को ऊंटों के कारवां के माध्यम से देश के आंतरिक भागों में ले जाया जाता था।

16.3.1 व्यापार, धर्म और शहरी विकास के मध्य संबंध

क्षेत्र में आर्थिक गतिविधियों के विकास में धर्म की भूमिका अपार थी। इस्लाम के संस्थापक पैगंबर मुहम्मद खुद एक व्यापारिक पृष्ठभूमि से थे। कुरैश कबीला, जिससे वह संबंधित थे, का पूर्व-इस्लामी काल से ही मक्का के व्यापार पर नियंत्रण था। मक्का और मदीना का फलता-फूलता व्यापार मुसलमानों के इन दो शहरों की धार्मिक यात्रा के कर्तव्यों से लाभान्वित हुआ – मक्का मुहम्मद का जन्म स्थान था, और मदीना, जहां उन्होंने *हिजरत* की थी। पहले खलीफ़ा अबू बकर की मृत्यु के बाद खलीफ़ा बने अल-खत्ताब के बेटे उमर ने भूमध्यसागर को लाल सागर से जोडने की कोशिश की। समुद्री यात्रा के लिए सबसे खतरनाक समुद्र होने के बावजूद मुसलमानों में अनिवार्य हज की रस्म के कारण लाल सागर ने अपना महत्व बनाए रखा। मोका या अल-मुख, यमन का एक बंदरगाह शहर, जो लाल सागर के तट पर स्थित है, मक्का के मार्ग में सबसे महत्वपूर्ण स्थलों में से एक था। हिंद महासागर के रास्ते अरब

सागर से जाने वाले हज यात्री कुछ दिनों के लिए वहां रुकते थे। अपने शुरुआती दिनों में, इस बंदरगाह शहर की अर्थव्यवस्था पूरी तरह से हज यात्रियों पर निर्भर थी। दक्षिण और दक्षिण-पूर्व एशियाई तीर्थयात्रियों के लिए, यह मक्का के अंतिम प्रमुख पड़ावों में से एक था। यातायात अनियमित था, लेकिन वास्तव में महत्वपूर्ण था। तीर्थ नगरों के महत्व पर प्रकाश डालते हुए के.एन. चौधरी ने तीर्थ स्थान और एक वाणिज्यिक केन्द्र दोनों के रूप में जेद्दा के महत्व की विशिष्टता को चिन्हित किया है। लाल सागर पर स्थित एक तटीय शहर जेद्दा, अफ्रीकी और भारतीय हज यात्रियों के लिए मक्का का प्रवेश द्वार था। उनका कहना है कि 'प्रत्येक वर्ष मिस्र, ईरान और भारत के जहाजों के आगमन के साथ, स्थानीय और विदेशी व्यापारी दक्षिण पूर्व एशिया और यूरोप की यथेष्ट महत्व की वस्तुएं, दमिट्टा के लिनन, गुजरात में बुने सूती वस्त्र, ईरानी कालीन और अफ्रीका, दक्षिण पूर्व एशिया तथा यूरोप के कई अन्य सामानों के वाणिज्यिक लेन-देन में लग जाते थे'। धार्मिक महत्व रखने वाले अन्य अरब शहरों में नजफ, कर्बला और रबात थे। धर्म और व्यापार के मिश्रण ने 7वीं और 10वीं शताब्दी के मध्य कई शहरों को जन्म दिया।

16.3.2 उत्पादन केंद्रों के रूप में शहरों का विकास

अरब शहर केवल उपभोक्ता शहर ही नही बल्कि उत्पादन केन्द्र भी थे। इस क्षेत्र के समृद्ध व्यापार ने अरब शहरों को दैनिक उपयोग की वस्तुओं के साथ-साथ विलासिता की वस्तुओं का प्राथमिक उत्पादक और आपूर्तिकर्ता बना दिया। अल-मुकद्दसी, एक अरब भूगोलवेत्ता, ने दसवीं शताब्दी में इस्लामिक साम्राज्य के अन्य शहरों के बाजारों में खुरासान और बगदाद के शहरों और कस्बों द्वारा उत्पादित और आपूर्ति की जाने वाली वस्तुओं की एक विस्तृत सूची प्रदान की। निशाबूर शहर विभिन्न प्रकार के वस्त्रों का उत्पादन करता था। मर्व, रेशम द्वारा बनाए गए नकाबों और बुर्कों (veils) का केंद्र था; कोहिस्तान अपने अच्छे खजूरों और गलीचों के लिए प्रसिद्ध था; वल्वालिज अपने अखरोट, तिल के तेल, चने और बादाम के लिए प्रसिद्ध था; बल्ख, ईरान का प्रमुख वाणिज्यिक केंद्र, अपने सूखे अंगूरों, साबुन और खाल के लिए जाना जाता था। समरकंद तांबे के बर्तन और चांदी के रंग के कपड़े का मुख्य निर्यातक था। बगदाद मंहगे शाही कपड़ों का प्रमुख निर्माता था। बुखारा के खरबूजे की विशेष किस्में और मांस उत्पादन अरब दुनिया में बहुत प्रसिद्ध थे। उपरोक्त विवरण अरब शहरों के मात्र उपभोक्ता शहरों के रूप में अस्तित्व के मिथक को नष्ट करता है।

बोध प्रश्न-1

1) व्यापार और वाणिज्य को बढ़ावा देने में इस्लामी शासकों की भूमिका पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) आप इस बात से किस हद तक सहमत हैं कि अरब शहर मुख्य रूप से उपभोक्ता शहर थे ?

.....

.....

.....

.....

.....

3) शहरी केंद्रों के विकास में व्यापार की भूमिका की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

16.4 भारत के साथ अरब व्यापार

भारत और अरब दुनिया के बीच व्यापारिक संबंध नए नहीं हैं। इन दोनों भौगोलिक क्षेत्रों के बीच इस तरह की गतिविधियों के प्रमाण आध्य-ऐतिहासिक समय से स्थापित व्यापार की ओर इशारा करते हैं। पुरातात्विक साक्ष्य प्राचीन विश्व की दो महान् सभ्यताओं, अर्थात सिंधु घाटी सभ्यता और मेसोपोटामिया सभ्यता के बीच व्यापार संबंध को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। सोलोमन के समय से ही, जैसा कि *ओल्ड टेस्टामेन्ट* में वर्णित है, अरब व्यापारी अक्सर मसालों को खरीदने के लिए दक्षिण भारतीय तटीय क्षेत्रों में जाते थे। पान, चंदन और नारियल जैसी कुछ अन्य भारतीय वस्तुएं भी अरब लोगों में बहुत लोकप्रिय थीं। घोड़े, गहने और खजूर उन प्रमुख अरब वस्तुओं में से थे जिनकी भारतीय बाजारों में भारी मांग थी। अरब व्यापारी दक्षिण भारत के पूर्वी और पश्चिमी दोनों घाटों के तटीय क्षेत्र में आकर बस गए थे। इन दोनों क्षेत्रों के बीच पारंपरिक वाणिज्यिक संबंधों को इस तथ्य से समझा जाना चाहिए कि व्यापार में निरंतर वृद्धि को सुविधाजनक बनाने के लिए दक्षिण भारत के पश्चिम तट पर अरब व्यापारियों द्वारा स्थायी बस्तियों का निर्माण किया गया था। पूर्व-इस्लामिक काल में, अरब प्रायद्वीप के दक्षिण-पूर्वी तट पर व्यापार की वस्तु विनिमय प्रणाली का प्रचलन था; जहाँ सीरियाई और मिस्र के सामानों के साथ भारतीय वस्तुओं का आदान-प्रदान होता था।

दूरी और भौगोलिक बाधाओं के मुद्दे के अलावा, स्थल व्यापारियों के लिए सुरक्षा की समस्या भारत के साथ अंतर महाद्वीपीय व्यापार के लिए एक मुद्दा बनी रही। मुख्य रूप से अरब प्रायद्वीप में इस्लाम के उदय के बाद, दोनों क्षेत्रों, भारत और अरब के बीच व्यापार का विस्तार हुआ। पश्चिम एशिया और भारत के बीच पूर्व-इस्लामिक सासानिद व्यापारियों द्वारा समुद्री व्यापार मार्गों पर बनाई गई व्यापारिक संरचनाओं से अरब मुस्लिम व्यापारी लाभान्वित हुए। वे अपनी सामरिक भौगोलिक स्थिति के कारण एशियाई व्यापार पर अपना एकाधिकार स्थापित करने में सफल रहे। भूमध्यसागरीय अर्थव्यवस्था की आर्थिक अस्थिरता, विशेष रूप से रोमन साम्राज्य के पतन के बाद, दक्षिण-पूर्व यूरोपीय और एशियाई बाजारों के बीच मध्यस्थ के रूप में अरब व्यापारियों का महत्व बढ़ा। ईडन की खाड़ी, लाल सागर और फारस की खाड़ी भारत और अरब दुनिया के बीच व्यापारिक गतिविधियों के केंद्र के रूप में उभरे। अलेक्जेंड्रिया बंदरगाह के पुनरूद्धार के कारण हिंद महासागर के साथ भूमध्यसागर का एकीकरण हुआ। इस व्यापार संबंध ने भी इन दोनों क्षेत्रों के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान को सुविधाजनक बनाया। आठवीं से सोलहवीं शताब्दी तक, हिंद महासागरीय व्यापार मार्गों पर अरब और ईरानियों का वर्चस्व था।

मध्य तेरहवीं शताब्दी में बगदाद पर मंगोल हमले ने न केवल अरब दुनिया की राजनीतिक संरचना को प्रभावित किया, बल्कि इस क्षेत्र के वाणिज्यिक लेन-देन को भी अत्यधिक प्रभावित किया। इसने इस क्षेत्र के समुद्री व्यापार के चरित्र को बदल दिया। इस हमले का मुख्य आर्थिक परिणाम भारत और इस्लामी दुनिया के बीच समुद्री व्यापार मार्ग को बदलने में निहित है। हालांकि, इस संकट ने एक अन्य समुद्री व्यापार मार्ग की तलाश करने का अवसर भी पैदा किया। इसने भारत के साथ मिस्र के व्यापार के उदय और मिस्र के व्यापारियों के प्रभुत्व, विशेष रूप से हिंद महासागर के व्यापार पर करीमी व्यापारियों के एक समूह को चिह्नित किया। बगदाद के दो साल के सफल अभियान के ठीक बाद, सितंबर 1260 में अयन जलुत में काहिरा की मामलूक सेना ने मंगोलियाई सेना को बुरी तरह से पराजित कर दिया। मामलूकों के हाथों मंगोलों की इस हार ने पश्चिम की तरफ मंगोलियाई विस्तार को रोक दिया और उत्तरी अफ्रीकी देशों पर मिस्र और इस्लामी प्रभाव को सुरक्षित किया। इस घटना के परिणामस्वरूप काहिरा की स्थिति अंतर्राष्ट्रीय व्यापार केंद्र के रूप में बढ़ गई। एक अन्य अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मार्ग काहिरा के मामलूक शासक द्वारा विकसित किया गया। करीमी व्यापारियों ने काहिरा के शासक वर्ग से संरक्षण प्राप्त करने के बाद, एशियाई और यूरोपीय बाजारों के बीच खुद को बिचौलियों के रूप में स्थापित किया।

करीमी व्यापारियों ने मालाबार क्षेत्र के व्यापारियों के साथ बहुत करीबी संबंध स्थापित किए थे। कन्नूर और कालीकट की उनकी लगातार यात्राओं ने भारत और इस्लामी दुनिया के बीच वाणिज्यिक संबंधों को मजबूत किया। हिंद महासागर और लाल सागर के व्यापारिक मार्गों पर एकाधिकार रखने वाले करीमी व्यापारी कालीकट के स्थानीय शासक **ज़मोरिन** को वित्तीय मदद भी प्रदान कर रहे थे, ताकि उन्हें इस क्षेत्र में वाणिज्यिक और राजनीतिक शक्ति को मजबूत करने में मदद मिल सके। इस वित्तीय सहायता का मकसद इन स्थानीय शक्तियों की मदद से मसाला व्यापार को नियंत्रित करना था। यह भी ध्यान देने योग्य है कि इस समय, दक्षिण भारतीय हिंदू व्यापारियों और अरब मुस्लिम व्यापारियों के बीच सामंजस्य की प्रबल भावना थी। उन्होंने आपस में परस्पर विश्वास और सहयोग का वातावरण विकसित किया। समुद्री डाकुओं द्वारा उत्पन्न कुछ बाधाओं को छोड़कर हिंद महासागर अपेक्षाकृत एक संघर्ष मुक्त क्षेत्र था।

हम सिंध में मुस्लिम शहरों की संस्कृति और आर्थिक वृद्धि में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के योगदान और महत्व को भी अनदेखा नहीं कर सकते। मुहम्मद कासिम के सफल अभियान के बाद बनभोर के प्राचीन जर्जर शहर के नवीनीकरण और मंसूरा, प्रारंभिक आठवीं शताब्दी में सिंध में इस्लामी शासन की राजधानी, के निर्माण को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। बनभोर, जो समुद्र तट पर स्थित था, ने इस क्षेत्र के समुद्री व्यापार की मांग को सुविधाजनक बनाया, जबकि मंसूरा स्थल व्यापार के केंद्र के रूप में विकसित हुआ। इस समय, कुछ महत्वपूर्ण तटीय शहर, केन्या का तटीय शहर मांडा; सिंध में बनभोर; और फारस की खाड़ी के उत्तरी तट पर सिराफ जो तीन बंदरगाहों को नियंत्रित करता था – बंदर-ए कंगन, बंदर-ए तहेरी और बंदर-दायर; ओमान का सुहर; और सिलोन के उत्तरी तट पर स्थित मतई थे। इन बंदरगाह शहरों ने एक समुद्री व्यापार नेटवर्क विकसित किया, जिसका लाभार्थी बनभोर था। बनभोर ने अपने व्यापारिक व्यापार नेटवर्क के माध्यम से सीरिया, इराक, चीन, सीलोन और केन्या के साथ सिंध की विलासिता की वस्तुओं की मांग को पूरा किया। मंगोलियाई शक्ति का उदय और व्यापार मार्गों में मंगोलों द्वारा पैदा की गई रुकावट इन शहरों के पतन का मुख्य कारण साबित हुई।

16.5 चीन और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरब व्यापार

> मध्य दसवीं से पंद्रहवीं शताब्दी तक, हिंद महासागर और दक्षिणी चीन सागर में इस्लामिक व्यापार को तीन खंडों, जिनका आधार अदन और होर्मुज, कैम्बे और कालीकट, और मलक्का और गुआंगज़ाउ थे, पर पुनर्गठित किया गया था। पहले क्षेत्र में, 980 के दशक में पहले से ही अल-मुकद्दसी के समय से, मक्का, जेद्दा, सुहार और बहरीन महत्वपूर्ण व्यापारिक शहर थे, जो स्थानीय उत्पादों और आयातित वस्तुओं दोनों के व्यापार में लिप्त थे। और पंद्रहवीं शताब्दी में दो महान् पूर्वी शहरों भारत में कैम्बे और दक्षिण पूर्व एशिया के मलक्का में वाणिज्यिक जीवन अदन और होर्मुज के एम्पोरिया व्यापार में बदल गया। लाल सागर और फारस की खाड़ी में कई अन्य लघु कस्बे और शहर समान रूप से फले-फूले और समृद्ध हुए।
>
> **(चौधरी, 1996:132)**

जब बग़दाद की स्थापना अब्बासिद ख़लीफा अल-मंसूर (762 सी ई) द्वारा की गई, उससे लगभग आधी शताब्दी पूर्व से अरब नाविक चीन और भारत में समुद्री यात्राएं करते रहे थे। मध्यकाल के अरबी यात्रा साहित्य चीन और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरब व्यापार संबंधों पर व्यापक जानकारी प्रदान करते हैं। शहरों का वर्णन, शहरी आबादी की जीवनशैली और व्यापार मार्गों की व्यापक जानकारी, स्थानीय राजनीति और प्रशासन इस प्रकार साहित्य की मुख्य विषयवस्तु है। *सिंदबाद नाविक की कहानी* (*The Story of Sindbad the Sailor*) शायद इस तरह के साहित्य का सबसे अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करती है। इसने न केवल व्यापारियों की गतिविधियों, समुद्री व्यापार मार्ग का ज्ञान और तटीय समुदायों की आजीविका के तरीकों के बारे में अंतर्दृष्टि प्रदान की, बल्कि समुद्री डाकू और अन्य दुश्मनों के हमलों के खिलाफ रणनीतियों का भी प्रदर्शन किया। सुलेमान अल-ताजिर और अब ज़ईद सिराफी द्वारा रचित प्रारंभिक दसवीं शताब्दी की पुस्तक *सिलसिलत अल-तवारीख,* जिसका अंग्रेजी अनुवाद *एंशियंट अकाउंट ऑफ इंडिया एंड चाइनाः बाय टू मुस्लिम ट्रैवलर्स हू वेंट टु दोज पार्ट्स इन द नाइन्थ सेंचुरी,* यूसबिऊ रेनौदोत (Eusebiu Renaudot) द्वारा किया गया, भारत और चीन के साथ व्यापार करने वाले अरब व्यापारियों का प्रथमदर्शी वृतांत प्रस्तुत करती है। उस समय के अरबी साहित्य की दो अन्य महत्वपूर्ण कृतियां जो अरब मुस्लिम व्यापारियों के बारे में विवरण प्रदान करती हैं, नौवीं शताब्दी में लिखी गई अख़बार *ए-सिन वल-हिंद* और दसवीं शताब्दी की *अजायब अल-हिंद* थे।

16.5.1 चीन के साथ अरब व्यापार

चीन के साथ अरब दुनिया के व्यापारिक संबंधों की उत्पत्ति पुरातन काल से है। सासानिद शासकों की बहुत गहरी व्यापारिक दिलचस्पी चीनी क्षेत्र के साथ थी। जब अरब दुनिया का प्रारंभिक इस्लामिक शासकों के तहत सुदृढ़ीकरण हो रहा था, तब चीन में तांग राजवंश का उदय हो रहा था। तांग वंश की शुरुआत और इस्लाम का उदय लगभग एक साथ हुआ। ईरानी और शुरुआती मुस्लिम अरब व्यापारी ज्यादातर चीन के साथ व्यापार करने के लिए स्थल मार्ग पर निर्भर थे। हालांकि, यह समृद्ध कारवां व्यापार लंबे समय तक जारी नहीं रहा, और आठवीं शताब्दी के अंत तक, तिब्बती कबीलों द्वारा उत्पन्न की गई बाधाओं के कारण इसे लगभग त्याग दिया गया। इस आर्थिक अराजकता ने अन्य तरीकों का पता लगाने के लिए प्रेरित किया और इस प्रकार समुद्री व्यापार को प्रोत्साहन मिला। फारस की खाड़ी में व्यावसायिक गतिविधियों को अब्बासिद शासकों द्वारा पुनर्जीवित किया गया और मध्य आठवीं शताब्दी तक, कैंटन (गुआंगज़ाउ) में मुस्लिम व्यापारियों द्वारा एक मुस्लिम कॉलोनी स्थापित की गई। अब्बासिद खलीफा ने भी दोनों क्षेत्रों के बीच व्यापारिक संबंधों को मजबूत करने के लिए चीन को एक उपहार मिशन भेजा। सोहर (Sohar), मिथकीय पात्र सिंदबाद की जन्मभूमि, साथ ही ओमान की खाड़ी पर स्थित, ओमान के बंदरगाह शहर के रूप में

लोकप्रिय, चीन के प्रवेश द्वार के रूप में जाना जाता था। चौधरी के अनुसार, सोहर से क्विीलोन (Quilon) और क़लाह (Qalah) के माध्यम से कैंटन तक पहुँचने में नब्बे दिन लगते थे। अरब व्यापार की उल्लेखनीय वस्तुओं में से एक चीनी मिट्टी के बर्तन थे।

चित्र 16.2: प्रारंभिक चीन के नीले और सफेद चीनी मिट्टी के बर्तन, लगभग 1335
साभार: मुसी गुइमेट
स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/chinese_influences_on_Islamic_pottery#/media/File: Early_blue_and_white_ware_circa_1335_Jingdezhen.jpg

चीनी में सांग और युआन राजवंशों के शासन के दौरान नौवीं और तेरहवीं शताब्दी के मध्य की अवधि, अरब-चीनी समुद्री व्यापार के लिए स्वर्ण युग थी। हालांकि, जब दक्षिण भारत के चोल राजवंश के सबसे महत्वपूर्ण शासक राजेंद्र चोल ने मध्य और दक्षिणी वियतनाम के तटीय क्षेत्र चंपा पर आक्रमण किया तो इन दोनों क्षेत्रों के बीच व्यापार को ग्यारहवीं शताब्दी के तीसरे और पांचवें दशक के बीच कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इस तथ्य के बावजूद कि चोल साम्राज्य में अरब व्यापारी घोड़ों के मुख्य आपूर्तिकर्ता थे, राजेंद्र चोल ने अरब व्यापारियों को चंपा के माध्यम से चीन के साथ व्यापार करने की अनुमति नहीं दी। इन तीन दशकों के बाद अरब और चीन के मध्य व्यापार फिर से पुनर्जीवित हो गया और गुआंगज़ाउ (Guangzhou) की जगह क्वानज़ाऊ (Quanzhou) मुस्लिम और चीनी व्यापारियों का मिलन बिंदु बन गया। युआन शासन के दौरान, चीन के अधिकांश समुद्री व्यापार को मुस्लिम व्यापारियों द्वारा नियंत्रित किया गया था। इस अवधि के दौरान सरकार और व्यापारियों के बीच एक संयुक्त-उद्यम (joint-venture) प्रणाली स्थापित की गई, और इस उद्यम को युआन सरकार द्वारा बड़े पैमाने पर वित्तपोषित किया गया था।

16.5.2 दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अरब व्यापार

आठवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और ग्यारहवीं शताब्दी में दक्षिण पूर्व एशियाई व्यापार पर मुस्लिम व्यापारियों का वर्चस्व, आंद्रे विंक द्वारा बहुत स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है: 'आठवीं से ग्यारहवीं शताब्दी ने हिंद महासागर में सभी प्रमुख मार्गों पर मुस्लिम वाणिज्य के विस्तार के काल का गठन किया, जो हिंद महासागर को अरब भूमध्यसागर में बदल रहा था'। यह अरब दुनिया और चीन के बीच मुख्य व्यापार मार्ग था। अरब व्यापारियों को कैंटन तक पहुंचने के लिए भारत से होकर मलय क्षेत्र में मलक्का के जलडमरूमध्य पर स्थित क़लाह को पार करना पड़ता था। केरल में स्थित क्विलोन, सीलोन, जावा और सुमात्रा के द्वीपसमूह, मलक्का जलडमरूमध्य पर स्थित समुद्री बंदरगाह और चम्पा जो मध्य और दक्षिणी वियतनाम का तटीय क्षेत्र था अरब और चीन के समुद्री व्यापार मार्गों के बीच महत्वपूर्ण पड़ाव थे। चंपा में बसने वाले मुस्लिम समुदाय ने सांग और यूआन राजवंशों के दौरान चीन और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के बीच एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। दसवीं शताब्दी के एक चीनी रिकॉर्ड में, चम्पा (Champa) और ज़बज (Zabaj; कंबोडिया और जावा के बीच स्थित एक राज्य) से सांग दरबार में अरब व्यापारियों के आगमन का उल्लेख मिलता है। इस प्रकार, यह रिकॉर्ड दक्षिणी भारत, सीलोन, जावा, सुमात्रा, मलक्का और वियतनाम जलडमरूमध्य के माध्यम से अरब दुनिया और चीन के बीच व्यापार मार्ग की एक तस्वीर प्रस्तुत करता है। दक्षिण भारत में चोल साम्राज्य के पतन ने तेरहवीं शताब्दी में सुमात्रा द्वीपसमूह में इस्लामी राज्यों के उदय का अवसर प्रदान किया। इन राज्यों ने खुद को अरब और दक्षिण पूर्व एशियाई समुद्री व्यापार के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में स्थापित किया। लेकिन दक्षिण पूर्व एशिया के द्वीपों को अरब दुनिया में केवल पंद्रहवीं शताब्दी में शामिल किया गया। व्यापारी इस समुद्री रास्ते से अगर (aloeswood), सागौन, चीनी मिट्टी के बर्तन, ब्राज़ीलवुड और मलयाली टिन वापस लाते थे। अपने वतन लौटते वक्त यात्रा पर जहाज भारत से अरब के लिए रवाना होते थे या फारस की खाड़ी पर लौटने से पहले वे अफ्रीका के पूर्वी तट के साथ चक्कर लगाते थे (*हिस्ट्री ऑफ ह्यूमैनिटी*, 2000: 305)।

बोध प्रश्न-2

1) भारत के साथ अरब व्यापार की प्रकृति पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) अरब और चीन के मध्य व्यापार की प्रकृति का परीक्षण कीजिए। इस व्यापार की किसी उल्लेखनीय वस्तु का नाम बताइये।

.....

.....

.....

.....

.....

3) दक्षिण पूर्व एशियाई व्यापार पर मुस्लिम व्यापारियों के प्रभुत्व की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

16.6 सारांश

सातवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में भौगोलिक रूप से महत्वपूर्ण क्षेत्र, *जज़ीरत-उल अरब* में इस्लाम का उदय हुआ। समय के साथ बद्दू होने के तत्वों को इस्लामी पहचान के विरोध में माना जाने लगा। अस्तित्व के शहरी तत्वों ने उनके जीवन में प्रवेश किया। इस शहरी अर्थव्यवस्था में खानाबदोश योगदान को अच्छी तरह से समझने की जरूरत है। अरबों के लिए शहरी केंद्र और कारवां व्यापार नया नहीं था। इस्लाम ने अरब दुनिया को एक सजातीय पहचान और राजनीतिक स्थिरता प्रदान की जिसके परिणामस्वरूप अंततः एशिया और उत्तरी अफ्रीका में समुद्री व्यापार में बड़े पैमाने पर वृद्धि हुई। खलीफाओं की केंद्रीकृत सत्ता ने इस क्षेत्र में शहरी केंद्रों के उदय को प्रोत्साहित किया, जिसने एशिया, उत्तरी और पूर्वी अफ्रीका और पूर्वी यूरोपीय देशों के विभिन्न व्यापारियों के एक संगम स्थल के रूप में कार्य किया। फारस की खाड़ी, ओमान की खाड़ी, अरब सागर और लाल सागर के तटीय क्षेत्रों पर स्थित इन शहरों ने भूमध्यसागर, लाल सागर, अरब सागर और हिंद महासागर से मिलकर एक समुद्री व्यापारिक नेटवर्क विकसित किया। किसानों और खानाबदोशों ने भी इस्लाम की शहरी सफलता में योगदान दिया। अरब जगत के समृद्ध व्यापार ने अरबों के गैर-अरब क्षेत्रों में प्रवास को प्रोत्साहित किया, विशेष रूप से अरब सागर और हिंद महासागर के तटीय क्षेत्रों के किनारे। यह प्रवासी आबादी दक्षिण भारत और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के विभिन्न हिस्सों में बस गई, और इसने न केवल दक्षिण एशियाई क्षेत्र में इस्लामी संस्कृति का प्रसार किया, बल्कि अरब, भारत, चीन और अन्य दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के बीच समुद्री व्यापार के लयबद्ध विकास की एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में काम किया।

16.7 शब्दावली

खलीफा : इस्लामी दुनिया में धार्मिक और राजनीतिक प्रमुख। पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु के बाद अबु बकर पहले खलीफा बने।

जज़ीरत-उल अरब : *जज़ीरत-उल अरब* में निम्नलिखित आधुनिक क्षेत्र शामिल हैं : यमन, ओमान, कतर, बहरीन, कुवैत, सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात और जॉर्डन और इराक के कुछ हिस्से

ज़मोरिन : कालीकट का स्थानीय शासक

16.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 16.2 देखें

2) भाग 16.3 देखें

3) भाग 16.3, विशेषकर उप-भाग 16.3.1 और 16.3.2 दोनों देखें

बोध प्रश्न-2

1) भाग 16.4 देखें

2) भाग 16.5.1 देखें

3) भाग 16.5.2 देखें

16.9 संदर्भ ग्रंथ

अल-सुवैदी, अहमद, (1993) 'काउंटर ट्रेड एंड द अरब वर्ल्डः ए कंपैरेटिव व्यू', *अरब लॉ,* Q. 8(4): 273.287.

चौधरी, के. एन., (1985) *ट्रेड एंड सिविलाइज़ेशन इन द इंडियन ओशियनः एन इकनोमिक हिस्ट्री फ्रॉम द राइज ऑफ इस्लाम टू 1750* (कैंब्रिजः कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

चौधरी, के.एन., (1996) 'द इकोनॉमी इन मुस्लिम सोसाइटीज़', फ्रांसिस रॉबिंसन (स). *द कैंब्रिज इलस्ट्रेटेड हिस्ट्री ऑफ द इस्लामिक वर्ल्ड* (कैंब्रिजः कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस).

क्रोन पेट्रिशिया, (2004) *मेक्कन ट्रेड एंड द राइज़ ऑफ इस्लाम* (एडिनबर्गः जॉर्जियास प्रेस).

कोवाल्स्का, मारिया, (1987-88) 'फ्राम फैक्ट्स टू लिटरेरी फिक्शनः मिडिवल अरेबिक ट्रैवल लिटरेचर', *क्वाडर्नि डी स्टुदी अरबी,* भाग 5.6: 397-403.

हिस्ट्री ऑफ हयूमैनिटीः साइंटिफिक एंड कल्चरल डेवलपमेंट, अल-बखित, एम. ए., बज़िन, एल. और सिस्सोको, एस. एम., (सं.) (2000) *खंड* IV: *फ्रॉम द सेवेंथ टू द सिक्सटींथ सेंचुरी* (यूनेस्कोः रुटलेज).

मालेकंदाथिल, पायस, (2007) 'विड्स ऑफ चेंज एंड लिंक्स ऑफ कंटीन्यूटीः ए स्टडी ऑन केरल मर्चेंट ग्रुप्स ऑफ़ केरला एंड द चैनल्स ऑफ देयर ट्रेड, ए.डी. 1000-1800', *जर्नल ऑफ द इकोनॉमिक एंड सोशल हिस्ट्री ऑफ द ओरिएंट,* भाग 50(2): 226.

मुंहाल, मुहम्मद रफीक, (1992) 'अर्ली मुस्लिम सिटीज इन सिंध एंड पैटर्न्स ऑफ़ इंटरनेशनल ट्रेड, *इस्लामिक स्टडीज़,* भाग 31(2): 267-286.

शात्ज़मिलर, माया (2011) 'इकोनॉमिक परफॉर्मेंस एंड इकोनोमिक ग्रोथ इन द अर्ली इस्लामिक वर्ल्ड', *जर्नल ऑफ द इकोनोमिक एंड सोशल हिस्ट्री ऑफ द ओरिएंट,* भाग 54: 132-184.

उम, नैंसी, (2003) 'स्पेशियल नेगोसिएशंस इन ए कमर्शियल सिटीः द रेड सी पोर्ट ऑफ़ मोचा, यमन, ड्यूरिंग द फर्स्ट हाफ ऑफ द ऐटीन्थ सेंचुरी', *जर्नल ऑफ द सोसाइटी ऑफ आर्किटेक्चरल हिस्टोरियंस,* भाग 62 (2): 178-193.

16.10 शैक्षणिक वीडियो

द हज। नेशनल ज्योग्राफिक

https://video.nationalgeographic.com/video/00000144-0a40-d3cb-a96c-7b4dd49c0000

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

NOTE

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

NOTE

QR Code-website ignou.ac.in

QR Code-e Content-App

QR Code - IGNOU-Facebook (@OfficialPageIGNOU)

QR Code Twitter Handel (@OfficialIGNOU)

INSTAGRAM (Official Page IGNOU)

QR Code -e Gyankosh-site

IGNOU SOCIAL MEDIA

QR Code generated for quick access by Students

IGNOU website

eGyankosh

e-Content APP

Facebook (@offical Page IGNOU)

Twitter (@ Offical IGNOU)

Instagram (official page ignou)

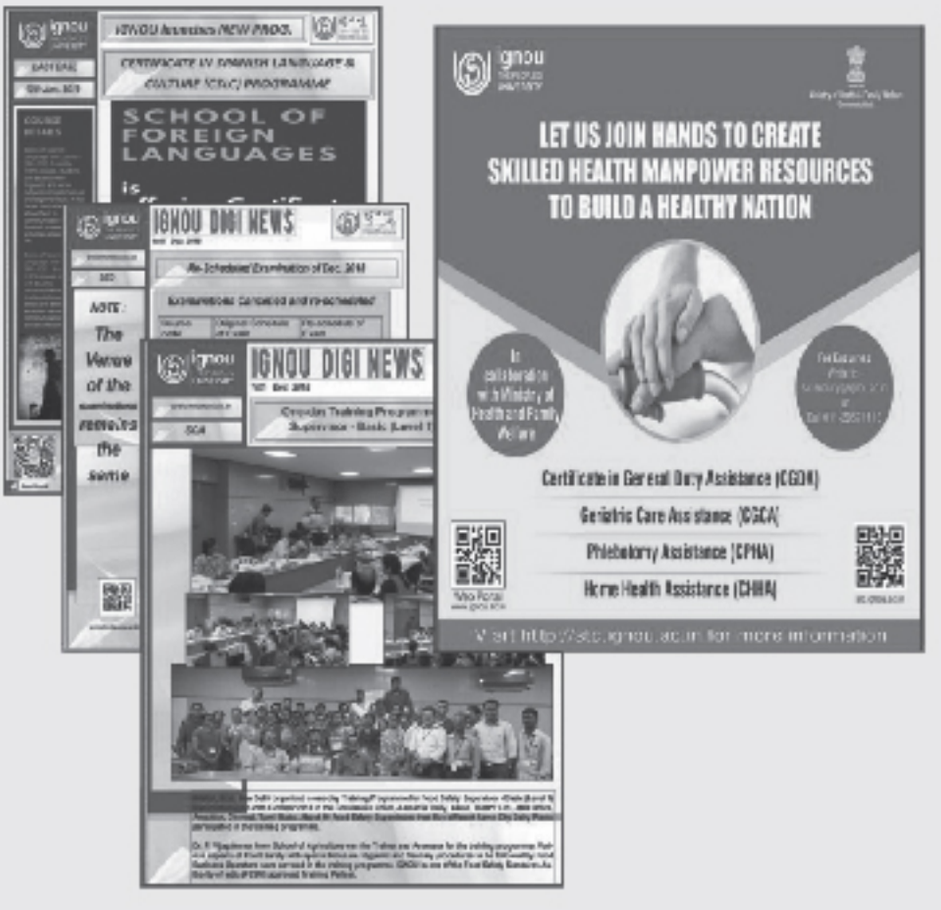

Like us, follow-us on the University Facebook Page, Twitter Handle and Instagram

To get regular updates on Placement Drives, Admissions, Examinations etc.

MPDD/IGNOU/P.O. 8.0K/ October, 2020

ISBN: 978-93-90496-04-4